CULTURAL DATA IN THE KURMA PURANA

कूर्म पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन

डी० फिल० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

2002

शोध पर्यवेक्षक

डॉ० हरिनारायण दुबे

रीडर

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

शोधकर्ता

लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

CULTURAL DATA IN THE KURMA PURANA

कूर्म पुराण का सांस्कृतिक अध्ययन

डी० फिल० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

पर्यवेक्षक
डॉ० हरिनारायण दुबे
प्राचीन इतिहास, सस्कृति
एव पुरातत्व विभाग,

शोधकर्ता
लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी
प्राचीन इतिहास, सस्कृति
एव पुरातत्व विभाग,
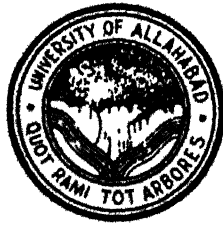
प्राचीन इतिहास, संस्कृति, एवं पुरातत्व विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद ।
2002

प्राक्कथन

पुराण भारतीय वाङ् मय की निधि है। धार्मिक सस्कृति सभ्यता की रक्षा करते हुए जन–जन तक प्रचारित करने का श्रेय इन्ही पुराणो को दिया गया है। यदि पुराणो को भारतीय धर्म और दर्शन का विश्व कोश कहा जाय तो इनमे कोई अतिश्योक्ति नही होगी। वेदो की व्याख्या के लिए पुराणो का अध्ययन आवश्यक है। क्योकि जो व्यक्ति इतिहास और पुराण से अपरिचित है वह वेद के मूल अभिप्राय की व्याख्या नही कर सकते, इसलिए पुराणो का ज्ञान आवश्यक है ।

भारत की भौगोलिक, सामाजिक आर्थिक एव धार्मिक अवस्थाओ की जानकारी के लिए पुराण समृद्ध भण्डार है। प्राचीन भारत के परम्परागत वशानुचरित एव सृष्टि इत्यादि का पर्याप्त उल्लेख मिलता है, तथा धार्मिक जीवन की महत्ता का उल्लेख विशेष रुप से प्रतिपादित किया गया है। कूर्मपुराण मे अठारह उपपुराणो, देवी–देवताओ, ऋषियो एव रुद्रो की उत्पत्ति तथा मनु, पृथु, विरोचन, कश्यप, इत्यादि के वशजो का उल्लेख किया गया है, तीर्थो के सम्बन्ध मे भी महत्वपूर्ण जानकारियॅा इन्ही पुराणो से भी मिलती है। इस शोध विषय का चयन पुराणों की इसी महत्ता को दृष्टि मे रखकर किया गया है। चूॅकि पुराण भारतीय जीवन पद्धति के अभिन्न अग बन चुके है अत उनका अनुशीलन न केवल समाजिक सन्दर्भो में अभीष्ट है अपितु धार्मिक एवं अध्यात्मिक जीवन में पुराण दिशा निर्देश करते है। सभी पुराणो में कूर्म पुराण महत्वपूर्ण पुराण इसलिए भी है क्योंकि कूर्म विश्वरुप विराट पुरुष के अवतारों मे एक है। कूर्मपुराण के अध्ययन के अन्तर्गत अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से विभिन्न अध्यायो के अन्तर्गत विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय मे पुराण वाङ्मय एव उनकी प्राचीनता तथा लक्षण, द्वितीय अध्याय में कूर्मपुराण का काल निर्धारण तृतीय अध्याय मे कूर्मपुराण में उल्लिखित भौगोलिक विवरण चतुर्थ अध्याय मे कूर्म मे उल्लिखित वशानुचरित का उल्लेख किया गया है पंचम अध्याय इसमें कूर्मपुराण की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति,

छठवे अध्याय मे धार्मिक–जीवन के अर्न्तगत दान व्रत, तीर्थएव श्राद्ध विषयक उल्लेख किया गया है, सातवा अध्याय उपसहार के रूप मे है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का लेखन सर्वभारतीय काशिराजन्यास, दुर्ग रामनगर, वाराणसी से वर्ष 1972 ई० मे प्रकाशित 'कूर्म पुराण' को आधार मानकर किया गया है।

कूर्मपुराण के इस सास्कृतिक अध्ययन को विद्वानो के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे परम हर्ष हो रहा है, कि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध कार्य करने के लिए मूलरुप से प्रेरणाश्रोत परम आदरणीय श्रद्धेय प्रो० विद्याधर मिश्र जी पूर्व विभागाध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, सस्कृति एव पुरातत्व विभाग का मै विशेषरुप से आभार व्यक्त करता हूँ। तदुपरान्त प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की सरचना के मूल प्रेरणा मे पूज्यनीय श्रद्धेय गुरुवर डॉ० हरिनारायण दुबे जी के प्रति अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके मार्गदर्शन एव सानिध्य से यह शोध कार्य सम्पन्न हो सका। प्रस्तुत विषय पर अनुसधान करने और इस शोध प्रबन्ध को लिखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। डॉ० दुबे जी की कृपा से यथोचित मार्ग दर्शन के कारण इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करना सम्भव हो सका है। अत मै पुन उनके प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ, साथ ही मै गुरुपत्नी श्रीमती मिथिलेश दुबे का भी आभारी हूँ, जिनका स्नेह तथा आर्शिवाद मेरे साथ रहा है।

इस शोध कार्य में समय–समय पर मार्ग दर्शन करने वाले डॉ० जे० एन० पाल प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद एव डॉ० विमल चन्द्र शुक्ल उपाचार्य यूइग क्रिश्चिन कालेज इलाहाबाद के प्रति मै हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ।

इस कार्य में विभाग के वर्तमान एव अवकाश प्राप्त समस्त गुरूजनों का मेरे प्रति आदर एवं स्नेह रहा, सबके प्रति मै श्रद्धावनत हूँ। परम श्रद्धेय प्रो० जी० सी० पाण्डेय, प्रो० जे० एस० नेगी, प्रो० बी० एन० एस० यादव, प्रो० राधाकान्त वर्मा, प्रो० वी० सी० श्रीवास्तव, प्रो० यू० एन० राय, प्रो० एस० एन० राय, प्रो० एस० सी० भट्टाचार्य, प्रो० आर० के० द्विवेदी, प्रो० गीता देवी एवं डॉ बी० बी० मिश्रा के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा पुनीत कर्तव्य है।

प्राचीन इतिहास सस्कृति एव पुरातत्व विभाग के सम्प्रति विभागाध्यक्ष प्रो० ओम प्रकाश के अमूल्य सुझावो एव उत्साहवर्धक मार्गदर्शन के लिए मै कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। विभाग के अन्य गुरूजनो डॉ० आर० पी० त्रिपाठी, डॉ० जी० के० राय, डॉ० जे० एन० पाण्डेय, डॉ० रजना बाजपेई, श्री ओमप्रकाश श्रीवास्तव, डॉ० डी० के० शुक्ला, डॉ० उमेश चन्द्र चट्टोपाध्याय, डा० ए० पी० ओझा, डॉ० पुष्पा तिवारी, डॉ० अनामिका राय, डा० सी० डी० पाण्डेय, डॉ० डी० पी० दुबे डॉ० हर्ष कुमार, डॉ० शशिकान्त राय, डॉ० प्रकाश सिन्हा, डॉ० सुधा कुमार, डॉ० सुनीति पाण्डेय, डॉ० सुशील त्रिवेदी, एव डॉ० मानिक चन्द्र गुप्ता के प्रति मै उनकी प्रेरणा एव शोधपरक सुझावो के लिए आभारी हूँ ।
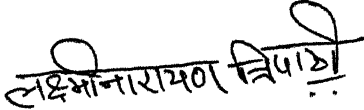
मै अपने शुभचिन्तको के प्रति आभारी हूँ, जिनके सहयोग, स्नेह प्रेरणा और प्रोत्साहन से प्रस्तुत शोधकार्य सम्पन्न हो सका । मै उन सभी विद्वानो एव इतिहाकारो का विशेष आभारी हूँ। जिनके उद्धरण से प्रस्तुत शोध ग्रन्थ की रचना सहायक एव उपयोग सिद्ध हुए है । मैने अपने शोधकार्य के लिए विभिन्न पुस्तकालयो, बी० एच० यू० केन्द्रीय पुस्तकालय, प्राचीन इतिहास, सस्कृत एव पुरातत्व विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय (लाइब्रेरी), जनरल लाइब्रेरी आदि से सहायता ली है। इसके लिए मै उपरोक्त सस्थानो के अध्यक्षो एव कर्मचारियो के प्रति आभारी हूँ, साथ ही कुलसचिव कार्यालय एव विशेष रुप से मै लेखा विभाग के समस्त कर्मचारियो का आभार व्यक्त करता हूँ जिनके प्रयत्क्ष एव अप्रत्यक्ष रूप के सहयोग से मै इस शोध कार्य को सम्पन्न कर सका।

मैं अपने स्वर्गीय पूज्य दादा जी श्री शिवधारी त्रिपाठी एव दादी जी स्व० श्रीमती राम दुलारी, स्वर्गीय पूज्य चाचा जी श्री रामआसरे त्रिपाठी, एव स्वर्गीय (बडे भाई) श्री शिवयत्न प्रसाद त्रिपाठी, एव मैं अपने पूज्य पिताजी स्वर्गीय श्री रामनिहोरे त्रिपाठी, जो अपने एकलौते पुत्र की उच्च्य शिक्षा उपाधि की उत्सुकता लिए 7-4-2002 को स्वर्गवासी हो गये, इस प्रकार उन समस्त उपरोक्त पितरो को इस शोध प्रबन्ध को समर्पित करते हुए, उनके आर्शीवाद का अकांक्षी हूँ, तथा अपनी पूज्यनीया माताजी श्रीमती शिवादेवी, एवं भाभी श्रीमती ऊषा त्रिपाठी, श्री भोला प्रसाद ओझा एव बहन श्रीमती सरस्वती ओझा के आर्शीवाद का आकाक्षी हूँ। मै पितातुल्य प्रो० माताम्बर तिवारी जी का विशेष रुप से आभारी हूँ जिनके समय–समय पर मार्ग

दर्शन, उत्साहवर्धन, सर्वविधि सहयोग एव सत्परामर्श से यह मेरा शोध प्रबन्ध लेखन कार्य, इतनी निर्विघ्नता से पूर्ण हो सका है। इस कार्य को पूरा करने मे मेरी पत्नी श्रीमती रेखा त्रिपाठी का निरन्तर सहयोग विशेष महत्वपूर्ण है साथ ही मै वर्तिका ओझा एव वरूण ओझा एव मै अपने बच्चो अशीष, अनिमेष, एव प्रतीक त्रिपाठी को धन्यवाद देता हूँ जिन्होने इस कार्य को पूर्ण करने मे अपना सहयोग प्रदान किया। मै अपने भतीजो डॉ० राजेन्द्र त्रिपाठी, डॉ० राजीव त्रिपाठी, डॉ० अशोक त्रिपाठी एव क्रमश उनकी पत्नी डॉ० विजया त्रिपाठी, श्रीमती सुषमा त्रिपाठी, तथा श्रीमती निशी त्रिपाठी को धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। जिन्होने इस शोध कार्य मे विशेष सहयोग प्रदान किया है।

मै अपने शुभचिन्तको का अभारी हूँ जिनके सहयोग, स्नेह, प्रेरणा एव प्रोत्साहन से प्रस्तुत शोध कार्य सम्पन्न हो सका। मै अपने सहयोगी मित्रो मे श्री राम नयन त्रिपाठी (रामायणी जी), श्री ए० पी० त्रिपाठी, श्री ओ० पी० सिह, श्री अरूण कुमार मिश्र, श्री सन्तोष मिश्र, लाल चन्द्र पाण्डेय, श्री जी० डी० जोशी इत्यादि अन्य मित्रो के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ ।

श्री सतीश चन्द्र केशरवानी ने जिस निष्ठा एव लगन के साथ यथा सभव त्रुटि रहित इस शोध प्रबन्ध को टकित किया है, इसके लिए मैं उनको धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी

दिनाक 16 दिसम्बर 2002

लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी
शोधकर्ता
प्राचीन इतिहास सस्कृत एव पुरातत्व
विभाग इलाहाबाद, विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

विषय सूची

प्रथम अध्याय

पुराणवाङ्.मय एवं कूर्म पुराण

पुराण वाड.मय एवं कूर्म पुराण

भारतीय सस्कृत वाड मय मे पुराणो का विशिष्ट स्थान है। उन्हे भारतीय सस्कृति एव जीवन आधार का कहा जाता है, जिस पर आधुनिक भारतीय समाज की अनेक परम्पराये प्रतिष्ठित है। दुस्साह्य एव जटिल कर्मकाण्ड प्रधान वैदिक आख्यानो को लौकिक शास्त्र मे परिणात कर पौराणिक आचार सहिता का निबन्धन किया गया है समय परिवर्तन के साथ–साथ तथा युगीन प्रभावो के आलोक पुराणो ने भी अपने कलेवर को अनेक कालो मे सयोजित किया है। इसलिए तत्रवार्तिक[1] वेद को अकृत्रिम एव पुराणो को कृत्रिम बतलाया है। यास्क के निरुक्त [2] मे भी पुराण शब्द की वेद व्युत्पत्ति है –''पुरा नव भवति'' तथा जो प्राचीन होकर भी नया होता है ।

वैदिक उपवृहण की इस प्रक्रिया मे उन अनेक प्रचलित आख्यानो का भी समावेश किया गया है, जो वेद सहिता मे उपलब्ध नही होते तथापि सास्कृतिक दृष्ट से महत्वपूर्ण होने के कारण पुराण सहिता मे उनका समावेश किया गया है। इस सदर्भ मे सिद्धेश्वरी नारायण राय का यह मत उचित प्रतीत होता है कि पुराण शब्द का तात्पर्य इसके मौलिक अर्थ आख्यान से भिन्न नहीं है[3]। मत्स्य पुराण[4] में पुराण के लिए 'शत्कोटिप्रविस्तरम्' शब्द उल्लिखित है। आर्चाय बलदेव उपाध्याय[5] के अनुसार यह शब्द किसी निश्चित रूप का सकेत न होकर पुराण के अनिश्चित तथा विप्रकीर्ण रूप का द्योतक माना जा सकता है। पुराण के स्वरूप के विषय एक अन्य परम्परा दृष्टिगोचर होती है जिसके अनुसार कल्पान्तर में पुराण एक ही था । इस परम्परा को स्कन्ध पुराण[6] तथा पद्म पुराण[7] मे प्राप्त उल्लेखो से भी समर्थ प्राप्त होता है जिसमे पुराण शब्द का प्रयोग एक वचन मे किया गया है । सिद्धेश्वरी नारायण के अनुसार जिस सहिताकरण की शैली वैदिको ने वेद संचरण का विषय बनाया उसी विशेष शैली परिवर्तित परिस्थितियो मे पुराणो मे भी अपनाया । आर० सी० हाजरा[8] भी मूल पुराण संहिता से असहमत है ।

उपर्युक्त समीक्षा से स्पष्ट हो जाता है कि पुराणो ने प्रारम्भ से ही सहिताकरण की शैली को अपनाया । यही धारा अवान्तर मे अष्टादश पुराणो के रूप मे परिलक्षित हुई । पुराणो की श्लोक सख्या को लेकर भी दो मत प्रचलित है प्रथम के अनुसार चतु सहस्रात्मक पुराण सहिता का विपुलीकरण चतुर्लक्षात्मक अष्टादश पुराणो के रूप मे हुआ तथा द्वितीय मत के अनुसार देव लोक मे विद्यमान शत्कोटि श्लोकात्मक पुराण का सक्षिप्त रूप चतुर्लक्षात्मक अठारह पुराणो के रूप मे किया है । तथ्य कुछ भी दोनो ही मतो से यह स्पष्ट पुराण अवस्था का अवसान कृष्णद्वैपायन व्यास 'पुराणसहिता' के पण्यन से निश्चित रूप से हो गया था । ऋृग्वेद[9] मे अनेक मन्त्रो मे पुराण शब्द का अर्थ केवल प्राचीनता के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है । अथर्ववेद[10] मे पुराण शब्द का उल्लेख इतिहास, गाथा तथा नाराशसी के साथ देखने को मिलता है । आचार्य बलदेव उपाध्याय[11] के अनुसार इन शब्दो से वैदिक साहित्य से पृथक किसी लौकिक साहित्य की सत्ता का सकेत मिलता है । वैदिक युग मे साहित्य की प्रवाहमान दो धाराये प्रतीत होती है । एक तो विशुद्ध धार्मिक जिसमे किसी देवता की अस्तुति तथा प्रार्थना की गयी है तथा दूसरी विशुद्ध लौकिक है । जिसमे प्रसिद्ध व्यक्तियो तथा लोक प्रसिद्व वृत्तो का वर्णन किया गया है । अथर्ववेद[12] मे प्रयुक्त 'पुराणवित्' शब्द के प्रयोग से भी यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज मे पुराणो के वृतान्त जानने वाले व्यक्तियो का अस्तित्व अवश्यमेव था । गोपथ ब्राह्मण[13] मे पुराणो के निर्माण की बात वेद, कल्प, रहस्य, ब्राम्हण उपनिषद, इतिहास के साथ कही गयी है। अन्यत्र मत्र मे गोपथ ब्राह्मण पाच वेदो का उल्लेख करता है । सर्पवेद, पिशाचवेद, असुरवेद, इतिहासवेद, एव पुराणवेद। इसके अनुसार उत्तर दिशा से इतिहासवेद तथा ध्रुवा और उर्ध्वा से पुराण का निर्माण हुआ । इस प्रकार इतिहास एवं पुराण दोनो का ही स्वतत्र एव पृथक अस्तित्व की ओर सकेत करता है । शत्पथ ब्राह्मण[14] में कुछ स्थानो पर 'इतिहासपुराण' समस्त पद के रूप मे उल्लखित है तथा अन्यत्र इतिहास तथ पुराण मे पृथकत्व भी दृष्टिगोचर होता है । शत्पथ ब्राम्हण[15] के अधार पर यह सभवना व्यक्त की जा सकती है कि प्रारम्भ मे इतिहास एव पुराण मे विशेष संबन्ध नहीं था। बलदेव उपाध्याय[16] के अनुसार पुराणानि से तात्पर्य पुराणगत आख्यानो के बहुत्व से है न कि ग्रन्थों के बहुत्व से ।

छान्दोग्य उपनिषद[17] मे इतिहास पुराण की गणना अधीप तथा अभ्यस्त शास्त्रो मे की गयी है। इसी उपनिषद के अन्यत्र मत्र मे इतिहास पुराण (पचमवेद) के रूप मे उल्लिखित है। प्रतीत होता है कि उक्त काल मे मौखिक रूप से प्रचलित पुराण ग्रन्थ रूप मे आकार ग्रहण करने लगे थे । इसके अतिरिक्त पुराणो को वेद के समान मान्यता प्राप्त हो चुकी थी। गौतम धर्मसूत्र[18] मे न्याय प्रक्रिया मे निर्णय एव प्रामणिकता के लिए वेद, व्यवहार शास्त्र, तथा वेदाग के साथ साथ पुराण को भी उपयोगी बताया गया है । यज्ञावल्क स्मृति[19] मे भी न्यायिक कार्यो के सम्पादन मे पुराणो की उपादेयता को स्वीकार किया गया है । आपस्तम्ब धर्मसूत्र[20] किसी पुराण के दो श्लोक उद्धृत किये गये है, किन्तु उनके स्रोत के विषय मे ग्रथकार मौन है । आपस्तम्ब धर्मसूत्र[21] मे उद्धृत श्लोक, ब्राहम्ड पुराण[22], विष्णु[23] तथा मत्स्य पुराणो[24] से नितान्त साभ्य रखते है। धर्मसूत्रो[25] के प्रणयन काल की तिथि चौथी अथवा पॉचवी शताब्दी ईसापूर्व मानी जाती है । आचार्य बलदेव उपाध्याय[26] आपस्तम्ब धर्मसूत्र की प्राचीनता पॉचवी अथवा छठी शताब्दी ईसापूर्व तक मानते है । सिद्धेश्वरी नारायण राय के मतानुसार यदि धर्मसूत्रो के काल को पुराण सकलन का कार्य मान लिया जाय तो उनके सरचना तथा सकलन का प्रथम स्तर ईसापूर्व पाचवी शताब्दी तक अवश्य आकार ग्रहण कर चुका था । आर० सी० हाजरा[27] के मतानुसार आपस्तम्ब धर्मसूत्र के रचना काल के पूर्व ही एक से अधिक पुराणो की प्रक्रिया आरम्भ हो चुकी थी । महाभारत[28] के अनुशासन पर्व मे पुराणो के वर्णन को यथार्थ तथा प्रमाणिक बताया है । महाभारत[29] में ही आदि पर्व मे उल्लिखित श्लोक के आधार पर आर्चाय उपाध्याय के निष्कर्षानुसार देव सम्बन्धी आख्यान तथा वशानुचरित पुराणो के अभिभाज्य अग माने गये हैं । महाभारत[30] का अन्तिम सपादन ईसा की चतुर्थ शती के पूर्व हो चुका था । इस प्रकार पुराण साहित्य रचना की प्राचीनता उक्त तिथि के पहले निर्धारित की जा सकती है ।

धार्मिक स्मृतियो में पुराण को विशेष महत्व प्रदान किया गया है । गौतम धर्मसूत्र[31] में बहुश्रुति के सिद्ध के लिए पुराण का ज्ञान आवश्यक बताया गया है। स्मृति काल मे पुराण को वेद के समान ही पवित्र समझा जाने लगा था । मनुस्मृति[32] स्पष्ट कहा गया है कि पितृकर्म

श्राद्ध के अवसर पर निमत्रित ब्राहम्णो को यजमान वेद, धर्मशास्त्र, आख्यान, इतिहास पुराण सुनाये ।

सस्कृति के महान गद्य कवि बाणभट्ट सातवी शती द्वारा रचित कदाम्बरी तथा हर्षचरित मे पुराणो का उल्लेख विशेष रूप से प्राप्त होता है। कदाम्बरी मे एक स्थान पर 'पुराणेषु वायुप्रलपितम्' का उधरण मिलता है। इसी प्रकार हर्षचरित मे भी 'पवमान्प्रोक्त पुराण पाठ' एव 'पुराणामिद' उल्लेख पुराणो की लोकप्रियता विशेषकर वायु पुराण की प्रसिद्ध का परिचायक है। आधुनिक शबरस्वामी, कुमारिल, शकराचार्य तथा विश्वरूप आदि पुराणो से उद्धरण देकर अपने विचारो की सपुष्टि करते है।

उपर्युक्त समीक्षा के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वैदिक कालीन पुराणो की मौखिक परम्परा का ग्रन्थ रूप मे परिणत होने के सकेत उपनिषद काल मे ही प्राप्त होने लगे थे जिनके पुराणो की गणना अधीत् शास्त्रो मे की गयी है । जबकि धर्मसूत्रो मे पुराणो को स्पष्ट रूप से स्वाध्याय तथा पठन–पाठन का विषय स्वीकार कर उन्हे ग्रथो की श्रेणी मे लाकर खडा कर दिया । अवान्तर काल मे पुराणो को वेदो के समकक्ष मान्यता प्रदान की जाने लगी तथा पुराणो की गणना पवित्र ग्रथो मे की जाने लगी ।

पुराण लक्षणः पञ्चलक्षण

कूर्मपुराण[33] मे भी पुराणो की पञ्चलक्षाणत्मक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है। अमरकोश[34] मे पुराणों के लिए पञ्चलक्षण शब्द का प्रयोग व्याख्याविहीन पारिभाषिक शब्द के रूप में किया गया है । इसके अतिरिक्त अधिकतर पुराणो मे भी पुराणो की पञ्चलक्षणात्मक व्याख्या प्रस्तुत की गयी है । पुराण अपने प्रारम्भिक चरण मे गाथा के अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है। इससे प्रतीत होता है कि तत्कालीन पुराण परम्परा का कोई विशेष लक्षण निर्धारित नही था संभवत इसी कारण अर्थववेद मे पुराण शब्द इतिहास, गाथा तथा नाराशंसी शब्दो के प्रयुक्त मिलता है। आचार्य बलदेव उपाध्याय[35] का कथन है कि इनका सम्बध वैदिक साहित्य से पृथक भूति विशुद्ध लौकिक धारा से था जिसमे लोक मे प्रख्याति पाने वाले महनीय व्यक्तियो का तथा लोक प्रसिद्ध वृत्त का वर्णन करना ही अभीष्ट तात्पर्य होता था । गोपथ ब्राह्मण[36] मे इतिहास पुराण पृथक वेद के रूप मे उल्लिखित है इस आधार पर यह सभवना व्यक्त की जा

सकती है कि पुराणो मे कतिपय विशेष लक्षणो को स्थान दिया जाने लगा, जिसके फलस्वरूप ही यदा कदा इतिहास पुराण परस्पर पृथक तथा स्वतत्र रूप मे उल्लिखित किये जाने लगे । पद्म[36] तथा मत्स्य [37] आदि पुराणो मे पुराण त्रिवर्ग साधान के रूप मे उल्लिखित है । कूर्मपुराण, विष्णु[38], वायु[39] तथा ब्राह्माण पुराणो के वर्णनानुसार महार्षि व्यास ने आख्यान, उपख्यान गाथा तथा कल्पशुद्धि इन विषयो का आश्रय लेकर पुराण सहिता का निर्माण किया। चूँकि आख्यान का क्षेत्र इतना व्यापक था, अतएव इनमे इतिहास, गाथा, तथा नाराशसी आदि को समाहित कर लिया गया। हरिनारायण दुबे[40] के अनुसार पारस्परिक एकरूपता के कारण ही उत्तर वैदिक ग्रथो तथा सूत्रग्रथो मे इतिहास पुराण एक साथ प्रयुक्त हुए । अथर्ववेद[41] तथा शत्पथ ब्राहम्ण[42] पुराण मे इतिहास का अर्न्तभाव कर लिया गया ।

मनुस्मृति[44] मे पितृकर्म श्राद्ध के अवसर पर वेद के साथ ही पुराण के श्रवण का विधान बताया गया है । याज्ञवल्क्य स्मृति[45] मे धर्म को स्वाधार पर रखने वाली विद्याओ मे भी पुराणो की गणना की गयी है । इस प्रकार स्मृति काल से (ईसा पूर्व द्वितीय शती से) पुराणो को धार्मिक कार्यो मे विशेष महत्व दिया जाने लगा, जिसके परिणाम स्वरूप पुराणो को पञ्चलक्षणात्मक स्वरूप प्रदान किया गया। सर्वप्रथम अमरकोश पुराणो के लिए पञ्चलक्षण शब्द का प्रयोग किया गया। अमरकोश का रचनाकाल ईसा के लगभग चौथी तथा पाचवी शती माना गया है। अमरकोश मे पुराणो के लिए पञ्चलक्षण शब्द के व्याख्याविहीन प्रयोग से स्वत यह अनुमानित होता है कि उस काल तक पञ्चलक्षणो युक्त पुराण अत्याधिक लोकप्रिय हो चुके थे। कूर्मपुराण सहित अन्य पुराणो[46] मे पञ्चलक्षणो को निम्न श्लोक के कारण निदृष्ट किया गया है।

"सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वशो मन्वन्तराणि च ।

वंशानुचरित चेति पुराण पञ्चलक्षणं ।।"

पार्जिटर[47] ने पञ्चलक्षणो को प्राचीनतम् विषय माना है । किर्फेल[48] आदि विद्धानो ने इन्हे पुराणो का मूल वर्ण्य–विषय स्वीकार किया है । उक्त दोनो ही मत असगत प्रतीत होते हैं। पुराणो की निर्माण प्रक्रिया पर दृष्टिपात किया जाय तो पञ्चलक्षण न तो पुराणो के प्रचीनतम विषय माने जा सकते है और न ही यह उनके मूल विषय स्वीकार किये जा सकते

है, क्योकि प्रारम्भिक चरण मे पुराण गाथाओ और आख्यानो का सकलन मात्र था पौराणिक साहित्य मे पञ्चलक्षणो का समावेश सभवत द्वितीय सस्करण के समय किया गया । जिसका कारण पौराणिक साहित्य को इतिहासादि से पूर्णत स्वतत्र एव प्रथक स्वरूप प्रदान करना माना जा सकता है। अवान्तर मे पुराणो मे धर्म, मोक्ष, तीर्थ, व्रत, दान, आदि विषयो का समावेश उक्त कथन को बल प्रदान करता है। पञ्चलक्षण पुराणो के लिए पारिभाषिक शब्द होकर रह गया कतिपय प्रथामिक पुराणो जैसे विष्णु, मत्स्य, कूर्म, वायु ब्राम्हाण्ड आदि मे बहुत कुछ पञ्चलक्षण के समाहार की उक्त प्रवृत्ति प्रमाणित होती है । अधिकाश पुराणो मे समय–समय पर समसमायिक विविध एव नवीन विषयो का समावेश किया जाने लगा ।

प्रस्तुत प्रसग मे आचार्य राजशेखर शास्त्री[49] ने विद्वानो का ध्यान कौटिल्य के अर्थशास्त्र (1 5) की व्याख्या मे जयमगला के द्वारा किसी पुरातन ग्रथ से उद्धृत श्लोक की ओर आकृष्ट किया । जो पञ्चलक्षणो की एक अन्य परिभाषा को प्रस्तुत करता है । श्लोक निम्नवत् है –

''सृष्टि प्रवृत्तिसहार धर्ममोक्ष प्रयोजनम्।

ब्रहमभिर्विविधै प्रोक्त पुराण पञ्चलक्षणम्।।''

उक्त श्लोक मे धर्म पुराण का एक अविभाज्य लक्षण स्वीकार किया गया है । जिसके आधार पर आचार्य बलदेव उपाध्याय[50] ने धर्म को भी पुराणो का प्राचीन लक्षण स्वीकार किया है। आपस्तम्ब धर्मसूत्र के आधार पर भी आचार्य बलदेव उपाध्याय[51] ने प्राचीन काल से ही पुराणों के धर्मशास्त्रीय स्वरूप को स्वीकार्य किया है । आचार्य उपाध्याय ने अपने मत की पुष्टि के लिए भागवत् पुराण का उद्धरण प्रस्तुत किया है, जिसमे 'मन्वन्तराणि सद्धर्म' कहकर मन्वन्तर के भीतर धर्म का उपान्यास न्याध्य माना है । परन्तु सिद्धेश्वरी नारायण राय [52] के अनुसार जयमंगला द्वारा उदृधत् श्लोक की प्राचीनता निश्चित प्रमाण के अभाव मे निर्धारित नहीं हो पाती। इसी सन्दर्भ मे हरिनारायण दुबे[53] के मतानुसार उक्त श्लोक गुप्तोत्तर काल मे विरचित हुआ जिस समय विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायो का समुन्नयन हो रहा था तथा पञ्चलक्षण की परिभाषा में भी परिवर्तन हो चुका था । कूर्म पुराण[54] (1 12) के अनुसार पुराण पञ्चलक्षणो का उल्लेख इस प्रकार है ।

पञ्चलक्षणो द्वारा विभिन्न देवो की अस्तुति अनेक पुराणो से प्रमाणित होता ह । उदाहरणार्थ विष्णु स्थल मे एक स्थान पर कहा गया है कि सर्ग प्रतिसर्ग आदि पौराणिक विषय विष्णु के गौरवगान के लिए है । मत्स्य पुराण[55] मे वर्णित है कि इन लक्षणो के माध्यम से ही पुराण ब्रम्हा, विष्णु, सूर्य तथा रूद्र का गुणगान करते है । उपर्युक्त समीक्षा के आधार पर धर्ममोक्ष आदि विषयो का समावेश आवान्तर कालीन पुराण सरचना के अन्तर्गत स्वीकार करना यथोचित प्रतीत होता है ।

पञ्चलक्षणात्मकः विषय

सर्ग

इस सम्पूर्ण जगत की सृष्टि प्रक्रिया को ही 'सर्ग' नाम से अभिहित किया गया है । भागवत पुराण[56] का निम्नलिखित श्लोक सर्ग की परिभाषा को व्यक्त करता है ।

"अव्याकृतगुणक्षोभात् महतस्त्रिवृत्तोऽहम ।
भूतमात्रेन्द्रियार्थाना सम्भव सर्ग उच्यते।।"

अथार्त् जब मूल प्रकृति मे लीन गुण क्षुब्ध होते है तब महत् तत्व की उत्पत्ति होती है। महत् तत्व से ही तीन प्रकार के अहकार जागृत होते है । त्रिविध अहकारो से ही पञ्चतन्मात्रा (भूतमात्र) की उत्पत्ति होती है इसी उत्पत्ति क्रम को सर्ग कहा जाता है।

प्रतिसर्ग

सर्ग के विलोमार्थी शब्द प्रतिसर्ग से तात्पर्य प्रलय से है । विष्णु पुराण[57] मे इसके लिए प्रतिसंचर शब्द का प्रयोग किया गया है । श्रीमद्भागवत्[58] मे सस्था शब्द उल्लिखित है। भागवत पुराण में चार प्रकार के प्रलयो का उल्लेख मिलता है । नैमित्तिक, प्राकृतिक, नित तथा आत्यन्तिक कल्प को ब्रहमा का दिन माना गया है । रात्रि को जब ब्रहमा निद्रा मग्न हो जाते है तो इस अवसर पर तीनों लोको का प्रलय हो जाता है, परन्तु महर्लोक, जनलोक आदि अपने स्थान पर बने रहते हैं । इसी प्रलय को नौमित्तिक सज्ञा प्रदान की गयी है । प्राकृत प्रलय के समय पञ्चमहाभूतो से बना यह सम्पूर्ण ब्रहमाण्ड अपना स्थूल रूप छोडकर कारण रूप मे स्थित हो जाता है । प्रकृति तथा पुरूष ये दोनो शक्तियॉ क्षीण होकर अपने

मूल कारण मे विलीन हो जाती है । इस जगत के पदार्थो के स्वत नष्ट होने की प्रक्रिया का ही नित्य प्रलय कहा गया है जो प्रतिक्षण सभव है ।

प्रस्तुत सदर्भ मे हरिनारायण दुबे[59] का कथन अत्यन्त सारगर्भित है कि पुराणो के प्रलय, विलय, अथवा जल–प्लावन घटना क्रमो का साकेतिक अर्थ मानव आर्दर्शो एव विचारो के परिवर्तन एव नये मूल्यादर्शो की ओर प्रस्थान से माना जा सकता है ।

वश

बह्मा द्वारा उत्पन्न नृपतियो की भूत, भविष्य, तथा वर्तमान कालिक सतान परम्परा को वश कहा गया है[60] ।

''राज्ञा ब्रहमप्रसूताना वशस्त्रैकालिकोऽन्वय ।''

वश के अन्तर्गत ऋृषियो तथा देवो की कुल परम्परा की भी परिगणना पुराणो मे की गई है ।

मन्वन्तर

सृष्टि के विभिन्न कालमान को मन्वन्तर द्वारा व्यक्त किया गया है। पुराण परम्परानुसार एक कल्प के अन्तर्गत चौदह मनुओ का प्रादुर्भाव होता है । प्रत्येक मनु द्वारा भुक्त काल को मन्वन्तर कहा जाता है । इस प्रकार एक कल्प मे चौदह मन्वन्तर परिकल्पित किये गये है । भावगत पुराण[61] मे मनु, देवता, मनुपुत्र, इन्द्र सप्तर्षि और भगवान के अशावतार– इन छ विशिष्टताओ से युक्त समय को मन्वन्तर कहा गया है । विष्णु पुराण मे चौदह मनुओ के नाम इस प्रकार है –

(1) स्वायम्भुव (2) स्वरोचिष (3) उत्तम (4) तामस (5)रैवत (6) चाक्षुष (6) वैवस्वत (7) सावर्णिक (8) दक्षसावार्णिक (9) ब्रहमसावर्णिक (10) धमसावर्णिक (11) रूद्रसावर्णिक, (12) देवसावर्णिक (13) इन्द्र सावर्णिक। कूर्म पुराण[62]

वशानुचरित

विशिष्ट व्यक्तियो एव नृपतियो के चरित्र का वर्णन ही वशानुचरित कहलाता है । भागवत पुराण[63] मे वशानुचरित की परिभाषा निम्नोक्त है –"वशानुचरित तेषा वृत्त वशधराश्चयो।"

पुराण दस लक्षण

पुराणो के दस लक्षणो का उल्लेख मात्र ब्रम्हवैवर्त्त एव भागवत पुराण मे ही मिलता है। अन्यत्र किसी मे पुराण की दसलक्षणात्मक व्याख्या उपलब्ध नही है। भागवत पुराण मे दो स्थानो पर दस लक्षणो का उल्लेख किया गया है । आचार्य उपाध्याय[64] के अनुसार लक्षणो मे शाब्दिक भिन्नता होते हुए भी अभिप्राय दोनो का समान है । ये लक्षण प्रकार है–

(1) सर्ग (2) विसर्ग (3) वृत्ति (4) रक्षा (5) अन्तराणि (6) वश (7) वशानुचरित (8) सस्था (9) हेतु (8) अपाश्रय[65] । भागवत पुराण 12 7 9।

भागवत पुराण मे ही दूसरे स्थान पर ये लक्षण निम्न प्रकार से उल्लिखित है –

(1) सर्ग (2) विसर्ग (3) स्थानम् (4) पोषाणम् (5) ऊतय (6) मन्वन्तर (7) ईशानुकथा (8) निरोध (9) मुक्ति (10) आश्रय[66] ।

भागवतकार ने यह इगित किया है कि पॉच अथवा दस लक्षणो की योजना महत् अथवा अल्प व्यवस्था के कारण की गयी है । ब्रहमवैवर्त्त पुराण[66] के अनुसार दस लक्षण महा पुराण एवं पञ्चलक्षण क्षुल्लक पुराण साकेतिक है। सिद्धेश्वरी नारायण राय[67] के अनुसार इसका अभिप्राय पुराण सस्करण एव प्रतिसस्करण द्वारा श्रृति एव अर्थ परम्परा मे परिवर्धन एव नवीन संयोजन से माना है । इस स्थल पर यह विवेचनीय है कि सामान्यतया पुराणो मे उल्लिखित है कि जो लक्षण पुराणो के है वहीं उपपुराणों के भी हैं। अत पञ्च तथा दस लक्षणों से उपपुराण एवं महापुराण से तादात्म्य स्थापित करना सर्वथा असंगत है । भागवत पुराण निम्नलिखित श्लोक द्वारा यह सकेत किया गया है कि पुराण दस लक्षण भी हो सकते हैं । और कतिपय पञ्चलक्षणात्मक भी, अपने अल्प और महत् स्वरूप के कारण।

"दशभिक्तर्क्षणैयुक्त पुराण तद्विदोविदु ।

केचित्पञ्चविधि ब्रहमन् महदल्पव्यवस्था।।"

ऐसा प्रतीत होता है भागवत पुराण मे जो दसलक्षणात्मक व्याख्या की गयी है उसका कारण है कि दर्शानिक विचारो एव साम्प्रदायिक भावना का पुराणो मे प्रवेश ।

अष्टादश पुराण सख्या एव क्रम

पुराणो के सम्बध मे यह सर्वमान्य मत है कि पुराणो की कुल सख्या अठारह है । यद्यपि इनकी सूची विविध पुराणो मे भिन्न–भिन्न है । कूर्मपुराण[68], विष्णु[69], भागवत[70], भविष्य[71], तथा अन्य पुराणो मे इनकी सूची निम्नलिखित है

कूर्मपुराण के अनुसार

(1) ब्रम्ह, (2)पद्म (3) विष्णु, (4) शिव (5) भागवत्, (6)भविष्य, (7) नारद, (8) मार्कण्डेय, (9)अग्नि (10) ब्रम्हवैवर्त (11)लिग (12)वाराह (13)स्कन्द (14) वामन (15)कूर्म (16)मत्स्य (17) गरूण (18)ब्रम्हाण्ड

विष्णुपुराण के अनुसार

(1) ब्रम्ह, (2) पद्म (3) विष्णु, (4) शिव (5) भागवत्, (6) नारद (7) मार्कण्डेय, (8) अग्नि (9) भविष्य, (10) ब्रम्हवैवर्त (11) लिग (12) वाराह (13)स्कन्द (14) वामन (15) कूर्म (16) मत्स्य (17) गरूण (18) ब्रम्हाण्ड

आलोचित पुराण में अठारह पुराणो का उल्लेख तो मिलता है परन्तु अन्य पुराणो के क्रमो मे एकरूपता नहीं दिखती है, लेकिन कूर्मपुराण पन्द्रहवॉ पुराण है का उल्लेख मिलता है।

कतिपय पुराणों मे उपरोक्त सूची तथा प्रथम आदि पुराण के विषय मे मतवैभिन्न देखने को मिलता है वायु पुराण[72] में नितान्त भिन्न क्रमावली प्रस्तुत की गयी है । यद्यपि इनमें अष्टादस पुराणो को स्वीकार किया गया है । परन्तु इनकी सूची मे मात्र सोलह पुराणो का ही नामोलेख है ।

(1) मत्स्य (2) भविष्य, (3) मार्कण्डेय, (4) ब्रह्मवैवर्त (5) ब्रह्माण्ड, (6) भागवत् (7) ब्रम्ह (8) वामन (9) आदिक (10) अनिल (वायु) (11) नारदीय (12) वैनतेय (गरूण) (13) कूर्म (14) वाराह (15) स्कन्द

उपरोक्त सूची मे मत्स्य पुराण को प्रथम पुराण का श्रेय प्रदान किया गया है । तथा आदिक नामक नितान्त भिन्न पुराण का उल्लेख है, जिसका स्वरूप अनिश्चित है।

देवी भागवत[73] मे भी मत्स्य पुराण का उल्लेख प्रथम स्थान पर किया गया है । इसमे पुराणो के नाम सूत्र रूप मे निबध है –

मद्वय भद्वय चैव ब्रत्रय वचतुष्टयम् ।

अनापद् लिग–कू–स्कानि पुराणानि पृथक्–पृथक् ।।[74]

अर्थात् मकार से दो पुराण मत्स्य तथा मार्कण्डेय, भकार से दो पुराण भागवत् तथा भविष्य, ब अक्षर से तीन पुराण ब्रम्ह, ब्रम्हाण्ड तथा ब्रम्हवैवर्त, वकार से चार पुराण वाराह, वामन, विष्णु, तथा वायु, अ से अग्नि, न से नारद, लि से लिग, ग से गरूण, कू से कूर्म, तथा स्क से स्कन्द नामक पुराणो का उल्लेख किया गया है ।

इसी प्रकार वामन पुराण[76] भी मत्स्य को ही आदि पुराण मानता है । जबकि स्कन्द पुराण[77] ब्रह्माण्ड पुराण को आदि पुराण के रूप मे स्वीकार करता है ।

पद्म पुराण[78] के आदि, पाताल तथा उत्तर खण्ड मे दो स्थलो पर पुराणो की क्रमावली किचित अन्तर के साथ उल्लिखित है तथा सख्या मे अठारह दर्शाये गये है । पद्म पुराण[79] मे ही एक स्थल पर बाइस पुराणो का उल्लेख किया गया है ।

(1) ब्रम्ह (2) पद्म, (3) विष्णु (4) मार्तण्ड (5) नारद (6) मार्कण्डेय (7) अग्नि (8) कूर्म (9) वामन (10) गरूण (11) लिग (12) स्कद (13) मत्स्य (14) नृसिंह (15) कपिल (16) वाराह (17) ब्रम्हवैवर्त्त (18) शिव (19)भागवत (20) दुर्गा (21) भविष्योत्तर (22) भविष्य

उपयुर्क्त सूची मे नृसिह, कपिल, मार्तण्ड, एव भविष्योत्तर ये चारो ही उपपुराण प्रतीत होते है। इस प्रकार भिन्न–भिन्न क्रमावली के प्राप्त होने पर भी सामान्यत सर्वप्रथम उल्लिखित सूची ही प्रचलित एव मान्य है ।

पुराणो का वर्गीकरण

अष्टादश पुराणो का अनेक पुराणो मे भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से वर्गीकरण किया है। प्रथम प्रकार का वर्गीकरण त्रिगुणो पर आधारित है। किन्तु इस प्रकार के विभाजन मे पुराण एक मत नही है । मत्स्य पुराण के अनुसार सात्विक पुराण के अर्न्तगत विष्णु का माहत्म वर्णित है, राजस्य पुराणो मे ब्रम्हा तथा अग्नि का माहात्म्य वर्णित तथा तामस पुराणो मे शिव का सरस्वती तथा पितरो का माहात्म्य वर्णित करने वाले सकीर्ण पुराण है किन्तु यहॉ पर पुराणो का नाम उल्लेख नही किया गया है । पद्म पुराण [80] –

1- सात्विक– विष्णु, नारद, भागवत, गरूण, पद्म , वाराह ।

2- राजस– ब्रम्हाण्ड, ब्रम्हवैर्वत, मार्कण्डेय, भविष्य, वामन, ब्रहम ।

3- तामस– मत्स्य, कूर्म, लिग, शिव, स्कन्द, अग्नि ।

पद्म पुराण तो साथ मे यह भी कहता है कि सात्विक पुराण मोक्ष देने वाले, राजस पुराण स्वर्ग प्रदान करने वाले, तथा तामस नरक की ओर ले जाने वाले है । कूर्म पुराण[81] । भविष्य पुराण [82] मे त्रिगुण समन्वित वर्गीकरण कुछ भिन्नता के साथ उपलब्ध है। उसमे राजस पुराणो के अन्तर्गत कर्मकाण्ड प्रधान पुराणो को स्वीकार किया है। तथा तामस के अन्तर्गत शक्ति धर्म तथा पुराणो की गणना की गयी है। जो निम्नलिखित है

1 –सात्त्विक पुराण– विष्णु, स्कन्द, पद्म, भागवत्, ब्रम्ह, गरूड ।

2 –राजस– मत्स्य, कूर्म, नृसिह, वामन, शिव, वायु ।

3 – तामस– शक्ति, धर्म, परायण, मार्कण्डेय, वाराह, अग्नि, लिंग, ब्रम्हाण्ड, भविष्य ।

द्वितीय वर्गीकरण साम्प्रदायिक है विभिन्न सम्प्रदायो के अनुयायियो ने पुराणो मे अपने सम्प्रदाय को अत्याधिक महत्व प्रदान किया है । शिव पुराण मे शिव की प्रधानता है, तो विष्णु

पुराण मे विष्णु की । कही सूर्य सर्वश्रेष्ठ देव है तो कही ब्रम्हा इस प्रकार प्रधान देवो के आधार पर पुराणो का वर्गीकरण निम्न प्रकार से है । स्कन्द पुराण मे दो स्थानो इस प्रकार का विभाजन उपलब्ध है परन्तु कुछ भिन्नता के साथ उल्लिखित है। स्कन्द पुराण के केदार खण्ड[83] मे दस मे शिव, चार मे ब्रम्हा, दो मे शक्ति, तथा दो मे विष्णु, प्रधान देवता है किन्तु नामो का उल्लेख नही किया गया है । स्कन्द पुराण के ही शिव रहस्य खण्ड[84] के अन्तर्गत उपलब्ध विभाजन मे दस मे शिव, चार मे विष्णु दो ब्रम्हा, एक अग्नि तथा एक मे सूर्य देव की प्राधनता है । जो निम्नलिखित है

1- शैव— शिव, भविष्य, मार्कडेण्य, लिग, वाराह, स्कन्द, मत्स्य, कूर्म, वामन, ब्रह्माण्ड ।

2- वैष्णव— विष्णु, भागवत्, नारद, गरूण,

3-ब्रह्मापुराण— ब्रम्हपद्म,

4-अग्निपुराण— अग्नि

5-सूर्य— ब्रह्मवैवर्त्त

उपास्य देवो पर ही आधारित विभाजन तमिल ग्रन्थो मे भी प्राप्त होता है जो निम्नवत् है

1-शैव पुराण— शिव, स्कन्द, लिग, कूर्म, वामन, वाराह, भविष्य, मत्स्य, मार्कण्डेय, ब्रह्माण्ड ।

2-वैष्णव पुराण— नारद, भागवत्, गरूड, विष्णु ।

3-बह्मपुराण— ब्रह्म, पद्म ।

4-अग्निपुराण— अग्नि ।

5-सौर पुराण— ब्रह्मवैवर्त्त ।

उपर्युक्त साम्प्रदायिक विभाजनों मे कूर्म पुराण[85] को शैव सम्प्रदाय के अन्तर्गत स्वीकार किया गया है। शिव ही इसके स्वयभू प्रधान देवता हैं। उनकी सात्विक, राजस, तामस तीन अवस्थाये हैं। ब्रह्मा विष्णु, महेश सर्वोच्च देव की तीन मूर्तियॉ है। वहीं ब्रह्मा रूप

से लोको का सृजन करते है, विष्णु रूप मे पालन पोषण तथा शिव मे स्वय सृष्टि के सहारक है। तृतीय विभाजन वर्ण्य विषय पर आधारित है। जिसका विभाजन छ वर्गो मे किया गया है[86]।

1-प्रथम वर्ग मे उन पुराणो को रखा गया है जिनमे साहित्यक सामग्री उपलब्ध है यथा— अग्नि, गरूण, और नारद ।

2-दूसरे वर्ग के अन्तर्गत तीर्थ, व्रत प्रधान पुराणो की गणना की गयी है । यथा— पद्म, स्कन्द, भविष्य ।

3-तीसरा वर्ग इतिहास प्रधान पुराणो का है जिसके अन्तर्गत ब्रह्माण्ड और वायु पुराण स्वीकार किये गये है ।

4-चौथे वर्ग मे साम्प्रदायिक पुराणो का अन्तर्भाव है जिसमे लिग, वामन, तथा मार्कण्डेय पुराण आते है ।

5-पॉचवे वर्ग मे उन पुराणो को लिया गया है, जिनके दो—दो बार सस्करण होने से नए प्रक्षिप्ताशो को भी जोडा गया है, यथा— ब्रह्मा, ब्रह्मवैवर्त्त, भागवत् ।

6-अत्यधिक सशोधन होने से जिन पुराणो मे आमूल परिवर्तन हो गया है, उन्हे छठे वर्ग मे सम्मिलित किया गया है । वाराह, कूर्म तथा मत्स्य ऐसे ही पुराण है।

उपपुराण एवं उनकी संख्या

उपपुराणो के सख्या एव प्राचीनता के सम्बध मे अत्यन्त विवाद का विषय है । पौराणिक वाड्.मय का प्रणयन किसी एक काल की घटना नही है, वरन् इसकी विकास प्रक्रिया, अनेक शताब्दियो तक निरन्तर प्रवाहमान थी। इसके फलस्वरूप पौराणिक वाड्मय महापुराण उपपुराण एवं औपपुराण के रूप मे विकसित होता रहा। कूर्मपुराण[87] मे कहा गया है कि मुनियो अष्टादश ने पुराणो का सम्यक् विचार करने के उपरान्त उनको सक्षिप्त स्वरूप प्रदान करने हेतु उपपुराणों की रचना की। मत्स्य पुराण[88] मे उपपुराणो को अष्टादश पुराणो का उपभेद स्वीकार किया है तथा उन्हीं से उद्भूत् माना है विष्णु पुराण[89] में उपपुराणो का

उल्लेख आता है किन्तु नाम निर्दिष्ट नही है। सम्भवत उपपुराणो का उदय हो चुका था किन्तु विशिष्ट पुरणो की रचना नही हुई थी।

इस आधार पर यह कहना है कि महापुराणो के सकलन के बाद उपपुराणो का प्रणयन प्रारम्भ हुआ उचित प्रतीत नही होता। क्योकि कूर्म[90] पद्म[91], देवीभागवत[92] मे अठारह उपपुराणो के नाम उल्लिखित है एव अन्य पुराणो मे भी उपपुराणो का नाम सहित उल्लेख किया गया है। मत्स्य पुराण[93] मे नरसिह, नन्दी, आदित्य एव साम्ब नामक उपपुराणो का उल्लेख है। हाजरा[94] ने पद्म पुराण का समय 900 ईसा से 1500 ईसा के मध्य प्रतिपादित किया। मत्स्य पुराण की तिथि काणे[95] महोदय ने 200 ई० से 400 ई० के मध्य स्वीकार की है। आर्चाय उपाध्याय [96] ने भी मत्स्य पुराण की तिथि 200 ई० से 400 ई० स्वीकार की है। हाजरा ने मत्स्य पुराण के द्वितीय सस्करण को 550 ई० से 650 ई० के मध्य माना है। कूर्म पुराण का काल पद्म पुराण से पहले निश्चित किया जा सकता है। क्योकि पद्म पुराण मे कूर्म पुराण से बहुत कुछ वर्णन उद्धृत किया है ।

उपर्युक्त सीमक्षा के आधार पर कहा जा सकता है कि पुराणो के सस्करण के साथ ही साथ उपपुराणो की कल्पना कर ली गयी। यही कारण है कि कुछ पुराण उपपुराण से भी परिचित है। मत्स्य पुराण की तिथि के आधार पर उपपुराणो की प्राचीनता छठी से सातवी शती के मध्य स्वीकार कर सकते है। अधिकाश उपपुराण पश्चातकालीन है क्योकि उनका उल्लेख ग्यराहवीं, बारहवीं शती के टीकाकारो एव निबन्धकारो के ग्रन्थो मे उपलब्ध नहीं हो पाता ।

विष्णु तथा ब्रम्हवैवर्त्त एवं भविष्य पुराण मे उपपुराण की सख्या अठारह बतायी गयी है। किन्तु नामोल्लेख नहीं किया गया है। कूर्मपुराण[97] पद्म[98] तथा देवी भागवत[99] मे उपपुराणो के नाम थोडे अन्तर के साथ उल्लिखित है। उपपुराणों की सख्या पर विमर्श करते हुए हाजरा ने इनकी 23 विभिन्न सूचियॉ प्रस्तुत की है, जिनमे लगभग 100 उपपुराणो का नाम सकलित हैं। इनमे से कुछ का प्रकाशन हो रहा है। शेष पाण्डुलिपियॉ विभिन्न पुस्तकालयों मे सुरक्षित हैं। इन उपपुराणो में पचलक्षणो का निर्वाह नही किया गया है, परन्तु प्रचलित पाठ बहुधा महापुराणो के विषयो साम्य रखते है।

सूक्त सहिता[100] मे 20 उपपुराणो के नाम उल्लखित हैं। जिनका क्रम निम्नलिखित है

सूची

क्र०स०	कूर्मपुराण	पद्मपुराण	देवीभागवत्	सूतसहिता
1	सनत्कुमार	सनत्कुमार	सनत्कुमार	सनत्कुमार
2	नृसिह	नृसिह	नरसिह	नरसिह
3	स्कन्द	अण्ड	नारदीय	ननदी
4	शिवधर्म	दुर्वसा	शिव	शिवधर्म
5	आश्चर्य	नारदीय	दुर्वासस्	दुर्वासा
6	नरद	कपिल	कपिल	नारदीय
7	कपिल	मानव	मानव	कपिल
8	मानव	उशनस्	औशनस्	मानव
9	उशना	ब्रम्हाण्ड	वारूण	उषनस्
10.	ब्रम्हाण्ड	वरूण	कालिका	ब्रम्हाण
11.	वरूण	कालिका	साम्ब	वरूण
12.	कालिका	महेश	नन्दी	कालिका
13.	माहेश्वर	साम्ब	सौर	वशिष्ट
14.	सम्ब	सौर	पाराशर	लिग
15.	सैर	पाराशर	आदित्य	महेश्वर

16	पराशर	मारीच	माहेश्वर	साम्ब
17	मरीच	भार्गव	भागवत	सौर
18	भार्गव	कौमार	वाशिष्ठ	पाराशर
19	–	–	–	मारीच
20	–	–	–	भार्गव

पुराणो की भाषा शैली

पुराणो की भाषा शैली के सम्बन्ध मे विभिन्न मत प्रस्तुत किये गये है। प्रथम के मतानुसार पुराण का मूल रूप प्राकृत भाषा मे निबध था, जिसे मे सस्कृत भाषा मे रूपान्तरित कर दिया गया । इस मत का प्रतिपादन पार्जीटर महोदय ने किया है। द्वितीय मतानुसार पुराणो की मूल रचना ही सस्कृत भाषा मे की गयी है । द्वितीय मत के समर्थन मे कीथ, जैकोबी, पुसालकर, बलदेव उपाध्याय पभृति विद्वानो ने अपने अपने तर्क प्रस्तुत किये[101] । पार्जीटर[102] की धारणा है कि पुराणो का प्राथमिक सकलन लोक विश्रुत क्षत्रिय परम्परा मे हुआ था, जिनमे मूलत जन भाषा का प्रयोग किया गया। कालान्तर मे ब्राह्मण परम्परा के अन्तर्गत पुन सस्कृत भाषा मे रूपान्तरित कर लिया गया। इस सदर्भ उन्होने मत्स्य, वायु एव ब्राह्मण पुराणो का उल्लेख किया है। अपने मत के समर्थन मे उन्होने कतिपय शब्दो की ओर ध्यान आकृष्ट किया है, जो सस्कृत व्याकारण की दृष्टि से अशुद्ध है तथा प्राकृत भाषा तथा व्याकरण की दृष्टि से सर्वथा उचित है। इनके अनुसार सस्कृत भाषा मे रूपान्तरण के समय इन शब्दो को जन भाषा में प्रचलित होने के कारण यथावत् रहने दिया। व्याकरणगत् अशुद्धियों के सम्बन्ध मे डॉ० कीथ ने जनभाषा मे प्रचलित (प्राकृत) शब्दो के प्रयोगो को स्वीकार करते हुए यह मत प्रस्तुत किया कि पुराणो का मूल सस्करण सस्कृत भाषा मे ही था, किन्तु जनसाधारण मे पुराणो को लोकप्रिय बनाने के लिए लोक प्रचलित भाषा के शब्दो का प्रयोग किया गया। आपके मतानुसार परम्परा प्राप्त जनभाषा का प्रभाव तो वैदिक वाड्मय में कहीं–कहीं मिलता है, जिसे पुराणकारो ने अपनी रचना का आदर्श स्वीकार किया। आचार्य

बलदेव उपाध्याय[103] ने भी पुराणो की मूलभाषा स्वीकार करते हुए उन्हे वेदो और काव्यो से पृथक् माना है। पुराण अर्थ प्रधान होता है अथार्त् अभीष्ट अर्थ को प्रस्तुत करने पर ही पुराण का विशेष आग्रह है। इसी कारण की भाषा व्यवहारिक होती है, उसके फलस्वरूप वह पाणनीय बधन को स्वीकार नही करते। पुसाल्कर ने पार्जीटर द्वारा किये गये क्षत्रिय परम्परा एव ब्राह्मण परम्परा, इस प्रकार के विभाजन को नितान्त भ्रामक बताया है। पुसाल्कर ने तर्क प्रस्तुत किया है कि पुराणो को वेदो के समकक्ष माना गया है, तथा उनका उल्लेख पचम वेद के रूप मे किया गया है[104]। उनमे वैदिक ब्राह्मण परम्पराओ, विषयो को सम्मान्य स्थान प्रदान किया है । यही नही उनमे वेद विरोधी धर्मो यथा जैन बौद्व आदि को कोई स्थान नही दिया। इस सन्दर्भ मे पुसाल्कर ने कीथ के विचारो को प्रस्तुत करते हुए यह भी स्पष्ट किया कि पार्जीटर पुराणो के जिस स्तर विशेष को क्षत्रिय परम्परा से जोडते है उस स्तर एव काल मे भी वैदिक परम्परा प्राप्त ब्राह्मणाख्यानो का ही सकलन किया गया है, जिनमे वश एव वशानुचरित आख्यानो को भी कथमपि वेदेतर परम्परा नही मानी जा सकती[105] ।

पुराणो का मुख्य लक्ष्य वेदो का उपबृहण है । अतएव वैदिक अर्थो को जन प्रचलित करने के लिए पुराणकारो ने वर्णनात्मक शैली का आश्रय लिया । अपने अभीष्ट अभिप्राय को सामान्य जनता तक पहुॅचाने के लिए उन उपमाओ और दृष्टान्तो का सहारा लिया जो दैनिक और जीवन मे नित्य प्रति ही अनुभव किये जाते है ।

कुछ विद्वानो ने पुराणो के अतिश्योक्ति पूर्ण कथनो पर आपत्ति उठायी है तथा उन्हे नितान्त कपोल कल्पित स्वीकार किया है, किन्तु इस आधार पर उसके तथ्यो को पूर्णत अस्वीकृत करना तर्कसगत प्रतीत नहीं होता । ध्यान देने योग्य बात यह है कि पुराणो की शैली प्रारम्भ से ही वर्णनात्मक रही है। अत कथाकार द्वारा उनमे स्वत ही कल्पना का समावेश हो जाता है, जिससे पाठको की उत्सुकता बनी रहे, किन्तु इस कारण उसमे मूल सदेश का विलोप नहीं हो जाता। उदाहरणार्थ दान के प्रसग मे लाखो एव करोडो गायो को ब्राह्मणों को देने का उल्लेख है। यहॉ करोडो गायो से अभिप्राय बहुत सी गायो से है न कि निर्दिष्ट सख्या से ।

इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि पुराणकारो ने अपने अनुभवो एव उपदेशो को रूपक उपमा आदि अलकारो तथा सूक्तियो द्वारा अलकृत कर जनसाधारण मे सम्प्रेषित करने के लिए कथा शैली एव सस्कृत भाषा को माध्यम बनाया ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) तत्रवार्तिक 1 3 3

(2) निरूक्त 3 19

(3) एस० एन० राय पौराणिक धर्म एव समाज पृ० 3

(4) मत्स्य पुराण 3 3 4

(5) आचार्य बलदेव उपाध्याय पुराण विमर्श पृ० 37

(6) स्कन्द पुराण (रेवा माहात्म) 1 23 30

(7) पदम पुराण सृष्टि खण्ड अध्याय 1

(8) आर० सी० हाजरा स्टडीज इन दि पैराणिक रेकाडर्स आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्ट्म्स 5

(9) ऋग्वेद 3.54 9, 3.58 6, 10 130 60

(10) अथर्ववेद काण्ड 15 अनुवाक 1 एक सक्त–6

(11) आचार्य बलदेव उपाध्याय पुराण विर्मश पृ० 10

(12) अथर्ववेद 11 8.7

(13) गोपथ ब्राह्मण पूर्व भाग– 2 10

(14) शतपथ ब्राह्मण 11.5 6-8, 11.5.7-9, 14.6 10-6

(15) शतपथ ब्राह्मण 13 4 3 12-13

(16) बलदेव उपाध्याय पूर्वोधृत पृ० 14

(17) छान्दोग्य उपनिषद 7 1 2, 7 1 4, 7 2 1

(18) गौतम धर्मसूत्र 11-19

(19) याज्ञवल्क स्मृति 1 3

(20) अपस्तम्ब धर्मसूत्र 2 23 35

(21) अपस्तम्ब धर्मसूत्र 2 9 24 6

(22) ब्राह्मण्ड पुराण 54 159-166 विष्णु पुराण 2 8 12

(23) विष्णु पुराण 2 8 12

(24) मत्स्य पुराण 124 102.110

(25) विण्टर नितस हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर पृ 519

(26) बलदेव उपाध्याय पुराण विर्मश 19

(27) आर० सी० हाजरा पूर्वोधृत पृ० 5

(28) महाभारत अनुसाशन पर्व विशेश दृष्टव्य बलदेव उपाध्याय पृ० 19

(29) महाभारत आदि पर्व 5 2

(30) दृष्टव्य पुसालकर एपिक्स एण्ड दि पुराणाज भूमिका पृ० 31

(31) धर्मसूत्र 8 4 6

(32) मनुस्मृति 3.232

(33) कूर्म पुराण 1 1 12

(34) ऋग्वेद 3.5 49, 3.58 6, 10.130 6

(35) आचार्य बलदेव उपाध्याय पूर्वोधृत पृ० 10

(36) गोपथ ब्राह्मण 1 10

(37) मत्स्य पुराण अध्याय 53

(38) विष्णु पुराण 30 6 152

(39) वायु पुराण 60 21

(40) ब्राह्मण्ड आदि 2 3 31

(41) हरिनारायण दुबे पुराण समीक्षा पृ० 69-70

(42) अथर्ववेद 11 7 24

(43) शतपथ ब्राह्मण 13 4 3 13

(44) मनु स्मृति 3 232

(45) याज्ञवल्यक स्मृति श्लोक 3

(46) कूर्म पुराण 1 1 12 विष्णु पुराण 3 6 24, मार्कण्डेय 1 34 13, अग्नि पुराण 1 14, ब्रम्हवैवत्त पुराण 1 33 6, वराह पुराण 2 4, स्कन्द पुराण प्रभाष खण्ड 2 84, मत्स्य पुराण 53 64, गरूड पुराण आचरखण्ड 2 28, ब्राह्मण्ड पुराण, प्रक्रिया पाद 1.38, शिव पुराण 1 41, भविष्य पुराण 1 2 5

(47) पार्जिटर पृ० 36

(48) दृष्ट्व्य काणे धर्मशास्त्र का इतिहास चतुर्थ भाग पृ० 388-389

(49) पुराणम पत्रिका भाग –चार अंक 1 जुनाई 1964 मे प्रकाशित राजशेखर का भारतीय राजनीतौ पुराण पंचलक्षणम् पृ० 236-246

(50) आचार्य बलदेव उपाध्याय पृ० 127

(51) वही पृ० 19

(52) एस० एन० राय पौराणिक धर्म एव समाज पृ० 17

(53) हरिनारायण दुबे पुराण समीक्षा पृ० 73

(54) कूर्म पुराण 1 12

(55) मत्स्य पुराण 2 10 1-7, 12 7 9-20

(56) भागवत पुराण 12 7 11

(57) विष्णु पुराण 1 2 25

(58) श्रीमद्भागवत् 12 7 17

(59) हरिनारायण दुबे पूर्वोद्धधृत पृ० 74

(60) भागवत पुराण 12 7 16

(61) भागवत पुराण 1 7 16

(62) कूर्म पुराण 1 12

(63) भागवत पुराण 12 7 16

(64) बलदेव उपाध्याय पृ० 128

(65) भागवत पुराण 12 7 9

(66) भागवत पुराण 2 10 1

(67) एस०एन०राय पूर्वोदधृत पृ० 17

(68) कूर्म पुराण 1.1.13 15

(69) विष्णु पुराण 3 6 20.24

(70) भागवत पुराण 12.13.3.8

(71) भविष्य पुराण ब्राम्हपर्व 1.61-64

(72) वायु पुराण 104.1

(73) देवी भागवत 1 3 3

(74) वही 1 3.21

(75) वामन पुराण 12 48

(76) स्कन्द पुराण 2 8 9

(77) पद्म पुराण उत्तर खण्ड 2 19, 25 27, 2 61 77 81

(78) पद्म पुराण पाताल खण्ड 10 51 53

(79) पदम पुराण 163 81 84

(80) कूर्म पुराण 1 1 2

(81) भविष्य पुराण 3 28 8-17

(82) स्कन्द पुराण केदार खण्ड विशेष दृष्टव्य बलदेव उपाध्याय पृ० 92

(83) स्कन्द पुराण शिव रहस्य खण्ड सभवकाण्ड 2.30 38

(84) कूर्म पुराण 1 1 3

(85) ए० डी० पुसालकर, कल्याण हिन्दू सस्कृत, अक 1 वर्ष 24 जिल्द सख्या 1, 1950 550

(86) कूर्म पुराण 1.1 16

(87) विष्णु पुराण 3 6.24

(88) कूर्म पुराण 1.1.16-20

(89) मत्स्य पुराण 75-53 58-59

(90) पद्म पुराण 4 111 95-98

(91) देवी भागवत 1.3.13-16

(92) मत्स्य पुराण 53 59.62

(93) आर० सी० हाजरा स्टडीज इन दि उपपुराणाज 1.12

(94) बलदेव उपाध्याय पूर्वोद्वधृत पृ० 566

(95) वही

(96) कूर्म पुराण

(97) पदम पुराण पाताल खण्ड 111 95-97

(98) दृष्टव्य विल्सन विष्णु पुराण का अनुवाद भाग–1 भूमिका ।

(99) सूक्त सहिता 1 13 18 दृष्टव्य एच० एन० दुबे पुराण समीक्षा पृ० 68

(100) दृष्टव्य जनरल आफ रायल, एशियाटिक सोसयटी लन्दन, 1914 पृ० 1027, 1028 बलदेव उपाध्याय पृ० 582

(101) पार्जिटर डायनेस्टी आफ द कलि ऐज पृ० 77-83

(102) बलदेव उपाध्याय पूर्वोद्वधृत पृ० 580-581

(103) छान्दोग्य उपनिषद 7 1 2, कूर्म पुराण 2 24 21-22

(104) एच० एन० दुबे पुराण समीक्षा पृ० 78

द्वितीय अध्याय

कूर्म पुराण का काल निर्धारण

कूर्म पुराण का काल निर्धारण

कूर्म, वामन वराह और मत्स्य इन चार महापुराणो का नामकरण विष्णु के अवतारो के नाम पर किया गया है। विष्णु भगवान ने कूर्म अवतार धारण कर इन्द्रद्युम्न नामक विष्णुभक्त राजा को इस पुराण का उपदेश दिया था। इसलिए इसे कूर्म पुराण के नाम से अभिहित किया गया है। इस मे सब जगह शिव ही मुख्य देवता के रूप मे वर्णित है और यह स्पष्ट उल्लिखित है कि ब्रह्मा विष्णु महेश मे किसी प्रकार का अन्तर नही है। ये एक ही ब्रह्म की पृथक–पृथक तीन मूर्तियॉ है। कूर्म पुराण मे शक्ति–पूजा पर भी बडा जोर दिया गया है। इस पुराण मे शक्ति के सहस्र नामो का उल्लेख किया गया है। विष्णु शिव के रूप मे तथा लक्ष्मी गौरी के रूप बतलाई गयी है। इस पुराण मे दो भाग है पूर्वभाग मे 52 उत्तर भाग मे 44 अध्याय है उपलब्ध ब्राह्मी सहिता मे 6000 श्लोक है। कूर्म पुराण को अष्टादश पुराणो मे परिगणित किया गया है। अधिकाश पुराणो मे इसे महापुराणो की सूची मे तथा कुछ स्थलो पर उपपुराणो की सूची मे निबद्व किया गया है अन्य कई महापुराण महापुराणो की सूचियो मे अनुपलब्ध है। इसके विपरीत कूर्म पुराण पुराणो मे वर्णित सभी सूचियो मे महापुराणो मे परिगणित है [1]। ये दोनो एक ही क्रम को मानते है।

नारदीय पुराण[2] मे भी कूर्म पुराण की विषय सूची का उल्लेख किया गया है। जिसमे कूर्म पुराण की ब्राह्मी संहिता की विषय सूची वर्तमान कूर्म पुराण की विषय सूची के साथ पूरी तरह मिलती है। नारदीय पुराण में कूर्म पुराण की जो विषय सूची दी गयी है वह अन्यत्र महापुराणो में परिगणित है। इस प्रकार वर्तमान कूर्म पुराण को महापुराण समझा जा सकता है।

निबन्ध ग्रथो मे कूर्म पुराण के नाम से पाये जाने वाले अनेक उद्धरण वर्तमान कूर्म पुराण मे उपलब्ध है। अत कूर्मपुराण वर्तमान रूप मे उपलब्ध कूर्म पुराण को कूर्म महापुराण के स्वरूप का परिचायक है।

पुराणो मे पुराण के पॉच लक्षण दर्शाये गये है जैसे सर्ग (सृष्टि), प्रतिसर्ग (प्रलय तथा पुन सृष्टि) वश, मनवन्तर, वशानुचरित। विष्णु पुराण मे इन पॉचो लक्षणो का वर्णन है। विष्णु को कहा गया है। महापुराणो मे इसका उल्लेख उपपुराणो की सूची मे नही मिलता है। इसी प्रकार कूर्म पुराण मे विष्णु पुराण की तरह पॉच लक्षणो का उल्लेख मिलता है।

यत्र धर्मार्थकामाना मोक्षस्य च मुनीश्वरा ।
माहात्म्यमखिल ब्रह्म ज्ञायते परमेश्वर ।।
सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वशो मन्वन्तराणि च।
वशानुचरित दिव्या पुण्या प्रासागिकी कथा[3]।।

इस तरह कूर्म पुराण जो सप्रति उपलब्ध है वह महापुराण है उपपुराण नही। विष्णु पुराण[4] मे प्राप्त महापुराणो की सूची मे कूर्म पुराण ने भी अपने को स्वय पन्द्रहवॉ पुराण बताया है [5]।

पुराणो को वैष्णव दृष्टि से तीन वर्गो मे विभक्त किया गया है– सात्विक, राजस और तामस पद्म पुराण[6] मे प्राप्त वैष्णव पुराणो का वर्गीकरण भविष्य[7] के वर्गीकरण से भिन्न है, पद्म पुराण स्वय वैष्णव पुराण है, परन्तु उसमे कूर्म पुराण को नरक प्रद तामस पुराण के रूप मे उल्लिखित किया गया है, लेकिन भविष्य पुराण मे कूर्म पुराण को राजस पुराण कहा गया है–

मात्स्य कौर्म तथा लैग, शैव स्कान्दं तथैव च,।
आग्नेय च षडेतानि तामसानि निवोध मे।।
सात्विका मोक्षदा प्रोक्ता राजसा स्वर्गदा शुभा ।
तथैव तामसा देवि निरयप्राप्तिहेतव·।। पद्म पुराण
मत्स्य· कूर्मो नृसिहश्च वामन शिव एव च।
वायु रपुरेतत्पुराणानि व्यासेन रचितानि वै ।। भविष्य पुराण
राजसाः षट् स्मृता वीर कर्मकाण्डमया भुवि। भविष्य पुराण

मत्स्य पुराण[8] के अनुसार तामस पुराण मे अग्नि एव शिव की महत्ता प्रतिपादित है।

स्कन्द पुराण की शकर सहिता मे शिव रहस्य खण्ड मे (अ 2) कूर्म पुराण शिव की प्रशास्ति करने वाले दस पुराणो मे समाविष्ट है

अत यदि पद्म पुराण के अनुसार कूर्म पुराण तामस वर्ग मे आता है तो शिव रहस्य खण्ड मे उल्लिखित शिव माहात्म्य के प्रतिपादन को मानना चाहिए तो पद्म पुराण के अनुसार नरकप्रद एव तामस, परन्तु भविष्य पुराण के अनुसार यह राजस पुराण कहा गया है तो इसे कर्मकाण्ड का प्रतिपादन करने वाला माना जाना चाहिए जैसा कि कूर्म पुराण मे उल्लिखित है[9]। कूर्म पुराण चार भागो मे विभक्त है

(1) ब्राह्मी (2) भगवती (3) सौरी एव (4) वैष्णवी इसकी चार सहिताये इन चारो सहिताओ के नाम के अतिरिक्त अन्य कोई उल्लेख नही है [10] धर्म अर्थ काम मोक्ष देने वाली–ब्राह्मी सहिता ही चारो वेदो से अनुमोदित है। नारदीय पुराण [11] के अनुसार कूर्म पुराण मे उल्लिखित सहिताओ की श्लोक सख्या इस प्रकार है –

(1) पूर्व विभाग 1– ब्राही सहिता 6000 श्लोक

(2) उत्तर विभाग 2 भाग

(2) भगवती सहिता 4000 श्लोक

(3) सौरी सहिता 2000 श्लोक

(4) वैष्णवी सहिता 5000 श्लोक

स्वय कूर्म पुराण भी उपरोक्त संहिताओ का उल्लेख इस प्रकार करता है–

इदं तु पञ्चदशम पुराण कौर्ममुत्तमम। चतुर्द्धा सस्थित पुण्यं सहिताना प्रभेदत ।।
ब्राह्मी भागवती सौरी वैष्णवी च प्रकीर्तिता ।
चतस्र· सहिता पुण्या धर्मकामार्थमोक्षदा ।। [12]

नारदीय पुराण द्वारा कूर्म पुराण की चार संहिताओ का जो विस्तृत विवरण प्रस्तुत करता है उसमें से कूर्म पुराण मे सहिताओ के नामो का उल्लेख के अतिरिक्त कोई अन्य

विवरण प्राप्त नही होते है। सूत का कहना है कि 6000 श्लोक वाली ब्राह्मी सहिता के अतिरिक्त कोई अन्य सहिता का सप्रति वर्णन नही किया गया है।

इय तु सहिता ब्राह्मी चतुर्वेदैस्तु सम्मिता।
भवन्ति षट् सहस्राणि श्लोकानामत्र सख्यया।।[13]

कूर्म पुराण स्वय इसे ब्राह्मी सहिता इसलिए कहता है कि इसमे परब्रह्म का स्वरूप यथार्थ रूप मे बताया गया है।

ब्राह्मी पौराणिकी चेय सहिता पापनाशिनी।
अत्र तत् परम ब्रह्म कीर्त्यते हि यथार्थत।।[14]

ऐसा प्रतीत होता है कि जिस समय रोम हर्षण सूत ने नैमिषारण्य मे ऋषियो से कूर्म पुराण को कहा उस समय वर्तमान कूर्मपुराण ब्राह्मी सहिता मात्र ही था। क्योकि ऐसा उल्लेख मिलता है कि–

एतत् पुराण परम भाषित कूर्मरूपिणा।
साक्षाद् देवादिदेवेन विष्णुना विश्व्योनिना।।[15]

नारदीय पुराण के अनुसार दो भाग एव चार सहिताओ वाले कूर्म पुराण मे 17000 श्लोको का उल्लेख मिलता है[16]। इसी प्रकार भागवत एव मत्स्य पुराणो मे भी कूर्म पुराण की इन चारो सहिताओ की श्लोक सख्या 17000 ही बतायी गयी है। परन्तु अग्नि पुराण के अनुसार कूर्म पुराण सिर्फ 8000 श्लोको वाली सहिता का उल्लेख करता है जबकि इससे ऐसा प्रतीत होता है कि अग्नि पुराण कूर्म पुराण के किसी सक्षिप्त रूप या ब्राह्मी सहिता वाले अश का उल्लेख कर रहा है।

डा० आर० सी० हाजरा के अनुसार कूर्म पुराण वैष्णव था तथा विष्णु पुराण, भागवत एव हरिवश की ही भॉति पाञ्चरात्र सम्प्रदाय का ग्रन्थ था। तीनो पुराणो से इसमे अन्तर यह था कि इन तीनो पुराणो मे शाक्त तत्व नही थे, परन्तु यह पुराण वैष्णव होते हुए शक्ति सम्प्रदाय से प्रभावित था। इस पुराण मे श्री को विष्णु की शक्ति, जगत का मूल इत्यादि नामो से अभिहित किया गया है। ब्रह्मा एव अन्य देवता गण इन्ही की शक्ति के अश से शक्तिमान है। देव, पितर, मनुष्य और पशुओ सहित कोई भी प्राणी इस माया का पार नही पा सकता[17]।

ऐसा कहा गया है कि पञ्चरात्रो की जयाख्य सहिता शक्ति तत्वो से मुक्त है जबकि इसमे तान्त्रिक क्रियाये पर्याप्त है। हाजरा के अनुसार अपनी जयाख्य सहिता की अपनी भूमिका (पृ० 26-34) मे श्री वी० भट्टाचार्य ने इसे लगभग 450 ई० की कृति माना है"। डा० हाजरा ने मूल या वैष्णव कूर्म पुराण की तिथि जयाख्य सहिता के आस–पास माना है। कूर्म पुराण पर शाक्ति प्रभाव पडने का समय 100 वर्ष मानकर कूर्म पुराण का समय 550 ई० मानते है।

डा० हाजरा के अनुसार मूलत वैष्णव कूर्म पुराण मे बाद मे शैवपाशुपतो के सिद्वान्तो का समावेश हो गया इस प्रकार जो कूर्म पुराण पहले पाञ्चरात्र सिद्वान्तो से युक्त था वह शैवपाशुपतो के सिद्वान्तो का परिचायक हो गया। इस प्रकार पाशुपत विचार के समर्थको ने विष्णु परक अध्यायो को बदल डाला। ऐसा उल्लिखित है कि श्री कृष्ण शकर को प्रसन्न करने के निमित्त उपमन्यु के आश्रय गये और वहॉ उपमन्यु ने उन्हे पाशुपत व्रत की दीक्षा दी[18]। पाशुपतशैवो के साम्प्रदायिक चिन्ह त्रिपुण्ड्र का विधान है ईश्वर गीता आठ[19] जो मूलत वैष्णव रही होगी।

पाशुपतो द्वारा सस्कृत सग्रहीत, सम्पादित कूर्म पुराण मे शाक्तो का केवल 'नाम' नामक वर्ग का उल्लेख है किन्तु याज्ञवल्क्य स्मृति के टीकाकार अपरार्क, वाम और दक्षिण दोनो भेदो से सुपरिचित है। कूर्म पुराण के सम्बन्ध मे कहा जाता है कि यह आगमो से परिचित प्रतीत नही होता। आगमो का प्रचार लगभग 800 ई० मे हुआ [20]। इस प्रकार कूर्म पुराण 800 ई० से परवर्ती नही हो सकता। डा० हाजरा के अनुसार मूल वैष्णव कूर्म पुराण तथा इसका सशोधित पाशुपत रूप क्रमश 550-650 ई० के मध्य तथा 700-800 ई० के मध्य के काल मे बने हैं।

इस प्रकार ऐसे उल्लेख है कि जयाख्य–सहिता में शाक्त प्रभाव का अभाव तथा कूर्म पुराण मे पाशुपतो के दक्षिण वर्ग का उल्लेख का अभाव केवल निषेधात्मक हेतु ही है। अत उन्हे इस पुराण के समय के विषय मे निश्चित तथा वैध साक्ष्य नही माना जा सकता है।

डा० हाजरा ने कूर्म पुराण के स्मृति अध्यायो के जो कि उनके विशेष विवेच्य विषय थे। उनके विचार से ईश्वर गीता[21] तथा अध्याय 43 के बीच अन्य अध्याय नही थे। अत व्यास अध्याय कूर्म पुराण के पुन सस्करण के समय पाशुपतो द्वारा प्रक्षिप्त किये गये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) लिग पुराग 1 39 61-64

शिव पुराण उमा सहिता 44-120-122

(2) नारदीय पुराण 1 106

(3) विष्णु पुराण 1 1 24-25

(4) विष्णु पुराण 3 6 21-24

(5) कूर्म पुराण 1 1 21

(6) आनन्दापुराण 6 2 63-81

(7) भविष्य पुराण 3 3 28.10-15

(8) मत्स्य पुराण 53 69

(9) कूर्म पुराण 1 1 59-60, 95-118, 2-60, 97, 3. 24, 27

(10) कूर्म पुारण 1 1 21-22

(11) नारदीय पुराण 1 106

(12) कूर्म पुराण 1 1.21-22

(13) कूर्म पुराण 1.1 23

(14) कूर्म पुराण 2 44 132

(15) कूर्म पुराण 2 44 122

(16) नारदीय पुराण 106-3

(17) कूर्म पुराण 1 1

(18) कूर्म पुराण 1 24-48, 1 2 100

(19) कूर्म पुराण 2 1 11

(20) हाजरा तत्रैव पृ० 70

(21) ईश्वर गीता 2 1-11

तृतीय अध्याय

कूर्म पुराण में वर्णित भूगोल

कूर्म पुराण में वर्णित भूगोल

भुवन कोश विवरण

किसी देश के समाज राजनीति और धर्म आदि सास्कृतिक जीवन के अध्ययन के लिए उस देश का भौगोलिक सरचना का ज्ञान महत्वपूर्ण होता है। यथार्थ भौगोलिक ज्ञान के अभाव मे किसी विशिष्ट देश के समाज राजनीति और धर्म आदि सास्कृतिक जीवन का सम्पर्क परिचय प्राप्त करना सर्वथा सम्भव है । अन्य पुराणो तरह कूर्म पुराण मे भी सात द्वीप, सात सागर वसुन्धरा का वर्णन पाया जाता है । द्वीपान्तर्गत वर्षो की वर्णन उनकी सीमा और विस्तार आदि के विषय मे इतना ही कहना होगा कि आधुनिक परिमाणो मे समाविष्ट नही हो सकते । इस पुराण मे देश, नगर, वन, पर्वत, नद, नदी का वर्णन है। इस विस्तार पूर्वक वर्णन इस भुवनकोश अध्याय मे किया गया है ।

पुराणो मे आख्यात 'लोक' शब्द का प्रयोग 'पृथ्वी' का बोधक माना जाता है । त्रलोक, चतुर्लोक, अथवा सप्तलोक का उल्लेख पुराणो मे प्राय प्रयुक्त किया गया है । ये लोक इस आशय की ओर संकेत करते है कि पुराणो मे भूलोक सम्बन्धी अनन्त ज्ञान राशि सग्रहीत है । कूर्म एव विष्णु पुराणो मे ब्रह्मण्ड मे स्थित सात लोको की क्रमिक अवस्थिति, जीवन गति तथा उनकी उपलब्धियो का वैज्ञानिक विवेचन मिलता है[1] कूर्म पुराण, विष्णु पुराण। इन लोको की स्थिति क्रमश. एक दूसरे के ऊपर परिकल्पित है, जिसमे भूलोक सबसे नीचे स्थित है तथा भूलोक से भी नीचे पाताल स्थित है[2] ।

कूर्म पुराण मे उल्लिखित सप्तलोक किचित भिन्नता के साथ उल्लिखित है । एक स्थल पर भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, महर्लोक, जनलोक, तपलोक तथा सप्तलोक का उल्लेख मिलता है [3]।

भूलोक सूर्य और चन्द्रमा की किरणो के द्वारा जहा तक का भाग प्रकाशित होता है उस भाग को पुराणो मे भूलोक कहा गया है [4]।

भूर्लोक सूर्य के विस्तृत परिमण्डल से भूलोक का जितना परिमाण है भूर्लोक का उतना विस्तार है[5]।

स्वर्लोक आकाश मेँ ऊपर की ओर जहॉ ध्रुव तारा स्थित है वहॉ तक मण्डल को स्वर्लोक कहा जाता है वही वायु की नेमियॉ अर्थात वायु के भ्रमण के अरे है । वही आवा प्रवह, अनुवह, सवह, विवह और उसके ऊपर परावह एव तदुपरि परिवह नामक वायु की सात नेमियॉ अर्थात चक्र अरे स्थित है[6] ।

सूर्य का व्यास नव सहस्त्रयोजन का है और उस व्यास का तीन गुना सूर्य के मण्डल का परिमाण है[7]। सूर्य के एक लक्ष योजन ऊपर के भाग मे चन्द्रमा का मण्डल है [8]। चन्द्रमा से लक्ष योजन पर स्थित सम्पूर्ण नक्षत्र मण्डल उल्लिखित है[9]। नक्षत्र मण्डल से दो लाख योजन की दूरी पर बुध है । बुध से दो लाख योजन दूरी पर शुक्र है [10]। शुक्र से उतने ही प्रमाण पर मगल की स्थिति है [11]। वृहस्पति से दो लक्ष योजन दूरी पर शनैश्चर स्थित है [12]। आलोचित पुराण मे ग्रहो के इस मण्डल से लक्ष योजन दूर सप्तर्षिमण्डल प्रकाशित है[13]। सप्तर्षिमण्डल से एकलक्ष योजन ऊपर ध्रवु स्थित है। ध्रुव समस्त ज्योतिष चक्र का केन्द्र है। उसमे धर्म स्वरुप नारायण विष्णु स्थित है[14]। सूर्य और चन्द्रमा के तुल्य राहु उन दोनो के नीचे भ्रमण करता है [15]। पृथ्वी की छाया को लेकर मण्डलाकार निर्मित राहु का जो तृतीय वृहत्स्थान है वह तमोमय है[16]। चन्द्रमा का विस्तार सूर्य के विस्तार का दो गुना अर्थात 18 सहस्त्र योजन का उल्लेख मिलता है[17]। सूर्य और चन्द्रमा के तुल्य राहु उन दोनो के नीचे भ्रमण करता है [19]। चन्द्रमा के विस्तार का सोलहवॉ भाग शुक्र का विस्तार कहा गया है शुक्र के चौथे भाग कम पर वृहस्पति का विस्तार है। वृहस्पति के चतुर्थांस कम मगल एव शनि का मण्डल कहा गया है। मंगल एव शनि इन दोनो के मण्डल तथा विस्तार से कम चतुर्थांस भाग बुध का मण्डल है[20]। जो तारा एव नक्षत्र को शरीरधारी कहा गया है वे सभी मण्डल एव विस्तार मे बुध के समान ही है[21]।

कूर्म पुराण मे पाताल लोक का भी उल्लेख मिलता है। महातल, रशातल, तलातल, सुतल, नितल, वितल, तल ये अधोलोक कहे गये है। इन पातालो के नीचे मायादि नामक नरक का उल्लेख मिलता है।

पौराणिक काल गणना

कूर्म पुराण के अनुसार कल्प के आदि मे ब्रह्म इस जगत की सृष्टि करते है। इनकी सृष्टि का वर्णन बहुत वर्षो मे भी नही हो सकता [22]। फिर भी विस्तृत विवरण उपलब्ध है ।

पन्द्रह निमेष की एक काष्ठा कही जाती है। तीस काष्ठा की कला एव तीस कला का एक मुहूर्त की अवस्था होती है [23]। तीस मुहूर्तो का एक मानवीय अहोरात्र कहा गया है। तीस अहोरात्र का दो पक्षो वाला एक महीना होता है [24]।

उन छ (मासो का एक) अयन एव दक्षिण तथा उत्तर नामक दो अयनो का एक वर्ष होता है। दक्षिणायन देवताओ की रात्रि एव उत्तरायण दिन होता है [25]। बारह दिव्य सहत्र वर्षो का कृत त्रेतादि नामक एक चतुर्युग होता है[26]। चार हजार वर्षो का कृतयुग कहा जाता है चार सौ वर्षो की कृतयुग की सन्ध्या तथा सन्ध्यास (त्रेतायुग से सन्धि का काल) होता है[27]। कृत सन्ध्यास को छोडकर तीन सौ, दो सौ एव एक सौ दिव्य वर्षो का त्रेतादि युगो का सध्या तथा सन्ध्याश होता है[28]। काल का ज्ञान करने के लिए सन्ध्याशो से रहित तीन, दो एव एक सहस्त्र वर्षो का त्रेता, द्वापर, एव कलियुग कहा गया है[29]। आलोचित पुराण मे यही बारह सहद्रो वर्षो का कुछ अधिकता पूर्ण काल परिमाण कहा जाता है। उसके इकहत्तर गुना (काल) को मनु का अन्तर कहते है [30]। ब्रह्मा के (एक) दिन मे चौदह मनु होते है। वे सभी स्वायम्भुव एव तदन्तर सावार्णिकादि मनु है [31]। उन नरेश्वरो द्वारा इस सात द्वीपो एव पर्वतो वाली सम्पूर्ण पृथ्वी का पूरे एक हजार युगो तक परिपालन होता है [32]। एक मन्वतरो के अनुसार सभी (मनु) के अन्तरो का वर्णन किया गया है । प्रत्येक कल्प (पूर्व) कल्प के (अनुसार) ही होता है [33]। एक कल्प का ब्रह्म का दिन एव उतने की ही रात्रि होती है। मनीषियो ने एक सहस्त्र चतुर्युग का कल्प कहा है [34]। तीन सौ साठ कल्पो का ब्रह्मा का वर्ष होता है । उस (तीन सौ साठ कल्पो वाले काल के) सौ गुने (काल) को पर नामक (काल)

कहते है [35]। ब्रह्मा की अपनी परिमाण के अनुसार सौ वर्ष की आयु कही गयी है । उसी के नाम पर है। उसके आधे को परार्द्ध कहते है [36]।

काल के अन्त मे समस्त तत्वो का अपने हेतुभूत प्रकृति मे लय होता है । इसी से विद्वान लोग इसको प्राकृत प्रतिसञ्चर अर्थात प्राकृत प्रलय कहते है [37]। ब्रह्मा, नारायण एव ईश का प्रकृति मे लय हो जाता है । काल के योगवश पुन (उनका) आविर्भाव कहा जाता है[38]।

सृष्टि का वर्णन

आलोचित पुराण मे सृष्टि विषयक वर्णन विस्तृत रुप मे प्राप्त होता है । सर्वप्रथम ईश्वर ने जल को उत्पन्न किया । उस समय स्वर्ण तुल्य वर्ण वाले, अतीन्द्रिय एव सहस्त्र मस्तको वाले नारायण नामक पुरुष स्वरूप ब्रह्मा जल मे सो रहे थे [39]। ''यत'' अर्थात जल को 'नार' नाम से कहा गया है । यत वे (जल) नर का 'अयन' अर्थात आश्रय स्थान है अतएव (उन्हे) नारायण कहा जाता है । सहस्त्र युगो के तुल्य (प्रलयकालीन) रात्रि के काल के भोग करने के उपरान्त (उस प्रलय कालीन) शनि का अन्त होने पर वे (नारायण देव) सृष्टि के लिए ब्रह्मत्व ग्रहण करते है[40]। तदनन्तर उस काल मे विलीन पृथ्वी को अनुमान द्वारा जानकर प्रजापति ने उसके उद्धार की कामना की[41]। जल की क्रीडा के लिए सुन्दर, मन से भी अगम्य ब्रह्मनामक वाक्य स्वरूप सुन्दर वाराह का रुप धारण किया [42]। पृथ्वी के उद्धार हेतु रसातल मे प्रवेश कर पृथ्वी धारक नारायण) ने अपनी दाढ द्वारा इसे ऊपर निकाला [43]। उनकी दाढ के ऊपरी भाग मे स्थित पृथ्वी को देखकर सिद्ध एव ब्रह्मर्षि लोग पौरुष प्रकट करने वाले तीर की स्तुति करने लगे [44]।

तब बराह शरीरधारी ने अनुग्रह कर पृथ्वी के स्वामी को अपने स्थान पर लाये उस जल की बाद के ऊपर स्थित महती नौका तुल्य पृथ्वी अपने शरीर के विस्तार के कारण डूबती नहीं है [45]। इस प्रकार कहा जाता है कि पृथ्वी को समतल बनाने के बाद पूर्व सृष्टि के समय दग्ध हुए पर्वतो को पुन स्थापित किया [46]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि सृष्टि विषयक विचार करने पर एक बुद्धि प्रकट हुई [47]। तम, मोह, महामोह, तामिस्र एव अन्ध तामिस्र नामक पॉच वर्षो वाली अविद्या उत्पन्न हुई [48]। तत्पश्चात् अन्धकारमय बीज के रूप मे एव लोको से आवृत सृष्टि पॉच रूपो मे स्थित हुई [49]। ज्ञान से शून्य चेतन रहित वृक्ष अथवा पर्वतो को मुख्य सर्ग कहा जाता हे [50]। इस प्रायोजन की पूर्ति हेतु सृष्टि मे पशुपक्षियो की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है [51]। इसे असाधक जानकर अन्य सर्ग उत्पन्न किये इसको भी भागो मे विभक्त किया गया है [52]। सर्ग पर विचार करने के बाद भूताादिको की सृष्टि की गयी है [53]। आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि ब्रह्मा ने अनेक सर्गो को उत्पत्ति के बाद अपने ही सदृश मानस पुत्रो सनक, सनातन, सनन्दन, ऋभु, एव सन्तकुमार को उत्पन्न किया[54]। और इन पॉचो को सृष्टि के कार्य मे लगाकर माया से मोहित ब्रह्मा तप करने लगे परन्तु कुछ प्राप्त न होने की दशा मे दु ख के कारण क्रोध उत्पन्न हुआ। क्रोध युक्त उनकी ऑखो से ऑसू की बूँदे गिरी[55]। तब ब्रह्मा की टेढी भ्रुकुटियो वाले ललाट से नील लोहित महादेव उत्पन्न हुए [56]। ब्रह्मा के अनुरोध पर शिव ने रुद्रो को उत्पन्न किया इन्ही रुद्रो से ब्रह्मा ने जन्म एव मृत्यु युक्त प्रजा को उत्पन्न करने को कहा परन्तु उन रुद्रो ने ऐसी प्रजा उत्पन्न करने से मनाकर दिया और कहा कि अशुभ प्रजाओ आप स्वय उत्पन्न करे [57]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि ब्रह्मा ने रुद्र को सृष्टि कार्य से हटाकर जल, अग्नि, अन्तरिक्ष, आकाश, वायु, पृथ्वी, नदियॉ, समुद्र पर्वत वृक्ष, वनस्पति, लव, काष्ठ कला मुहूर्त, दिन, रात्रि, पक्ष महीना, अयन वर्ष एव युगादि (नामक) स्थानाभिमनियो को उत्पन्न कर साधको की सृष्टि की जिसमे मरीचि, भृग, अगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रुत दक्ष, अत्रि वशिष्ठ, धर्म एव सकल्प को उत्पन्न किया [58]। ब्रह्मा ने प्राण से दक्ष को नेत्र से मारीचि को, शिर से अंगिरा को, हृदय से भृगु को, कानो से अत्रि (ऋषि) व्यवसाय से धर्म तथा सकल्प से सकल्प को उदान से पुलस्त्य को व्यान से पुलह को, अपान से अव्यग्र क्रतु को एव वायु से वशिष्ठ की उत्पत्ति का उल्लेख किया है [59]। जल मे देवता, असुर पितर एव मनुष्य की सृष्टि की इच्छा करने वाले प्रभु ने अपनी आत्मा को सयुक्त कर, ब्रह्मा से तमोगुण की मात्रा को उद्रेक हुआ। जिससे उनकी जघा से असुर पुत्र उत्पन्न हुए असुरो की उत्पत्ति के बाद

पुरुषोत्तम ने वह शरीर को छोड दिया उनसे छोडा गया वह शरीर तत्काल रात्रि बन गया क्योकि उसमे अन्धकार की अधिकता होती है उस समय प्रणेय सोती है[60]। इसके बाद तब ब्रह्मदेव ने दूसरी शरीर धारण किया जिससे उनके मुख से देवता उत्पन्न हुए। तब उन्होने उस शरीर को भी छोड दिया वह छोडा हुआ शरीर, सत्वगुण की अधिकता के कारण दिन हुआ [61]। ब्रह्म ने पुन शरीर धारण किया तो पितरो को उत्पन्न किया है, और उसे छोडा तो उससे सन्ध्या हो गयी [62]। इस प्रकार ऐसा कहा जाता है कि इसी से दिन देवताओ को, रात्रि असुरो की प्रिय होती है। उन दोनो के मध्य पितरो की सन्ध्या होती है। इसी से सभी देवता, असुर मनु, एव मानव सदा रात्रि एव दिन के मध्य सन्ध्या रुपी शरीर की उपासना करते है [63]। इसके बाद ब्रह्मा ने रजोगुण युक्त शरीर को धारण कर उससे रजोगुण युक्त मनुष्य उत्पन्न हुए। तब ब्रह्मा ने उस शरीर को भी छोड दिया तो वह शरीर ज्योत्सना (प्राक सन्ध्या) हो गई [64]। तब ब्रह्मा ने तम एव रजोगुण की अधिकता से काला शरीर धारण कर राक्षसो को उत्पन्न किया इसी प्रकार सर्प, यक्ष, भूत एव गन्धर्व उत्पन्न किया। ऐसा कहा जाता है कि अवस्था से पक्षियो की सृष्टि, वक्षस्थल से भेडो, मुख से बकरियो को एव उदर से गायो को पैरो से हाथियो, घोडो, गदहो, नीलगायो, मृगो ऊँटो, खच्चरो, मृग विशेष एव अन्य प्राणियो को उत्पन्न किया तथा रोमो से फलमूल वाली औषधियॉ उत्पन्न हुई [65]। ब्रह्मा द्वारा की गयी अन्य उत्पत्ति इस प्रकार है । प्रथम (पूर्व) मुख से गायत्री छन्द, ऋचाओ, त्रिवृत, साम, रथन्तर, यज्ञो मे अग्निष्टोम की उत्पत्ति हुई। दक्षिण मुख से यजुर्वेद त्रैष्टुम, छन्द, पन्द्रह छन्दो के समूह आदि, पश्चिम मुख से सामवेद, जगती छन्द, सहस्त्र छन्दो के समूह, वैरुप एव अतिरात्र नामक यज्ञ की सृष्टि का उल्लेख है। उत्तर मुख से अथर्ववेद के इक्कीस आप्तोर्याम (नामक छन्द समूह) अनुष्टुम छन्द एव वैराज नामक यज्ञ की सृष्टि हुई[66]।

आलोचित पुराण मे चर एव अचर प्राणियो के भी सृष्टि का उल्लेख मिलता है। जिसमे यक्षो, पिशाचो, गन्धर्वो एव सुन्दर अप्सराओ, नर किन्नरो, राक्षसों, पक्षियो, पशुओ, मृगो एव सर्पो की उत्पत्ति हुई ।

महातल

महातल नामक पाताल मे अन्नत (नाग) मुचकुन्द एव पाताल स्वर्गवासी राजा बलि (उसी महातल नामक) पाताल मे रहते है[67]। ऐसा उल्लेख मिलता है कि महातल सभी रत्नो से सुशोभित तथा अनेक प्रकार के प्रसादो और शुभ्र देवमन्दिरो से युक्त है [68]।

रसातल चट्टानो से युक्त पूर्ण तलातल बालूका से पूर्ण , सुतल पीतवर्ण, नितल मूगे के रग का, वितल, शुक्तवर्ण एव तल नामक पाताल कृष्ण–वर्ण का कहा गया है[69]।

रसातल

सुपर्ण (गरूड), वासुकि (नाग) एव अन्यान्य (महात्मागण) रसातल मे रहते है [70]।

तलातल

विरोचन हिरण्याक्ष (राक्षस), एव तक्षकादि (नाग) सभी प्रकार की शोभा से सम्पन्न तलातल नामक मे रहते है [71]।

सुतल

गुरूडादि पक्षी एव कालिनेमि प्रभृति, श्रेष्ठ असुरगण सुतल नामक पाताल मे निवास करते है [72]।

नितल

तारक अग्निमुख इत्यादि यवन, महान्तकादि नाग, एव असुर प्रहलाद नितल नामक पाताल मे रहते है [73]।

वितल

कम्बल नामक श्रेष्ठ सर्प, महाजम्भ, एव वीर हयग्रीव वितल नामक पाताल मे रहते है[74]।

तल

शकुकर्ण, नमुचि नामक दैत्यो तथा अन्य अनेक प्रकार के नाग तल नामक सुन्दर पाताल मे रहते है [75]।

मयादि नामक नरक

उन पातालो के नीचे मयादि नामक नरक कहे गये है उन नरको मे पापी लोग यातना पाते है। जिनका वर्णन नही हो सकता [76]। पाताल के नीचे शेष नामक विष्णुमूर्ति विद्यमान जिसे कालाग्निरुद्र, योगात्मा, नारसिह, माधव अनन्त देव एव नाग रूपी जर्नादन भी कहा जाता है । यह सब उन्ही के आधार पर है। एव वे कालाग्नि के आश्रित है ।

द्वीप वर्णन

कूर्म पुराण के अनुसार पृथ्वी का विस्तार पचास करोड योजन मे है जो चारो ओर से आभूषण की भॉति सातो द्वीपो से घिरी हुई है, [77] जो सातो समुद्रो से युक्त है [78]। इस भूलोक मे जम्बू, प्लक्ष, शाल्मल, कुश, क्रौञ्च, शाक एव सातवॉ पुष्कर नामक द्वीपो का उल्लेख मिलता है। इसमे जम्बूद्वीप प्रधान है[79]। ये सात द्वीप सातो समुद्रो से घिरे हुए है [80]। इनके नाम है क्षारोदक, इक्षुरसोदक, सुरोदक, घृतोदक, दध्योदक, क्षोरोदक एव स्वादूदक है[81]।

वैयाकरण पतजति ने भी सात द्वीपो की मान्यता दी है। सप्त द्वीप सुमति, महाभाष्य (किलहॉर्न) पृ० 9 ब्रह्मण्डपुराण मे भी सात ही द्वीपो की प्राथमिकता घोषित की गई है। सप्तद्वीपवती वही [82]। पुराणन्तरीय प्रतिपादन सात से बढाकर नौ द्वीपो को सिद्ध करता है। ससागरा नवद्वीपा दत्ता भवति मेदनी, पद्म पुराण स्वर्ग[83] महाभारत मे तेरह द्वीपो का वर्णन मिलता है। त्रयोदश समुद्रस्य द्वीपानश्नन्पुरुवा आदि[84] बौद्ध परम्परा मे केवल चार द्वीपो की ही अधिमान्यता है। प्रारम्भिक बौद्ध ग्रन्थो मे पृथ्वी पर महाशुन्य तथा आकाश मे चक्रवालो की परिकल्पना मिलती है, जिनके योग से पृथ्वी के द्वीपो का सृजन हुआ है। इन चक्रवालो अथवा गोलाकार सृष्टियो के मध्य मेरू पर्वत स्थिति माना गया है। पृथ्वी इन्ही चक्रवालो मे से एक है जो चारो ओर से समुद्र आवृत है।

'अनन्तानि वक्कवालानि अनन्ता लोक धातुयो भावा

अनन्तेन बुद्धजपेन अवेदि अञ्जासि पटिविज्झ।' विसुद्धिभग्ग, [85]

'सागरेण परिक्खित्त चक्क च परिमण्डलम्' जातक जिल्द 3 पृ०[86]।

जिसमे चार महाद्वीप परस्पर समान दूरी पर स्थित कहे गये है। सुमेरु पर्वत के उत्तर मे कुरु अथवा उत्तर कुरू, दक्षिण मे जम्बू पूर्व मे पूर्व विदेह एव पश्चिम मे अपर गोयान द्वीपो का उल्लेख मिलता है। प्रस्तुत स्थल पर विचारणीय है कि कुरू अथवा उत्तर कुरू एव जम्बू द्वीपो का नाम बौद्ध एव ब्राह्मण ग्रन्थो के समान रूप से विवृत है परन्तु पूर्व विदेह एव अपर गोयन द्वीपो का उल्लेख पुराणोतिहास ग्रन्थो मे अप्राप्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनो द्वीप बौद्ध ग्रन्थकारो के बौद्ध धर्म से प्रभावित क्षेत्रो मे अप्राप्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनो द्वीप बौद्ध ग्रन्थकारो के बौद्ध धर्म से प्रभावित क्षेत्रो को सम्मिलित करते हुए वर्तमान नेपाल की तराई के भू–क्षेत्रो को सकेतित करते है[3]। अपने मत को स्पष्ट करते हुए डा० डी० सी० सरकार का कथन है कि पूर्व एव अपर शब्द जो विदेह और गोयान द्वीपो के विशेषण के रुप मे विवृत है, पूर्व एव पश्चिम महाद्वीपो की ओर सकेत करते है । जिनका प्रयोग बौद्ध ग्रन्थो मे उत्तर कुरू द्वीप मे जुडे उत्तर शब्द की अुनरूपता को व्यक्त करते है । वैजन्यती मे पूर्व गन्धिक एव अपरगन्धिक का उल्लेख सम्भवत पूर्व विदेह तथा गोयन द्वीपो के लिए मिलता है [87]।

प्राचीन जैन ग्रन्थो मे पृथ्वी एव द्वीप विषयक वर्णन पुराणो मे विवृत सम्तद्वीपात्मक उल्लेखो के अनुरूप है । परन्तु कतिपय जैन पुराणो मे पृथ्वी पर आठ, नौ अथवा उन्नीस द्वीपो का वर्णन मिलता है ।

जम्बू द्वीप

कूर्म पुराण के अनुसार सभी द्वीपो के मध्य मगलमय जम्बूद्वीप स्थित है । उसके मध्य मे सुनहले रग का महामेरू पर्वत सुशोभित है[88]। इसके दक्षिण मे हिमवान हेम कूट एव निषध[89] और प्रथम भारत वर्ष कि पूरुष वर्ष एव हरिवर्ष भी स्थित है [90]। उत्तर मे नील, श्वेत, एव श्रृगी नामक वर्ष पर्वत है [91] एव रम्यक हिरण्मय एव उत्तर कुरु वर्ष स्थित है [92]। इनमे प्रत्येक की लम्बाई, चौडाई नव सहस्र योजन की है। इसी के मध्य इलावृत्त वर्ष है। मेरु का

वृत्तव्यास की ऊँचाई दस सहस्त्र योजन है[93]। मेरू के पूर्व मे भद्राश्व, एव पश्चिम मे केतुमाल नामक दो वर्ष है। जिनके मध्य मे इलावृत्त वर्ष है [94]। इस द्वीप मे कदम्ब, जम्बू पिप्पल एव वट वृक्ष है इसलिए इसका नामकरण जम्बूद्वीप हुआ है [95]। महाभारत मे इसको 'सुदर्शन द्वीप' के नाम से समाख्यात किया गया है। इस सज्ञा से समाख्यात होने के कारण यह है कि इस द्वीप को चारो ओर से सुर्दशन नामक जम्बू वृक्ष ने परिवृत्त कर रखा है। उस वनस्पति के विशिष्ट नाम पर ही यह जम्बूद्वीप हुआ है [96]।

उस पर्वत पर फल के रस को जम्बूद्वीप प्रवाहित होती है [97]। इसके जल का पान करने से वहॉ रहने वाले स्वस्थ चित्त मनुष्यो के लिए स्वेद, दुर्गन्धि, वार्धक्य एव इन्द्रियहीनता नही होती है [98]। अधिकाश पुराणो मे भारत एव उनके नव द्वीपो को जम्बूद्वीप के दक्षिण मे बताया गया है। अधिकाश पुराणो मे भारतवर्ष एव उनके नव द्वीपो को जम्बूद्वीप के दक्षिण मे स्थित बताया गया है। ऐसी स्थिति मे भारतवर्ष के उत्तरी भूक्षेत्रो मे जम्बू द्वीप की स्थिति परिकल्पित की जा सकती है। जिसमे इस द्वीप के अन्य विभाग (वर्ष) स्थित थे। कतिपय विद्वानो ने कुख्वर्ष का समीकरण टॉलमी द्वारा उद्धृत 'ओवारो कोराई' से करने की चेष्टा की है जिसे वर्तमान चीनी तुर्किस्तान को 'तारिम–घाटी' का क्षेत्र माना जाता है [99]। ड्रेगन शब्द का अर्थ अग्रेजी शब्द कोष मे मुँह से ज्वाला पैदा करने वाला मकर या सर्प मिलता है, जो प्राय घोटक–मुख अर्थात घोडे के मुख के सदृश बताया जाता है। अत भद्राश्व वर्ष अर्थात घोटक मुख के देश का चीन देश के साथ समीकरण पूर्णतया यौक्तिक प्रतीत है। केतुकाल वर्ष को मेरू पर्वत के चतुर्दिक इलावृत वर्ष के पश्चिम मे अवस्थित कहा गया है। इस क्षेत्र का समीकरण वर्तमान आवसन अथवा वक्षु नदी के निकटवर्ती भूक्षेत्रो से किया जाता है। यह नदी आमू दरिया (वर्तमान अराल साग) मे जाकर मिलती थी। हिरण्य वर्ष को श्वेत पर्वत के उत्तर मे स्थित क्षेत्र कहा गया है। इसे रम्यक वर्ष की उत्तरी सीमा–क्षेत्र आख्यात किया गया है। इसकी पहचान एशिया महाद्वीप के बदक्शॉ प्रदेश से की जाती है। किपुरूवर्ष की स्थिति हिमवत पर्वत के उत्तर हेमकूट पर्वत के दक्षिण तथा हरिवर्ष के दक्षिण थी। इस वर्ष की पहचान हिमालय के अन्तर्वर्ती चतुर्दिक क्षेत्रो से की जा सकती है जो परम्परया किन्नरो का देश माना जाता है ।

प्लक्ष द्वीप

आलोचित पुराण मे जम्बूद्वीप के दुगुने विस्तार मे क्षीर सागर को आवृत्त कर प्लक्षद्वीप का उल्लेख किया गया है [100]। वामन पुराण मे प्लक्ष द्वीप को जम्बूद्वीप से चार गुना अधिक विस्तृत बताया गया है । वामन पुराण [101] प्लक्षद्वीप मे भी कुल सात पर्वतो का उल्लेख मितला है । हला गोगेद, दूसरा चन्द्र, तीसरा, नारद, चौथा, दुन्दुभि, पॉचवा सोम छठवॉ ऋषभ सातवॉ वैभ्राज है [102]। उन पर्वतो पर जनपदो का भी उल्लेख मिलता है जहॉ पर किसी प्रकार की कोई मानसिक पीडा एव रोग नही है एव वहॉ के पुरुष किसी भी प्रकार का पाप कर्म नही करते[103] । वहॉ प्रवाहित सात नदियो का भी उल्लेख मिलता है, जिनका क्रम इस प्रकार है अनुतप्ता, शिखी, विपाया, त्रिदिवा, कृता, अमृता एव सुकृता नाम से है[104]। इसके अतिरिक्त अन्य छोटी नदियॉ एव सरोवर भी है। वहॉ कि निवास पुरुष दीर्घायु होते है[105] डी० सी० ने भी इन्ही सात नदियो का उल्लेख किया है परन्तु एक नदी के नाम से कृता के स्थान पर क्रुमु कहा गया है।

प्लक्ष द्वीप मे आर्यक, कुख, विदश, एव भावी नामक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र कहे गये है[107]। वहॉ के निवासी भगवान सोम की उपासना करते है। वे सभी धर्मनिरत एव प्रसन्न चित्त होते है। बिना रोग के पॉच सहस्त्र वर्षो तक जीवित रहते है [108]।

शाल्मलिद्वीप

कूर्म पुराण मे प्लक्षद्वीप के दुगुने विस्तार मे इक्षुरस से आवेष्टित कर शाल्मलिद्वीप स्थित है[109]। वामन पुराण से भी इसकी सम्पुष्टि होती है[110]। शाल्मलिद्वीप मे भी सात वर्ष, सात पर्वत पर सात नदियो का उल्लेख मिलता है[111]। इसके सात पर्वतो के नाम कुमुद, उन्नत, वलाहक, द्रोण, कक, महिष एव ककद्वान नामक पर्वत कहे गये हैं [112]। प्रधान नदियो के नाम इस प्रकार है— योनि, तोया, वितृष्णा, चन्द्रा, शुक्ला, विमोचनी, निवृत्ति [113]। वहॉ पर लोभ एव क्रोध की स्थिति नही है। मृग की व्यवस्था भी नही है। वहॉ के प्राणी निरोग जीवन व्यतीत करते है [114]। वहॉ के प्राणी वायुदेव की आराधना करते है [115]। इस द्वीप मे ब्राह्मण, कपिल, क्षत्रिय अरूण, वैश्य पीत एव शूद्र कृष्ण कहे गये है [116]।

कुशद्वीप

कूर्म पुराण मे शाल्मलद्वीप के दुगुने विस्तार मे चारो तरफ से सुरासागर को आवेष्टित कर कुशद्वीप स्थित है [117]। वहाँ पर भी सात पर्वतो के उल्लेख मिलते है। उनके नाम विद्रुम, हेम, द्युतिमान, पुष्पवान्, कुशेशय, हदि एव मन्दर है [118]। इसी प्रकार धुतपापा, शिक, पवित्रा, समता, विद्युदम्भा एव मही नामक नदियो का उल्लेख मिलता है [119]। इसके अतिरिक्त अन्य सैकडो स्वच्छ नदियाँ है जिनके तट पर वहाँ प्राणी ब्रह्म की उपासना करते है [120]। वहाँ के जातियो के सम्बन्ध मे उल्लेख मिलता है। जिन्हे ब्राह्मण, द्रविण, क्षत्रिय, शुष्मिण, वैश्य स्नेह, एव शूद्र को मन्देह कहा गया है[121]। वहाँ के प्राणी ज्ञान सम्पन्न गुण युक्त, कर्म करने वाले तथा यज्ञो के द्वारा ब्रह्मा की पूजा करने वाले कहे गये है जिससे उन्हे ब्रह्म के सानिध्य एव मोक्ष की प्राप्ति होती है [122]।

क्रौंञ्चद्वीप

आलोचित पुराण मे कुश द्वीप के दुगुने विस्तार मे चारो ओर धृत सागर को आवेष्ठित कर क्रौञ्च द्वीप स्थित है का उल्लेख मिलता है[123]। वहाँ पर भी सात पर्वतो का उल्लेख मिलता है। जिनके नाम क्रमश क्रौञ्च, वामनक, अन्धकारक, देवावृत्त, विविन्द, पुण्डरीक, तथा दुन्दुभिस्वन कहे गये है[124]। इसी प्रकार गौरी, कुमुद्वती, सन्ध्या, रात्रि मनोजवा, ख्याति एव पुण्डरीका नामक सात प्रधान नदियाँ कहीं गयी है[125]। वहाँ पर वर्णो का उल्लेख इस प्रकार है पुष्कल, पुष्कर, धन्य एव तिष्य नामक क्रमश ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहे गये है[126]। वहाँ के प्राणी यज्ञ दान, समाधि व्रत उपवास, विविध होम, स्वाध्याय, एव तर्पणो द्वारा महादेव की पूजा करते है। तथा मोक्ष की प्राप्ति होती है[127]।

शाकद्वीप

आलोचित पुराण क्रौंञ्च द्वीप के दुगुने विस्तार मे चारो तरफ दधि सागट को आवेष्टित कर शाकद्वीप स्थित है का उल्लेख मिलता है [128]। शाकद्वीप मे भी सात पर्वतो का उल्लेख है जिनके नाम क्रमश इस प्रकार है– उदम, रैवत, श्यामाक, अस्तगिरि, आग्विकेय, रम्य, एवं केशरी कहे गये है[129]। इसी प्रकार सात नदियाँ क्रमश सुकुमारी, कुमारी, नलिनी,

रेणुका, इक्षुका, धेनुका एव गभस्ति नाम से जानी जाती है[130]। वहॉ के मनुष्य इन नदियो के जल पीते हुए रोग शोक राग–द्वेष से रहित होकर जीवन व्यतीत करते है[131]। वहॉ के जाति के सम्बन्ध यह कहा जाता है कि मग, मगध, मानव एव मन्दग मनुष्य क्रमश ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र होते है[131]। वे सभी लोग व्रतो एव उपवासो के द्वारा सभी लोको के एक मात्र साक्षी सूर्य की नित्य आराधना करते है [132]। उन्हे सूर्य का सायुज्य एव सालोक्य की प्राप्ति होती है[133]।

श्वेत द्वीप

आलोचित पुराण मे शाकद्वीप, को आवृतकर क्षीर सागर स्थित है । उसके मध्य मे श्वेत, द्वीप का उल्लेख मिलता है[134]। वहॉ के जनपद पवित्र एव अनेक आश्चर्यो से युक्त है। वहॉ के मनुष्य श्वेत वर्ण के एव नित्य विष्णु की आराधना करने वाले होते है[135]। वहॉ के लोग व्याधि मुकत एव मृत्यु का भय नही होता है। वहॉ के निवासी क्रोध, लोभ, एव माया से रहित होते है[136]। ऐसा उल्लेख मिलता है कि वहॉ के कुछ निवासी इन्द्रिय निग्रह योग द्वारा ध्यान करते है कुछ जप करते है, कुछ तप करते है एव अन्य लोग विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करते है[137]। वहॉ के लोग वासुदेव का ध्यान करते है तथा कुछ विष्णु के ध्यान करते है तथा कुछ विष्णु के भक्त तथा अन्य कुछ लोग महेश्वर के भक्त होते है और मस्तक पर त्रिपुण्ड धारण करते है [138]। वहॉ पर नारायण नामक पुर का उल्लेख मिलता है। जो स्वर्ण तथा स्फटिक के मण्डपो से युक्त अत्यन्त सुन्दर है[139]।

पुष्कर द्वीप

आलोचित पुराण के अनुसार पुष्कर द्वीप शाकद्वीप की अपेक्षा दुगुने विस्तार मे क्षीर सागर का आश्रय कर स्थित है[140]। वामन पुराण मे पुष्कर द्वीप को भयकर था पैशाचिक धर्मो के आश्रित कहा गया है[141]। कूर्म पुराण के अुनसार इस द्वीप मे मानसोत्तर नामक एक ही पर्वत का उल्लेख मिलता है [142]। इस पर्वत की ऊॅचाई साढे पचास सहस्त्र ऊॅचा है। विशेष स्थिति मे दो भागो मे बॉटा गया है[143]। उस द्वीप मे दो जनपद तथा महावीत एव धातकी नामक दो वर्ष कहे गये है। पुष्कर द्वीप स्वादिष्ट जल के सागर से आवृत्त है। उस द्वीप मे देवों द्वारा पूजित महान वटवृक्ष है। ब्रह्म वही रहते है और वही पर शिव नारायण का मन्दिर

है[144]। शरीर के आधे भाग मे हर एव आधे मे हरि के रुप मे महादेव यहॉ निवास करते है[145]। यही की प्रजा रोग, शोक एव द्वेष से रहित है वहॉ पर वर्णाश्रम धर्म, नदियॉ एव पर्वत का उल्लेख नही मिलता है।

पर्वत

कूर्म पुराण एव अन्य पुराणो मे तीन प्रकार की पर्वत श्रेणियॉ वर्णित है ।

(1) कुल पर्वत वर्ष पर्वत विष्कम्भक पर्वत

कुल पर्वत भारत वर्ष के भीतर पर्वत श्रेणियो को निदृष्ट करता है। इनकी सख्या सात है। सभी पुराणो मे यह सूची प्राय एक ही प्रकार की है। (1) महेन्द्र (2) मलय (3) सह्य (4) शक्तिमान (5) ऋक्ष (6) विन्ध्य (7) पारियात्र ।

वर्ष पर्वत उन पर्वतो को कहते है, जो एक वर्ष को दूसरे वर्ष से अलग करते है। जम्बूद्वीप मे सात वर्ष पर्वत है, जो उसके सातो वर्षो को एक दूसरे से अलग करते है। विष्कम्भक पर्वत सख्या मे चार है, जो मध्य मे रहने वाले सुमेरू पर्वत से चारो दिशाओ मे फैले हुए है ।

सुमेरु पर्वत

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि सुमेरु पर्वत के ऊपर ब्रह्म की चौदह सहस्त्र योजनो की महापुरी है[146]। वहॉ पर ब्रह्म रहते है । वहॉ पर ब्रह्म के सम्मुख शम्भु का मन्दिर है[147]। चन्द्रमा, सूर्य एव अग्नि, स्वरूप नेत्रो वाले शिव पार्वती एव गणो के साथ वहॉ विचरण करते है[148]। उसी श्रेष्ठ पर्वत पर अमरावती नामक इन्द्र की श्रेष्ठ पुरी का उल्लेख मिलता है[149]। उसके दक्षिण दिशा मे अग्नि की तेजो वाली नामक पुरी है [150]। पर्वत के दक्षिण भाग पर यमराज की सयमनी नामक महापुरी कही गयी है [151]। उसके पश्चिम भाग मे महात्मा निऋृति की रक्षोवती नामक पुरी है। जो राक्षसो से परिपूर्ण है [152]। पश्चिम मे पर्वत पर शुद्धवती नामक वरूण की महापुरी है[153]। उत्तर दिशा मे वायु की गन्धवती नामक महापुरी है। वहॉ रहते है[154]। पर्वत के पूर्व दिशा मे सोम की कान्तिमती नामक श्रेष्ठ शुभ्र पुरी है। उसमे सोम चन्द्र रहते है[155]। उसके पूर्व मे शकर की यशोवती नामक महापुरी है। वह सभी को

दुर्लभ है[156]। आलोचित पुराण मे ऐसा कहा गया है। कि विष्णु के चरण से निकली गगा चन्द्र मण्डल को आप्लावित कर चतुर्दिक ब्रह्मपुरी मे स्वर्ग से गिरती है। वहॉ गिर वे चारो दिशाओ मे सीता अलकनन्दा सुचक्ष एव भद्र नाम से चार भागो मे सुचक्ष एव भद्र नाम से चार भागो मे विभक्त हो गयी है [157]। सुमेरू पर्वत के चारो ओर जठरादिक वर्ष पर्वत स्थित है [158]।

गन्धमादन पर्वत

कूर्म पुराण के अनुसार गन्ध मादन एव कैलाश पर्वत पूर्व पश्चिम मे फैले है ये अस्सी योजन तक विस्तृत है तथा समुद्र मे स्थित है[159]। कालीदास के अनुसार यह कैलाश का ही एक भाग है।

यह कैलाश का दक्षिण भाग है, यह सकेत कालिका पुराण देता है। कालिका पुराण अध्याय 82 बद्रिकाश्रम इसी पर्वत के ऊपर स्थित बताया जाता है। अलकनन्दा इसी पर्वत से निकली है । इस प्रकार इसकी स्थिति गढवाल मे है।

मन्दराचल पर्वत

कूर्म पुराण के अनुसार प्राचीन काल मे मन्दराचल को मन्थन दण्ड बनाकर दैत्यो और दानवो के साथ देवताओ ने अमृत के लिए क्षीर सागर का मथन किया [160]। वामन पुराण के नुसार शती के साथ महेश्वर इस पर्वत पर रहते थे तथा रमण करते थे[161]। कूर्म पुराण मे भी इस प्रकार का उल्लेख मिलता है कि अन्धक नाम का एक दुर्वुद्धि दैत्य पार्वती को हरने की इच्छा से मन्दराचल पर आया था [162]। महेश्वर पृथूदक तीर्थ मे स्नान कर पाप से विमुक्त होकर नन्दी गणो एव वाहन के सहित महापर्वत मन्दर पर आए थे[163]। पार्वती के साथ विवाह कर शकर भूतगणो के साथ मन्दराचल पर आ गए तथा वहीं रहने लगे[164]। वामन भगवान के दोनो उरूओ मे मेरू और मन्दर पर्वत विद्यमान था[165]। यह मेरू के पूर्व मे भागलपुर के पास एक छोटा पहाड है। कई पुराणो मे बद्रिकाश्रम, जहॉ पर नारायण ने तपस्या की थी, मदर पर्वत स्थित बताया जाता है। इसी प्रकार यह हिमालय का ही एक भाग है। परन्तु महाभारत के अनुसार यह बद्रिकाश्रम के उत्तर मे स्थित बताया जाता है[166]।

कैलाश पर्वत

कूर्म पुराण मे मेरुश्रृग कैलाश पर्वत पर स्थित शिव की तपस्थली के रुप मे जाना जाता है[167]। एक स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि महेश्वर मेरु शिखर के स्वर्णिम कैलाश पर्वत पर पहुॅचकर केशव के साथ विहार करने लगे[168]। हेमकूट पर्वत से विभक्त हुए सुन्दर कैलाश पर्वत है। वहॉ करोडो यक्षो एव कुबेर का निवास स्थान तथा शकर का महान मन्दिर है[169]।

हेमकूट पर्वत

आलोचित पुराण के अनुसार हेमकूट की चोटी पर ब्रह्म का बडे–बडे कगूरो से सुशोभित स्फटिक निर्मित एक सुन्दर विमान मन्दिर का उल्लेख मिलता है[170]। वहॉ पर ऋृषि देवता एव सिद्ध लोग नित्य शिव की पूजा करते है[171]। आलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि कामुक राजा दुर्जय उर्वशी की तलाश मे सात द्वीपो वाली पृथ्वी पर घूमने लगा और अप्सरा को ढूॅढते हुए हिमालय को पारकर हेमकूट पर्वत एव देवताओ के निवास स्थान महामेरु पर गया[172]।

निषध पर्वत

कूर्म पुराण के अनुसार निषध एव पारियात्र नामक दो वर्ष पर्वत मेरू की पश्चिम दिशा मे पूर्व के पर्वतो के सदृश स्थित है[173]। अल्वेरूनी के अनुसार इस पर्वत के पास विष्णु एक सर है जहॉ से सरस्वती जाती है। इससे प्रकट होता है कि यह हिमालय श्रेणी का एक भाग है[174]।

वसुघाट पर्वत

आलोचित पुराण के अनुसार वसुधार नामक पर्वत पर आठ वसुओ का रत्नमण्डित, असुरो के भय से मुक्त यहॉ पवित्र आठ स्थान है[177]।

रत्नाधार नामक पर्वत

रत्नाधार पर्वत पर सिद्धो के आवास से युक्त महात्मा सप्तर्षियो के सात आश्रम है। वहॉ ब्रह्म का स्वर्ण युक्त चार द्वारा वाला हीरा नीलमणि से जडित सुन्दर स्थान है। ब्रह्मा वहॉ देवी के साथ रहते है[178]।

मेध पर्वत

मेध पर्वत पर सहस्त्र सूर्य के तुल्य इन्द्र का एक स्थान है। सुरेश्वर भगवान इन्द्र शची के साथ वहॉ निवास करते है। मजशैल पर दुर्गा का मणिमय तोरण वाला एक भवन है साक्षात महेश्वरी दुर्गा वहॉ निवास करती है का उल्लेख मिलता है[179]।

सुनील पर्वत

आलोचित पुराण के अनुसार धातुओ से प्रकाशित श्रृग पर राक्षसो के पुर एव सैकडो सरोवरो का उल्लेख किया गया है[180]।

शतश्रृंग पर्वत

कूर्म पुराण मे शतश्रृग महान पर्वत का घर अति तेजस्वी यक्षो के स्फटिक के स्तम्भो से युक्त सौ पुरो का उल्लेख मिलता है[181]।

श्वेतोदर पर्वत

आलोचित पुराण के अनुसार श्वेतोदर नामक पर्वत पर गरूड का प्रकार एव गोपुर से युक्त तथा मणिमय तोरण से मण्डित पुर है। विष्णु तुल्य गरूण उस ज्योति रूप अव्यय विष्णु का ध्यान करते हुए वहॉ रहते है [182]।

परियात्र पर्वत

आलोचित पुराण के अनुसार परियात्र पर्वत पर महालक्ष्मी समस्त रमणीय प्रसाद युक्त महालक्ष्मी वहॉ भाग मे सरस्वती का उत्तम पुर है। उस पुर के विचित्र वृक्षो से पूर्ण एव दिव्य श्रृग पर गन्धर्वो के दिव्य स्त्रियो से आवृत्त सौ पुर है[183]।

अञ्जन पर्वत

आलोचित पुराण मे अञ्जन पर्वत की चोटी पर स्त्रियो के श्रेष्ठ पुर का उल्लेख किया गया है। वहॉ रति की लालसा करने वाली रम्भा इत्यादि अप्सराये निवास करती है। वही पर चित्रसेन इत्यादि माचक के रूप मे आया करते है। वह पुरी सभी रत्नो से सम्पन्न एव अनेक झरनो से युक्त कहा गया है[184]।

कौमुद पर्वत

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि कौमुद पर्वत पर भी ईश्वर मे आसक्त चित्रवाले एव शान्त रजोगुण वाले रूद्रो के अनेकपुर है। उसमे उत्तम पर ज्योति का साक्षात्कार करने वाले एव महेश के भीतर विचरण करने वाले महायोगी रूद्रगण रहते है [185]।

पिञ्जर नामक पर्वत

कूर्मपुराण के अनुसार पिञ्जर नामक पर्वत के शिखर पर गणेशो के तीन पुर तथा कपिल पर नदीश्वर की पुरी का उल्लेख किया गया है जहॉ सुन्दर यश वाले यति रहते है[186]।

जारूधि पर्वत

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि जारूधि पर्वत के शिखर पर अमित तेजस्वी भाष्कर का दीप्तिमान भवन है। उसी के उत्तर मे चन्द्रमा का श्रेष्ठ स्थान है। भगवान चन्द्रमा वहॉ रहते है[187]।

हंस पर्वत

कूर्मपुराण के अनुसार ऐसा उल्लेख मिलता है कि हस पर्वत पर सहस्त्र योजन विस्तृत सुवर्ण मणिमय एक दिव्य भवन है। उसमे वासुदेवादि से युक्त ब्रह्म सावित्री के साथ वहॉ रहते है। उसके दक्षिण मे सिद्धो का उत्तम पुर है। जहॉ सनकादि मुनि रहते है [188]।

पंञ्चशैल

आलोचित पुराण मे पञ्चशैल शैल का उल्लेख किया गया है। जहॉ पर दानवो के तीन पुर कहे गये है । उससे थोडी दूर पर सुगन्धशैल शिखर पर बुद्धिमान दैत्याचार्य कदम का नदियो से सुशोभित आश्रम है। जिसमे भगवान ऋृषि निवास करते है। उसी के दक्षिण की ओर ब्रह्मज्ञानी सनतकुमार वहॉ रहते है[189]।

गिरि गुहा

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख है कि एक समय शोभा से प्रकाशित हो रहे देवकी नन्दन कृष्ण लीला हेतु गिरि गुहा मे विचरण करने लगे[190]। कतिपय काम मोहित मुग्ध मृग के समान उनके मुख कमल का चुम्बन करने लगी [191]। कृष्ण की माया से मोहित उन कन्याओ ने गोविन्द का हाथ पकड कर अपने भवन ले गयी। तब श्री कृष्ण ने लीला पूर्वक अनेक रूप धारक कर उनके काम की पूर्ति की इस प्रकार माया द्वारा जगत को मोहित करने वाले हरि बहुत समय तक भगवान शकर के पुर मे रमण करते रहे[192]।

अक्षय वट

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि जो व्यक्ति अक्षय वट के नीचे जाकर प्राणो का परित्याग करता है वह सभी लोको का अतिक्रमण कर रूद्र लोक मे जाता है [193]।

कर्णिकार वन

कूर्म पुराण मे ऐसे कर्णिकार नामक एक वन का उल्लेख मिलता है कि जहॉ उमा के साथ शकर निवास करते है [194]।

देवदारू वन

आलोचित पुराण के अनुसार ऐसा उल्लेख मिलता है कि प्राचीन काल मे पवित्र दारूनवन मे सहस्रो गृहस्थ मुनि ईश्वर की आराधना करने के लिए तप करते थे [195]। पवित्र देवदारू वन सिद्धो एव गन्धर्वो से सेवित है वहॉ पर महादेव ने महान वर प्रदान किया था[196]।

नदियों का वर्णन

कूर्म पुराण मे भारत के विभिन्न क्षेत्रो मे प्राकृतिक दृष्टि से पर्वतो के समान ही नद नदियो का भी उल्लेख मिलता है। भारतीय सस्कृति मे नद नदियो का स्थान, धार्मिक, व्यापारिक तथा प्राकृतिक सतुलन आदि की दृष्टि से प्रारम्भ से ही महत्वपूर्ण रही है। इन्ही के कारण भारत भूमि आदि काल से शस्य श्यामला सुषमासम्पन्ना एव समृद्धि शालिनी रही है। आलोचित पुराण मे निम्नलिखित नदियो का उल्लेख प्राप्त होता है।

गगानदी

आलोचित पुराण मे गगा नदी के उत्पत्ति के सम्बन्ध मे आख्यात है कि भगवान विष्णु द्वारा वलि से दो पग भूमि के रूप मे तीनो लोक को आक्रान्त कर (नाप) लिया तो ईश्वर का चरण प्रजापति के लोक से ब्रह्मलोक तक पहुँचा, तदुपरान्त अनादि भगवान पितामह ने उपस्थित होकर विष्णु को सन्तुष्ट किया तो उस ब्रह्माण्ड के ऊपरी कपाल को भेदकर पुन (वह चरण) दिव्या चरणो मे जाने लगा। तो अण्ड का भेद होने के कारण पुण्यकर्मियो से सेवित शीतल महान वह जल नीचे गिरा तभी से वह श्रेष्ठ आकाश स्थित नदी प्रवर्तित है। ब्रह्मा ने (उस जल को) गगा के नाम से अभिहित किया[197]।

विष्णु के चरण से निकली गगा चन्द्रमण्डल को आप्लावित कर चतुर्दिक ब्रह्मपुरी मे स्वर्ग से गिरती है [198]। तत्पश्चात चारो दिशाओ मे सीता, अलकनन्दा, सुचक्षु एव भद्र नाम से चार भागो मे विभक्त है [200]

सीता नामक गंगा

अन्तरिक्ष चारिणी सीता नामक गगा एक पर्वत से दूसरे पर्वत पर जाती हुई पूर्व दिशा मे भद्राश्व वर्ष में प्रवाहित होती हुई समुद्र मे जाती है [201]।

अलकनन्दा नामक गंगा

अलकनन्दा नामक गगा दक्षिण दिशा से भारतवर्ष मे आने पर सात भागो मे विभक्त होकर समुद्र मे जाती है [202]।

सुचक्षु नामक गगा

पश्चिम दिशा के सभी पर्वतो का अतिक्रमण करती हुई पश्चिम दिशा के केतुमल नामक वर्ष मे प्रवाहित होकर समुद्र मे जाती है [203]।

यमुना नदी

कूर्म पुराण के अनुसार यमुना का भी बडा महत्व है तीनो लोको मे प्रसिद्ध यमुना को सूर्य पुत्री के नाम से जाना जाता है। यमुना के जल मे स्नान करने एव जलपान करने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है [204]।

महानदी

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि महानदी का जल समस्त पापो का नाशक है। ग्रहण के समय उसका स्पर्श करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [205]।

विरजा नदी

कूर्म पुराण मे विरजा नदी को तीनो लोको मे प्रसिद्ध दूसरी नदी के रूप मे उल्लिखित किया गया है। उसमे स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक मे पूजित होता है [206]।

गोदावरी नदी

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि गोदावरी नदी समस्त पापो का विनाश करती है। स्नोपरान्त पितरो एव देवो का तर्पण करने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त होकर सहस्र गौयो के दान का फल प्राप्त करता है [207]। वामन पुराण के अनुसार यह महानदी सह्य पर्वत से निकली है।

कावेरी नदी

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि तीन रात्रि या एक रात्रि का उपवास कर इस विपुल कावेरी नदी मे स्नान करके उद्क क्रिया (तर्पणादि) करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है[208]। वायु पुराण के अनुसार यह नदी सह्य पर्वत से निकलती है[209]। भागवत और कालिका पुराण के अनुसार यह श्राद्ध कार्य के लिए पवित्र मानी जाती है [210]।

कुमार धारा

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि कुमार धारा मे स्नान कर देवादि का तर्पण एव कार्तिकेय की उपासना करने से मनुष्य स्कन्द के साथ आनन्दोपभोग करता है[211]।

ताम्रपर्णी नामक नदी

कूर्म पुराण के अनुसार ताम्रपर्णी नदी तीनो लोको मे प्रसिद्ध है। उसमे यथा विधि स्नान कर पितरो का तर्पण करने से मनुष्य पाप करने वाले पितरो को भी मुक्त कर देता है। इस कारण यह बहुत ही महत्व पूर्ण नदी है [212]।

नर्मदा नदी

कूर्म पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि रूद्र की देह से निकली हुई नर्मदा नदियो मे श्रेष्ठ है यह चर एव अचर प्राणियो को तारने वाली है। ऐसा कहा गया कि गगा कनखल मे पवित्र है सरस्वती कुरूक्षेत्र मे पवित्र है नर्मदा चाहे ग्राम हो अरण्य समस्त स्थानो पर पवित्र है। सरस्वती का जल तीन दिनो मे यमुना का जल एक सप्ताह मे, गगा का जल तत्काल एव नर्मदा का जल दर्शन मात्र से पवित्र करता है। 2 वामन पुराण के अनुसार यह नदी ऋक्ष पर्वत से निकली है। इसके तट पर अकुलीश्वर तीर्थ है। प्रहलाद ने इस नदी मे स्नान किया था [213]। आलोचित पुराण के अनुसार कलिग देश के पार्श्व मे अमरकण्टक पर्वत पर नर्मदा नदी का उद्गम स्थित है। यह नदी लगभग सौ योजन से कुछ अधिक लम्बी एव दो योजन चौडी है। अमरकण्टक पर्वत मे चतुर्दिक साठ करोड साठ हजार तीर्थ स्थित है[214]।

आलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि जो व्यक्ति मन से नर्मदा का स्मरण करता उसे नि सन्देह सौ से भी अधिक चान्द्रायण व्रत का फल मिलता है। स्वय महेश्वर के द्वारा नित्य सेवित होने के कारण यह नदी ब्रह्महत्या के पाप को दूर करने वाली कही गयी है [215]।

पुष्करिणी नदी

आलोचित पुराण के अनुसार विमलेश्वर तीर्थ से पुष्करिणी नदी मे जाकर स्नान करने से स्नान करते ही मनुष्य इन्द्र का आसन प्राप्त कर लेता है [216]।

इक्षु नदी

इक्षु नदी के सगम को तीनो लोको मे प्रसिद्ध कहा गया है। यहॉ शिव स्थित है। वहॉ स्नान करने से मनुष्य को गाणपत्य की प्राप्ति होती है [217]।

विपुल नदी

आलोचित पुराण मे नर्मदा एव विपुल नदी को तीनो लोको मे प्रसिद्ध बताया गया है। नदियो मे नर्मदा नदी महादेव को प्रिय है ।

वितस्ता नदी

कूर्म पुराण के अनुसार यह श्रेष्ठ नदी तीर्थो मे तीर्थ है। समस्त पापो को हरने वाली यह नदी के रूप मे स्वय पार्वती ही है[218]। वामन पुराण के अनुसार यह नदी हिमालय से निकली है ।

चण्डवेगा नदी

कूर्म पुराण के अनुसार चण्डवेगा नदी का उद्‌गम स्थान पापो का नाश करने वाला है। वहॉ स्नान करने तथा जलपान करने से मनुष्य ब्रह्म हत्या से मुक्त हो जाता है [219]।

सरोवर

कूर्म पुराण मे ऐसा उल्लिखित है कि जम्बूद्वीप के पास अरूणोद, महाभद्र, असितोद एव मानस नामक चार सरोवर है जिसे देवता लोग सर्वदा इन सरोवरो का उपभोग करते है[220]। कूर्म पुराण मे कुछ वर्षो का उल्लेख मिलता है। जिनका विवरण निम्नवत् है

केतुमाल वर्ष

आलोचित पुराण के अनुसार मेरू के पश्चिम मे केतुमाल वर्ष है वहॉ के लोग कटहल खाने वाले होते है। वहॉ की स्त्रियॉ कमल पत्र के रग की होती है। वे सभी दस सहस्र तक जीवित रहते है [221]।

भद्रश्व वर्ष

आलोचित पुराण के अनुसार मेरू पर्वत के पूर्व मे भद्रश्व वर्ष स्थित है भद्रश्व वर्ष के पुरूष शुक्ल वर्ण के एव स्त्रियॉ चन्द्रमा के किरणो के तुल्य होती है। वे दस सहस्र वर्ष तक जीते एव आम का आहार करते है [222]।

रम्यक वर्ष

रम्यक वर्ष मे स्त्री पुरूष रजत वर्ण के एव सात्विक होते है। वे सब वटवृक्ष का फल खाते है। उनकी आयु दस सहस्र एव पन्द्रह सौ वर्षो तक जीते है [223]।

हिरण्यम वर्ष

आलोचित पुराण के अनुसार हिरण्यम वर्ष मे रहने वाले मनुष्यो का रग स्वर्ण के रग का होता है। वे सभी लकुच का फल खाते है। वहॉ के सभी स्त्री पुरूष देवलोक के निवासियो की भॉति ग्यारह हजार पन्द्रह सौ वर्ष तक जीवित रहते है [224]।

कुरूवर्ष

कुरूवर्ष मे दुग्धाहार करने वाले श्याम वर्ण के स्त्री–पुरूष तेरह हजार पन्द्रह सौ वर्ष तक जीवित रहते है। ऐसा कहा जाता है कि वे सभी लोग मैथुन से उत्पन्न होने वाले है तथा सुखोप भोगी होते है एव चन्द्रद्वीप मे निरन्तर महादेव की उपासना करते है [225]।

किंपुरूष वर्ष

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि कि पुरूष वर्ष पाकड्वृक्ष का फल खाने वाले स्वर्ण वर्ण के मनुष्य निवास करते है। वे दस हजार वर्ष तक जीवित रहते है। वे सभी ब्रह्मा की उपासना करते है [226]।

हरिवर्ष

हरिवर्ष मे मनुष्य ईख के रस का आहार करने वाले होते है। उनका रग चॉदी के सदृश होता है। वे सभी दस हजार वर्ष तक जीवित रहते है। वहॉ के मनुष्य सदैव विष्णु की उपासना करते है [227]।

इलावृत वर्ष

मेरू के पूर्व मे भद्राश्व एव पश्चिम मे के तुमाल है इन दोनो के बीच मे इलावृत वर्ष कहा गया है। इलावृत मे जामुन के फल रस का पान करने वाले मनुष्य है। उनकी आयु तेरह सहस्र वर्षो की स्थिर आयु वाले होते है [227]। ये पद्म वर्ण के होते है।

भारत वर्ष

कूर्म पुराण के अनुसार भारत मे अनेक वर्ण के स्त्रियो एव पुरूषो का वर्णन मिलता है। यहा रहने वाले मनुष्य अनेक देवो की आराधना एव विभिन्न कर्म करते है। उनकी परमायु सौ वर्ष कही गयी है। यहा पर रहने वाले व्यक्ति विभिन्न प्रकार का आहार करते है। पुण्य एव पाप के अनुसार जीवन व्यतीत करते है। यह वर्ष नव सहस्र योजन का कहा गया है। इसे अधिकारी पुरूषो की कर्म भूमि कहा गया है। यहॉ पर विभिन्न पर्वतो, नदनदियो द्वीपो का उल्लेख किया गया है। एक स्थान पर ऐसा कहा गया है कि इसके पूर्व मे किरात लोग एव पश्चिम मे यवन लोग रहते है। इसके मध्य मे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र रहते है। यहॉ के मनुष्य यज्ञ, युद्ध, एव वाणिज्य द्वारा जीवन निर्वाह करते है। यहॉ विभिन्न पर्वतो से निकली नदियॉ प्रवाहित होती है। कवियो ने भारत वर्ष मे चार युगो का वर्णन किया है। जिन्हे कृत, त्रेता, द्वापर एव कलियुग के नाम से जाना जाता है ये युग अन्यत्र कही नही होते है[228]।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 विष्णु पुराण (विल्सन के अनुसार) पृ० 42 नोट तथा पृष्ठ 174

2 कूर्मपुराण 1 16 61

3 कूर्मपुराण 1 39 2

4 कूर्मपुराण 1 39 3

5 कूर्मपुराण 1 39 4

6 कूर्मपुराण 1 39 5-7

7 कूर्मपुराण 1 39 3

8 कूर्मपुराण 1 39 7

9. कूर्मपुराण 1 39 6-8

10 कूर्मपुराण 1.39 10

11 कूर्मपुराण 1 39 10

12 कूर्मपुराण 1.39 11

13 कूर्मपुराण 1 39 11

14 कूर्मपुराण 1 39 12

15 कूर्मपुराण 1 39.14

16 कूर्मपुराण 1.39 5

17 कूर्मपुराण 1.39 14

18. कूर्मपुराण 1 39 16-17

19. कूर्मपुराण 1 39.18

20 कूर्मपुराण 1 42 17

21 कूर्मपुराण 1 42 18

22 कूर्मपुराण 1 42 19

23 कूर्मपुराण 1 42 20

24 कूर्मपुराण 1 42 20

25 कूर्मपुराण 1 42 21

26 कूर्मपुराण 1 42 22

27 कूर्मपुराण 1 42 23

28 कूर्मपुराण 1 42 24

29 कूर्मपुराण 1 42 25

30 कूर्मपुराण 1 42 26-27

31 कूर्मपुराण 1 1 5 1

32 कूर्मपुराण 1 5 4

33. कूर्मपुराण 1.5 5

34 कूर्मपुराण 1.5.6

35 कूर्मपुराण 1.5.7

36. कूर्मपुराण 1.5.8

37. कूर्मपुराण 1 5 9

38 कूर्मपुराण 1 5 10

39 कूर्मपुराण 1 5 11

40 कूर्मपुराण 1.5.12

41 कूर्मपुराण 1 5 13

42 कूर्मपुराण 1 5 14

43 कूर्मपुराण 1 5 15

44 कूर्मपुराण 1 5 61

45 कूर्मपुराण 1 5 4

46 कूर्मपुराण 1 5 17

47 कूर्मपुराण 1 5 18

48 कूर्मपुराण 1 6 3

49 कूर्मपुराण 1 6 6

50 कूर्मपुराण 1 6 7

51 कूर्मपुराण 1 6 8

52 कूर्मपुराण 1 6 9

53 कूर्मपुराण 1 6 10

54. कूर्मपुराण 1 6 -22-24

55 कूर्मपुराण 1 6.25

56 कूर्मपुराण 1 7 1

57 कूर्मपुराण 1.7 2

58 कूर्मपुराण 1.7.3

59. कूर्मपुराण 1 7 4

60. कूर्मपुराण 1 7 5

61 कूर्मपुराण 1 7 6

62 कूर्मपुराण 1 7 7

63 कूर्मपुराण 1 7 8

64 कूर्मपुराण 1 7 19

65 कूर्मपुराण 1 7 20-24

66 कूर्मपुराण 1 7 25

67 कूर्मपुराण 1 7 27-29

68 कूर्मपुराण 1 7 31-33

69 कूर्मपुराण 1 7 34-36

70. कूर्मपुराण 1 7 38-40

71 कूर्मपुराण 1 7 41-42

72 कूर्मपुराण 1 7 43-45

73 कूर्मपुराण 1.7 48

74. कूर्मपुराण 1 7.49-53

75. कूर्मपुराण 1.7 57

76 कूर्मपुराण 1.43 5

77. कूर्मपुराण 1.43.4

78. कूर्मपुराण 1.43 2

79. कूर्मपुराण 1 43.3

80. कूर्मपुराण 1 43 4

81 सप्तद्वीप सुमति, महाभाष्य (किलहार्न) पृ० 9

82. ब्राह्मण्ड पुराण 37 3

83 ससागरा नवद्वीना दन्ता भवति मेदनी, पद्म पुराण स्वर्ग 7 26

84 आदि 74-99

85

86 डी० सी० सरकार पृष्ठ 20

87 अली, एस०एम०डी, दि ज्योग्राफी आफ दि पुराणाज, पृष्ठ 32

88 कूर्मपुराण 1 43 6

89 कूर्मपुराण 1 43 11

90 कूर्मपुराण 1 43 9

91 कूर्मपुराण 1 43 12

92 कूर्मपुराण 1 43 14

93 कूर्मपुराण 1 43 27

94 कूर्मपुराण 1 43 15

95 भीष्म 5 12-16-7.19 22

96 कूर्मपुराण 1 43 18

97 कूर्मपुराण 1 43 19

98 बलदेव उपाध्याय पुराण विर्मश पृ० 331

99. कूर्मपुराण 1.47 1

100. वामनपुराण 1 34-35

101 कूर्मपुराण 1.47.3

102 कूर्मपुराण 1 47 5

103. कूर्मपुराण 1.47 7

104 कूर्मपुराण 1 47 8

105 डी० सी० सरकार ज्योग्राफी आफ ऐन्शेट इण्डिया पृ० 49

106 कूर्मपुराण 1 47 9

107 कूर्मपुराण 1 47 10-12

108 कूर्मपुराण 1 47 12

109 वामनपुराण 11-36

110 कूर्मपुराण 1 47 13

111 कूर्मपुराण 1 47 1

112 कूर्मपुराण 1 47 15

113 कूर्मपुराण 1 47 16

114 कूर्मपुराण 1 47 17

115 कूर्मपुराण 1.47 18

116 कूर्मपुराण 1 47 19

117. कूर्मपुराण 1 47.20

118 कूर्मपुराण 1 47 21

119 कूर्मपुराण 1 47.22

120 कूर्मपुराण 1 47 23

121. कूर्मपुराण 1 47 24-25

122 कूर्मपुराण 1 47 26

123 कूर्मपुराण 1 47 27

124. कूर्मपुराण 1.47 28

125 कूर्मपुराण 1 47 29

126 कूर्मपुराण 1 47 31

127 कूर्मपुराण 1 47 32

128 कूर्मपुराण 1 47 33

129 कूर्मपुराण 1 47 34

130 कूर्मपुराण 1 47 35

131 कूर्मपुराण 1 47 36

132 कूर्मपुराण 1 47 37

133 कूर्मपुराण 1 47 38

134 कूर्मपुराण 1 47 40

135 कूर्मपुराण 1 47 40

136 कूर्मपुराण 1 47 41

137 कूर्मपुराण 1 47 43

138. कूर्मपुराण 1 47 44-47

139 कूर्मपुराण 1 47 49-50

140. कूर्मपुराण 1 48 1

141 वामनपुराण 11 46-50

142 कूर्मपुराण 1 48 2

143 कूर्मपुराण 1 48.3

144 कूर्मपुराण 1 48 4-6

145 कूर्मपुराण 1 48 7

146 कूर्मपुराण 1 44 1

147 कूर्मपुराण 1 44 2-5

148 कूर्मपुराण 1 44 7

149 कूर्मपुराण 1 44 10

150 कूर्मपुराण 1 44 13

151 कूर्मपुराण 1 44 15

152 कूर्मपुराण 1 44 17

153 कूर्मपुराण 1 44 19

154 कूर्मपुराण 1 44 2

155 कूर्मपुराण 1 44 24

156 कूर्मपुराण 1 44 25

157 कूर्मपुराण 1 44 29

158 कूर्मपुराण 1 44 40

159 कूर्मपुराण 1 44 37

160 कालिका पुराण अध्याय 82

161 मार्कडेण्य पुराण अध्याय 57

162 कूर्मपुराण 1 1 26

163. वामनपुराण 1 7-10

164. कूर्मपुराण 1 15 125 & 168

165 वामन पुराण 25 74

166 वामनपुराण 27.61-62

167 वामनपुराण 65-19

168 महाभारत वनपर्व अध्याय 162-164

169 कूर्मपुराण 1 29 16

170 कूर्मपुराण 1 27 1

171 कूर्मपुराण 1 46 4

172 कूर्मपुराण 1 46 1

173 कूर्मपुराण 1 46 2

174 कूर्मपुराण 1 45 38

175 अल बेरूली (जिल्द) पृ० 142

176 कूर्मपुराण 1 46 11

177 कूर्मपुराण 1 46 13 & 15

178 कूर्मपुराण 1 46 24-25

179. कूर्मपुराण 1 46 27

180 कूर्मपुराण 1 46 27

181 कूर्मपुराण 1 46 28

182 कूर्मपुराण 1 46 29-30

183 कूर्मपुराण 1.46 37-43

184 कूर्मपुराण 1 46 44-66

185. कूर्मपुराण 1 46 47-48

186 कूर्मपुराण 1 46 46-49

187 कूर्मपुराण 1 46 50-51

188 कूर्मपुराण 1 46 52-54

189 कूर्मपुराण 1 46 55-57

190 कूर्मपुराण 1 46 29-30

191 कूर्मपुराण 1 25 6

192 कूर्मपुराण 1 25 14

193 कूर्मपुराण 1 26 15-17

194 कूर्मपुराण 1 35 8

195 कूर्मपुराण 1 46 36

196 कूर्मपुराण 1 36 49

197 कूर्मपुराण 2 34 35

198 कूर्मपुराण 2 37 1 3

199 कूर्मपुराण 2 34 25

200 कूर्मपुराण 2 34 26

201. कूर्मपुराण 2 36 15

202 कूर्मपुराण 2 36 16

203 वायुपुराण 77-28, 91 59

204 भागवतपुराण 15 19 87, 13-12, 10 79 14

205 कालिकापुराण 24 130-135

206 कूर्मपुराण 2 36 19

207 कूर्मपुराण 2 36 20

208. कूर्मपुराण 2.38.5-8

209 वामनपुराण 13 25, 7 26, 57-47

210 कूर्मपुराण 2 38 9-11

211 कूर्मपुराण 2 40 38-40

212 कूर्मपुराण 2 39 10

213 कूर्मपुराण 2 39 27

214 कूर्मपुराण 2 40 37

215 कूर्मपुराण 2 42 4

216 वामनपुराण 13 20

217 कूर्मपुराण 2 42 16

218 कूर्मपुराण 2 43 23

219 कूर्मपुराण 1 45 1

220. कूर्मपुराण 1 45.2

221 कूर्मपुराण 1 45 3

222 कूर्मपुराण 1.45.4

223 कूर्मपुराण 1.45.5-6

224 कूर्मपुराण 1.45.7-8

225 कूर्मपुराण 1.45. 9-10

226. कूर्मपुराण 1.43 21 & 1.45.19

227. कूर्मपुराण 1.45.20-43

चतुर्थ अध्याय

कूर्म पुराण में वर्णित वंशानुचरित

वंशानुचरित

कूर्म पुराण मे वशानुचरित के अर्न्तगत देवताओ ऋषियो राजाओ तथा असुरो एव दैव्यो की वशावलियॉ अति विस्तृत रूप से वर्णित है।

शिव ब्रह्मा के पुत्र के रूप मे

कूर्म पुराण मे ऐसा उल्लिखित है कि कल्प के अन्त मे तीनो जगत अन्धकार स्वरूप हो गया। सभी ओर एक मात्र समुद्र था उस समय देवता एव ऋषि नही थे। उस समय समुद्र मे नारायण देव शेषनाग रूपी शयन पर सो रहे थे[1]। तभी उनकी नाभि मे लीला के लिए तीनो लोको का सारभूत अद्‌भुत दिव्य एव विमल कमल प्रकट हुआ[2]। वह कमल सौ योजन तक फैला हुआ दिव्य गन्ध से युक्त तरूण सूर्य के सदृश था। इस प्रकार विष्णु के बहुत दिनो तक ऐसे रहने पर भगवान हिरण्य गर्भ उस स्थान पर गये और विष्णु को हाथ से उठाकर कहा कि इस निर्जन घोर जगल मे अकेले सोने वाले आप कौन है इतना सुनते ही गम्भीर ध्वनि वाले गरूणध्वज ने ब्रह्मा से कहा आप मुझे ही देवो एव लोको की उत्पत्ति एव विनष्ट करने वाला जाने[3]। आप मुझसे सात समुद्रो से आवृत पर्वतो एव महाद्वीपो से युक्त समस्त जगत तथा ब्रह्म अपने को देखे।

ऐसा कहकर हरि ने जानते हुए भी ब्रह्मा रूपी पुरूष से कहा आप कौन है तब ब्रह्मा ने हॅसते हुए विष्णु से कहा कि मै धारण करने वाला, विधान करने वाला स्वय ही उत्पन्न होने वाला ब्रह्मा हूँ विश्व मुझमे स्थित है मै सभी ओर मुख वाला ब्रह्मा हूँ। ऐसा सुनते ही विष्णु ब्रह्मा से आज्ञा लेकर योग द्वारा ब्रह्मा की शरीर मे प्रविष्ट कर गये। और वहॉ उनके उदर मे असुर एव मनुष्यो से युक्त सम्पूर्ण त्रैलोक्य को देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ। तत्पश्चात विष्णु ब्रह्मा के मुख से बाहर निकल आये और ब्रह्मा से कहा कि अब आप इसी तरह मेरे उदर मे प्रवेश कर विचित्र लोको को देखे। ऐसा सुनते ही ब्रह्मा ने विष्णु की प्रशसा कर श्रीपति के उदर मे प्रवेश किया[4]।

ब्रह्मा ने उन्ही लोको विष्णु के गर्भ मे स्थित देखा। इस प्रकार भ्रमण कर विष्णु के गर्भ का अन्त न पा सके। तदुपरान्त जर्नादन ने सभी द्वारो को बन्द कर दिया। ब्रह्मा ने विष्णु की नाभि मे द्वार पाया। उन सुवर्णमय अण्ड से उत्पन्न ब्रह्मा ने योगबल से उसमे प्रवेश कर कमल से अपने को बाहर निकाला। ब्रह्मा कमल पर बैठे शोभित होने लगे। स्वय को विश्वेश एव परम पद मानते हुए उन्होने मेध तुल्य गम्भीर वाणी से विष्णु पुरूष से कहा[5]। मै अकेला ही प्रबल हूँ। दूसरा कोई नही है। ऐसा सुनते ही नारायण ने कहा—आप विधाता, स्वयभू, और ब्रह्मा है। मैने मात्सर्य के कारण अपने शरीर के द्वार नही बन्द किया है। यह केवल लीला के लिए हुआ है न कि आपको बॉधा पहुॅचाने की इच्छा से, मैने आपका जो अपहरण किया है उसमे आप सभी प्रकार से अपना कल्याण समझे[6]। हे ब्रह्मा इसी कारण आप मेरी प्रीति के लिए आप मेरे पुत्र बने। आप 'पद्म योनि' इस नाम से प्रसिद्ध हो। तब ब्रह्मा ने विष्णु को वर देने के बाद कहा कि आप सभी प्राणियो के अन्त्यात्मा एव सनातन है पर ब्रह्म है। मै ही सभी लोको का आत्मा लोक महेश्वर हूँ। यह सब मेरा स्वरूप है। मै परम पुरूष ब्रह्मा हूँ। हम दोनो के अतिरिक्त दूसरा कोई लोको का परमेश्वर नही है एक ही मूर्ति नारायण और पितामह के नाम से दोनो भागो मे विभक्त है[7]।

उनके ऐसा कहने पर वासुदेव ने ब्रह्मा से कहा कि यह प्रतिज्ञा आपके विनाश का कारण बनेगी। विष्णु ने ब्रह्मा से कहा कि आप शकर को नही देख रहे है। मै उस परमेश्वर को जनता हूँ। आप उसी महेश्वर ब्रह्मा की शरण मे जाओ परन्तु क्रोधित ब्रह्मा स्वय अपने एव विष्णु के अतिरिक्त किसी को भिन्न लोको का परमेश्वर मानने को तैयार नही थे। तब विष्णु ने उनके इस क्रोध भरे शब्द को सुनकर कहा, कि मुझे सब विदित है। मै आपसे असत्य नही कह रहा हूँ[8]। परन्तु आप माया से मोहित है। इतना कहकर विष्णु आपने आत्म स्वरूप उन माहेश्वर को परम तत्व जान कर मौन हो गये। तदुपरान्त ब्रह्मा के ऊपर अनुग्रह करने के लिए शकर कही से प्रार्दुभूत हुए[9]। उन शिव के मस्तक पर नेत्र थे और वे जटा मण्डल से मण्डित थे। उनके हाथ मे त्रिशूल था सूर्य चन्द्र एव ग्रहो से बनी हुई अद्‌भुत प्रकार की पैर तक लटकती माला धारण किये थे। इस प्रकार ईशान को ब्रह्मा ने विष्णु से कहा कि यह तीन नेत्रो वाला त्रिशूल धारी अन्तहीन कौन पुरूष आ रहा है उनके इस बचन

को सुनकर विष्णु ने आकाश मे महेश्वर को देखा तब उठकर विष्णु ने ब्रह्मा से कहा[10] ये देव आदि एव अन्त से रहित लोको के ईश्वर स्वय प्रकाशित होने वाले महादेव है। ये ही निष्कल, केवल महादेव शिव काल बनकर सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति, पालन, तथा सहार का कार्य करते है। ये वही शकर आ रहे है जिन्होने पूर्व काल मे आपको बनाया एव वेदो का ज्ञान दिया[11]। हे ब्रह्मा वासुदेव नामक मुझे विश्व को उत्पन्न करने वाली इनकी दूसरी सनातन मूर्ति को उत्पन्न करने वाली इनकी दूसरी सनातन मूर्ति समझो। तब ब्रह्मा को ज्ञान हुआ और वह पिता स्वरूप उन्ही शिव की शरण मे गये। तब एकाग्रचित होकर उन्होने अर्थवेद के मत्रो से देव की स्तुति की[12]। तब ब्रह्मा को परमेश्वर की परम प्रीति प्राप्ति हुई। उन्होने हॅसते हुए कहा तुम मेरे सदृश हो क्योकि तुम भक्त हो। पूर्व मे मैने ही तुम्हे लोक सृष्टि देह से उत्पन्न आदि पुरूष हो। तुम मुझसे वर मॉगो। मै तुम्हे वर दूॅगा। तब ब्रह्मा ने ऐसा सुनकर वृषध्वज ने पुत्र स्वरूप जर्नादन को देखकर ब्रह्मा से कहा कि जो आपने मॉगा उसे करूॅगा। तुम्हे ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होगा। तब उन्होने ब्रह्मदेव की स्पर्श कर विष्णु से कहा तुम्हारी भक्ति से मै सर्वथा प्रशन्न हॅू वर मॉगो तब विष्णु ने कहा आप मे मेरी भक्ति हो। "ऐसा ही हो" यह कहकर महादेव ने पुन विष्णु से कहा आप सभी कार्यो के कर्ता एव मै अधिदेवता हॅू। आप सोम है मै सूर्य हॅू। आप रात्रि है एव मै दिन हॅू। आपका आश्रय ग्रहण किये बिना योगी मेरे पास नही पहॅुच सकता। देवता, असुर एव मनुष्यो से युक्त इस सम्पूर्ण जगत का पालन करो[13]।

महेश्वर के अपने स्थान पर चले जाने के बाद विष्णु की नाभि से निकले उसी सुन्दर एव महान पद्म पर पितामह रहने लगे। दीर्धकाल के बाद वहॉ अतुलनीय पौरूष वाले मधु एव कैटभ नामक दो राक्षस आये विष्णु के कान से उत्पन्न पर्वत के तुल्य क्रोध से युक्त उन दोनो को देख ब्रह्मा ने नारायण से कहा कि आप इन दोनो असुरो को मारे। तब ऐसा सुनकर हरि ने उन दोनो के वध के लिए (जिष्णु एव विष्णु) नामक दो पुरूषो का आदेश दिया तो उन दोनो लोगो मे युद्ध हुआ। जिष्णु ने कैटभ को जीता एव विष्णु ने मधु को पराजित किया तब ब्रह्मा से कहा कि आप इस पद्म से नीचे उतरे मै आपको नही ढो सकता[14]।

तदुरान्त विश्वात्मा नीचे उतरे एव विष्णु की देह मे प्रवेश कर वैष्णवी निद्रा से युक्त हो गये एव इस प्रकार विष्णु से एकात्मता हो गयी। चिरकाल तक परमात्मा मे आनन्द का अनुभव किया उसके बाद सृष्टि के प्रारम्भ का काल उपस्थित होने पर वैष्णव भाव का आश्रय लिए हुए चारो मुखो वाले देव बनकर सृष्टि करने लगे[15]। उन देव ने पहले सनक, सनन्दन, ऋभु, सनत्कुमार तथा पूर्व मे उत्पन्न होने वाले सनातन नामक ऋषियो को उत्पन्न किया। तब ब्रह्मा ने सृष्टि कार्य मे मन लगाया। लोक की सृष्टि करने मे उन लोगो के इस प्रकार निरपेक्ष होने पर पितामह परमात्मा की माया से मोहित हो गये। तब जर्नादन ने ब्रह्मा को याद दिलाया कि शिव स्वय आपके पुत्र होने की बात कही थी वे है। इस प्रकार विष्णु की बात को सुनकर ब्रह्मा सृष्टि की इच्छा से तप करने लगे। उनके इस तप से कुछ न होने पर बहुत समय बाद उन्हे दु ख से क्रोध उत्पन्न हुआ तब उनकी ऑखो से ऑसू की बूॅदे गिरी तदुपरान्त उन अश्रु बिन्दुओ से भूत और प्रेत उत्पन्न हुए। अश्रु से उत्पन्न होने वाले उन सभी को देखकर क्रोधाविष्ट ब्रह्मा ने अपनी निन्दा की एवं प्राणो का परित्याग कर दिया[16]। तदुरान्त प्रभु के मुख से सहस्रो सूर्य के सदृश एव प्रलय कालीन अग्नि के तुल्य प्राणमय रूद्र उत्पन्न हुए। देवाधिदेव स्वय शिव सुन्दर स्वर मे घोर रूदन करने लगे। तब ब्रह्मा ने रोते हुए रूद्र से कहा 'मत रोओ। रोदन करने के कारण तुम लोक मे 'रूद्र' इस ज्ञान से प्रसिद्धि प्राप्त करोगे। आलोचित पुराण के अनुसार ब्रह्म ने उन्हे अन्य सात नाम, आठ पत्नियॉ, शाश्वत पुत्र एव उन आठो को स्थान प्रदान किया। जिसका उल्लेख इस प्रकार मिलता है [17]।

रूद्र के सात नामो का उल्लेख इस प्रकार है–

(1) भव, (2) शर्व, (3) ईशान, (4) पशुपति (5) भीम, (6) उग्र, (7) महादेव [18]

रूद्र की आठ मूर्तियो के नामो का उल्लेख भी मिलता है जिसका विवरण निम्नवत् है –

(1) सूर्य (2) जल, (3) मही (4) वन्हि, (5) वायु, (6) आकाश (7) दीक्षित ब्राह्मण (8) चन्द्रमा ये ही वे आठ मूर्तियॉ है।

जो मनुष्य इन स्थानो मे रूद्र का ध्यान करते है एव उन्हे प्रणाम करते है उन्हे अष्ट मूर्ति देव परम पद प्रदान करते है [19]।

आलोचित पुराण मे रूद्र की आठ पत्नियो के नाम इस प्रकार है-

(1) सुवर्चला (2) उमा (3) विकेशी (4) शिवा (5) स्वाहा (6) दिशाएँ (7) दीक्षा (8) रोहिणी ये ही रूद्र की आठ पत्नियॉ है [20]।

रूद्र के पुत्र

(1) शनैश्चर (2) शुक्र (3) लोहिताग, (4) मनोजल (5) स्कन्द (6) सर्ग (7) सनातन (8) बुध ये ही रूद्र के आठ पुत्र कहे गये है [21]।

इस प्रकार महेश्वर ने प्रजा धर्म एव व्याम को त्यागकर वैराग्य का आश्रय ग्रहण किया। तब ब्रह्मा ने उन्हे प्रजा की सृष्टि का आदेश प्राप्त किया तो शिव ने अपने समान करोडो–करोडो जटा जूट धारी, भय, रहित, नीलकण्ठ हाथ मे त्रिशूल धारण किये, ऋद्धिघ्न, महानन्द स्वरूप, त्रिलोचन, जरा एव भरण से रहित महावृषभ–वाहन, बीतराग एव सर्वज्ञ रूद्रो को उत्पन्न किया। तब ब्रह्मा ने शिव से कहा कि इस प्रकार की मृत्यु रहित प्रजा मत उत्पन्न करे। जन्म एव मृत्यु से युक्त अन्य प्रजाओ की सृष्टि करो[22]। तब शिव ने ब्रह्मा से कहा कि "मेरे पास उस प्रकार की सृष्टि नही है। आप स्वय अशुभ प्रजाओ को उत्पन्न करे। उस समय उन देव ने अशुभ प्रजाओ को नही उत्पन्न किया। अपने आत्मज उन रूद्रो के साथ वे क्रिया रहित हो गये। इसी से त्रिशूली शिव स्थाणु हुए। इस प्रकार शिव को उनके मानस पुत्रो के साथ देखकर ब्रह्मा की स्तुति करने लगे [23]। तदन्तर महादेव हर ने उन्हे सर्वोत्कृष्ट दिव्य योग, ऐश्वर्य, ब्रह्म भावना एव वैराग्य प्रदान किया। भक्तो का कष्ट दूर रहने वाले शकर ने ब्रह्मा को स्पर्श करते हुए कहा कि आपने ने जो प्रार्थना की थी कि मैं आपका पुत्र बनू उसे मैने पूर्ण कर दिया। अब आप अनेक प्रकार के जगत की सृष्टि करे। शिव ने ब्रह्मा से कहा कि निष्कल परमेश्वर स्वरूप मे सृष्टि, रक्षा एव सहार रूपी तीन गुणो के कारण ब्रह्मा, विष्णु एव हर के नाम से तीनो रूपो मे विभक्त हूँ [24]। मेरे दाहिने अग से सृष्टि के लिए वाम अग से विष्णु का निर्माण हुआ है। शम्भु के हृदय से रूद्र उत्पन्न हुए। वही मै उत्कृष्ट शरीर

हूँ। आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि ब्रह्मा, विष्णु एव शिव सृष्टि, स्थिति एव प्रलय के कारण है। एक होते हुए भी शकर अपनी इच्छा से अपना विभाग कर स्थित है। महेश्वर की वह तीन नेत्रो वाली मूर्ति सदा योगियो को शान्ति प्रदान करती है। इस प्रकार जब–जब तुम मुझे नित्य का चिन्तन करोगे तब–तब मेरे निकट उपस्थित हो जाओगे यह कहकर शकर क्षण भर मे मानस पुत्रो के साथ ही अन्तर्हित हो गये। तब ब्रह्मा ने भी योग का अवलम्बन कर जगत की सृष्टि की उन्होने योग विधा द्वारा पूर्व कल्प के अनुसार मरीचि, भृगु, अगिरा, पुलस्त्य, पुलह, ऋतु, दक्ष, अति, एव वशिष्ठ को उत्पन्न किया [25]।

भृगु वशज

कूर्म पुराण मे भृगु के वशज का उल्लेख मिलता है। जिसका विवरण निम्नवत है।

भृगु की ख्याति नामक पत्नी से नारायण प्रिया लक्ष्मी की उत्पत्ति तथा धाता एव विधाता नाम के दो पुत्रो का उल्लेख किया गया है जो मेरू के जामाता थे[26]। मेरू को आयति और नियति नामक दो कन्याये की जो धाता और विधाता की पत्नियॉ हुई। उनसे दो पुत्र उत्पन्न हुए जिनका नाम प्राण और मृकुन्डु था। मृकण्डु से मार्कण्डेय तथा प्राण से वेद शिरा नामक पुत्र उत्पन्न हुए। मरीचि की पत्नी सम्भूति ने सभी लक्षणो से युक्त पौर्णमास नामक पुत्र एव तुष्टि, वृष्टि, कृष्टि तथा अपचिति नामक चार कन्याओ को उत्पन्न किया। पौर्णमास को विरजा एव पर्वत नामक दो पुत्र हुए[27]। आलोचित पुराण मे आख्यात है कि प्रजापति पुलह की पत्नी क्षमा ने कर्दम, वरीचान, एव सहिष्णु को जन्म दिया। इसी प्रकार अति की पत्नी अनसूया ने सोम, दुर्वासा एव दत्तात्रेय नामक पुत्रो को उत्पन्न किया। अगिरा की पत्नी स्मृति ने सिनीवाली, कूहू, राका एव अनुमति नामक पुत्रियो को उत्पन्न किया। पुलस्त्य ने प्रीति नामक अपनी पत्नी से दत्तात्रि नामक पुत्र उत्पन्न किया। स्वायम्भुव नामक मनवन्तर के अपने पूर्व जन्म मे वे (दत्तात्रि) अगस्त्य के नाम से जाने जाते थे। इसी प्रकार पुलस्त्य को प्रीति से ही वेद बाहु नामक एक अन्य पुत्र तथा सन्नति नामक एक दूसरी कन्या थी। कूर्म पुराण मे आख्यात है कि क्रतु की पत्नी सन्तति ने साठ हाजार पुत्रो को जन्म दिया। वे सभी ऊर्ध्वरेता वालरिवल्य कहे जाते है [28]।

श्रज, ऊह, उर्ध्ववाहु, सवन, अनध, सुतया, एव शुक्र ये वसिष्ठ ने ऊर्ज्जा नामक पत्नी से सात पुत्रो एव कमल नयना नामक एक कन्या को उत्पन्न किया [29]। ब्रह्म को रूद्र स्वरूप वहि नामक जो पुत्र का उससे स्वाहा नामक उसकी पत्नी ने पावक, पवमान और शुचि अग्नि नामक पुत्र थे। मन्थन द्वारा उत्पन्न अग्नि को पवमान तथा विधुत सम्बन्धी अग्नि को पावक कहते है और जो सूर्य तपता है उसे शुचि अग्नि कहा जाता है। उन तीनो अग्नियो पैतालिस सन्तान है। इस प्रकार पावक पवमान एव शुचि और इनके पिता वह्नि ये सभी उनचास वह्नियॉ कही गयी है। ये सभी तपस्वी कहे गये है। यज्ञ मे इनका भाग होता है। इन सभी को रूद्रात्मक कहा गया है। ये सभी त्रिपुण्ड्र धारण करते है [29]।

अग्निष्वाता एव वर्हिषद नामक पितृगण ब्रह्मा के पुत्र कहे गये। उनका अयज्ञ शील एव यज्ञशील दो विभाग है । स्वधा ने उनसे मेना और वैतरणी नामक पुत्रियो को उत्पन्न किया [31]। मेना ने मैनाक एव उसके अनुज क्रौञ्च को उत्पन्न किया। हिमताज से गगा उत्पन्न हुई। हिमवान ने अपनी योगग्नि के बल से देवी महेश्वरी को पुत्री के रूप मे प्राप्त किया[32]।

मनुवशज

कूर्म पुराण मे मुझे वशज का भी उल्लेख मिलता है जो इस प्रकार है मनु की पत्नी शतरूपा ने प्रिय व्रत और उत्तानवाद नामक दो पुत्रो को जन्म दिया। उत्तानपाद को ध्रुव नामक पुत्र हुआ जिसने भगवान के श्रेष्ठ भक्त का स्थान प्राप्त किया [33]।

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि ध्रुव की शम्भु नामक पत्नी से श्लिष्टि एव भव्य नामक पुत्र उत्पन्न हुए। शिलिष्ट की पत्नी सुच्छाया ने पॉच पुत्रो को उत्पन्न किया। उसने वशिष्ठ के कथनानुसार अत्यन्त कठोर तप करके एव शाल ग्राम मे विष्णु की आराधना कर रिपु, रिजुञ्जय, विप्र, वृकल, एव वृषतेजस नामक पुत्रो को उत्पन्न किया ।

रिपु की पत्नी वृहती ने सर्वतेज सम्पन्न चक्षुष को जन्म दिया। चक्षुष ने वीरण की पुत्री पुष्करिणी से चाक्षुस मनु को उत्पन्न किया [34]।

मनु को वैराज नामक प्रजापति की कन्या नड्वला से ऊरू, पूरू, शतधुम्न, तपस्वी सत्यवाक, शुचि, अग्निष्टुद, अतिरात्र, सुधुम्न, एव अभिमन्युक नामक दस पुत्रो का उल्लेख मिलता है [35]। ऊरू की पत्नी आग्नेयी ने अग, सुमनस स्वाति, क्रतु, अगरस एव शिव नामक छ पुत्रो को उत्पन्न किया। अग से वेन की उत्पत्ति हुई एव वेन से वैन्य उत्पन्न हुए वे ही प्रजापालक पृथु नाम प्रसिद्ध हुए [36]। आलोचित पुराण पुराण मे उल्लिखित है कि प्राचीनकाल मे बेनपुत्र के पैतामह नामक यज्ञ मे सभी शास्त्रो के प्रवक्ता, धर्मज्ञ, गुणवत्सल पौराणिक सूत के रुप मे माया रुपधार हरि स्वय उत्पन्न हुए [37]।

पृथु ने गोवर्द्धन पर्वत पर जाकर नारायण की तपस्या करने लगे, तब उनसे प्रसन्न भगवान शख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुए राजा के पास आकर स्वय दामोदर ने कहा कि तुम्हे धार्मिक, स्वरूपवान श्रेष्ट दो पुत्र होगे । ऐसा कहकर हृषीकेश अपने प्राकृतिक रुप मे स्थिर हो गये [38]।

वैन्य (पृथु) ईश्वर की भक्ति पूर्वक आराधना करते हुए अपने राज्य का पालन करने लगे। तब कुछ ही समय बाद उनकी पत्नी शुचिस्मिता ने शिखण्डी एव हविर्द्धान नामक पुत्रो को जन्म दिया[39]। शिखण्डी को सुशील नाम से प्रसिद्ध धार्मिक रुप सपन्न एक पुत्र उत्पन्न हुआ[40]। हविद्धर्धन ने आग्नेयी नामक अपनी पत्नी मे धनुर्वेद के पारगामी प्राचीन वर्हि नामक सत्पुत्र को उत्पन्न किया। पाचीनवर्हि ने समुद्र की पुत्री से दस पुत्रो को उत्पन्न किया[41]।

प्रचेतस के नाम से प्रसिद्ध राजाओ ने अपने वेद का अध्ययन किया। इन्ही दस प्रचेताओ से मारिषा नामक उनकी पत्नी को प्रजापति दक्ष, जो पूर्व समय मे ब्रह्मा के रूप मे उत्पन्न हुए थे। इन्ही दक्ष ने ही महेश रूद्र से विवाद किया था। इसी से रूद्र ने उन्हे शाप दिया था कि वे प्रचेताओ के पुत्र बने[42]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि स्वय महादेव ने देवी के गृह आ रहे दक्ष को यथोचित आदर प्रदान किया परन्तु तमोगुण के आवेश से युक्त ब्रह्मा के पुत्र दक्ष अनुपयुक्त अधिक पूजा की इच्छा करने के कारण क्रोधित होकर चले गये। इस कारण दूषित चित्त दक्ष ने किसी समय अपने घर आयी सती को उनके पति के साथ निन्दा कर क्रोध करते हुए कहा कि तुम्हारे विनाकधारी पति से मेरे अन्य जामाता श्रेष्ठ है। तुम अच्छी पुत्री

नही हो। मेरे घर से चली जाओ [43]। इस प्रकार के वचन को सुनकर देवी ने अपने को भस्म कर डाला और हिमालय की तपस्या से प्रसन्न होकर उसकी पुत्री बनी।

रूद्र ने यह समाचार सुनकर रूद्र के घर आये और उन्हे शाप दिया कि तुम इस शरीर को छोडकर क्षत्रियो के कुल मे जन्म ग्रहण कर अपनी पुत्री से पुत्र उत्पन्न करोगे। इसी कारण दक्ष की प्रचेता के पुत्र हुए [44]। कूर्म के अनुसार शिव द्वारा वीर भद्र नामक पुरूष की उत्पत्ति का उल्लेख मिलता है वे पूर्वकाल मे शामिल प्रचेता के पुत्र राजा दक्ष ने पूर्व बैर के कारण शकर की निन्दा कर गगाद्वार मे यज्ञ किया। विष्णु सहित सभी देवता बुलाये गये [45]। परन्तु शिव को नही बुलाया गया तो दथीच ने कहा कि ब्रह्मा से लेकर पिशाच तक जिसकी आज्ञा का पालन करते है उन रूद्र देव की पूजा विधिपूर्वक क्यो नही की जा रही है[46]। तब दक्ष ने कहा–सभी यज्ञो मे भार्या सहित शकर के भाग एव मन्त्रो की परिकल्पना नही हुई। अत उनकी पूजा नही होती[47]। पुन दधीचि ने दक्ष से कहा कि इसमे सन्देह नही है कि अपूज्य की पूजा करने और पूज्य की पूजा न करने से मनुष्य को निश्चय ही महान पाप लगता है [48]। जहॉ असज्जनो का ग्रहण एव सज्जनो का अनादर होता है वहॉ शीघ्र ही दारूण दैवी दण्ड उपस्थित होता है। ऐसा कहकर ब्रह्मर्षि ने दक्ष की सहायता करने वाले आये हुए उन ईश्वर द्वेषी ब्राह्मणो को शाप दिया[49]। इसके बाद बह्मर्षि चुप हो गये एव मन से सम्पूर्ण पापो के नाशक रूद्र की शरण मे गये [50]। इसी बीच यह सब चरित्र जानकर सर्वदशी देवी पार्वती ने अपने पतिदेव यति महेश्वर से कहा कि मेरे पूर्व जन्म के पिता दक्ष आपके भाव एव स्वरूप की निन्दा कर यज्ञ कर रहे है। वहॉ देवता और महर्षि उनकी सहायता कर रहे है। मै यह वर मॉगती हूॅ कि आप शीघ्र उस यज्ञ को नष्ट कर दे। देवी के ऐसा कहने पर शकर ने दक्ष के यज्ञ को नष्ट करने की इच्छा से शीघ्र ही सहस्र सिर, सहस्र पैर, सहस्र नेत्र एव बडी भुजाओ तथा सहस्र हाथो वाले, प्रत्नया कालीन अग्नि के सदृश घोर दाढो वाले, विभूति से भूषित देवाधिदेव से सम्बन्धित वीर भद्र नामक रूद्र पुरूष को उत्पन्न किया। उत्पन्न होते ही हाथ जोडे हुए वह शकर के सम्मुख उपस्थित हुआ [51]। तब शकर ने उससे कहा कि मेरी निन्दा कर दक्ष गगाद्वार मे यज्ञ कर रहा है उसे विनष्ट करो तब लीलापूर्वक वीरभद्र अकेले ही दक्ष की यज्ञ को विनष्ट कर दिया। उमा ने भी क्रोध पूर्वक

महेश्वरी भद्र काली की सृष्टि की वृषभ पर आरूढ गण उसके साथ गया। इतना ही नही शकर भी उसकी सहायता के लिए 'रोमज' नाम से प्रसिद्ध अन्य हजारो रूद्रो को उत्पन्न किया [52]। इन सभी के साथ जाकर वीर भद्र ने उस यज्ञशाला को जला दिया। अत्यन्त क्रुद्ध गणेश्वरो ने यज्ञ शाला की समस्त वस्तुओ को तथा होता अर्थात आहुति देने वाले एव अश्व को भी पकड कर गगा मे फेक दिया [53]। आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि महाबली ने सुदर्शन चक्र को स्तब्ध कर गरूण के साथ आ रहे विष्णु को तीक्ष्ण बाणो से विद्ध कर दिया [54]। गरूण ने वीर भद्र गण को देखकर उनको अपने पखो से मारा एव समुद्र के समीप गर्जन करने लगे। तदुपरान्त वीरभद्र ने स्वय विनता के पुत्र गरूण से उत्कृष्ट सहस्रो गरूणो को उत्पन्न किया। वे गरूड के ऊपर टूट पडे [55]। उन्हे देखकर बुद्धिमान एव महावेगवान गरूड माधव को छोडकर वेग पूर्वक भागे। यह एक अद्‌भुत बात थी। विनता पुत्र (गरूड) के अन्तर्हित हो जाने पर ब्रह्मा ने आकर वीरभद्र और केशव को रोका। पार्वती सहित भगवान ईश वहा स्वय आ गये। तब उन्हे आते देख ब्रह्मा, दक्ष एव सभी देवता उनकी स्तुति करने लगे। तब दक्ष ने पार्वती को विशेष रूप से प्रणाम कर प्रशन्न किया। तब देवी ने हॅसते हुए प्रशन्न मन से रूद्र से यह वचन कहा कि आप ही जगत के कर्ता, शासक एव रक्षक है। आप दक्ष एव देवो पर अनुग्रह करे। तब भगवान हर ने दक्ष से कहा कि मै आप पर प्रशन्न हूँ। मेरी निन्दा नही करनी चाहिए। सभी यज्ञो मे मेरी पूजा करनी चाहिए [56]।

दक्ष द्वारा प्रजा सृष्टि

कूर्म पुराण मे दक्ष द्वारा प्रजा की सृष्टि का उल्लेख इस प्रकार मिलता है कि ब्रह्मा के आदेश से दक्ष ने देवो, गन्धर्वो, ऋषियो, असुरो एव नागो की सृष्टि की। सृष्टि करने वाले उन दक्ष की प्रजाये जब नही बढी तो उन्होने धर्म पूर्वक मैथुन द्वारा ही प्राणियो की सृष्टि की[57]। आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लिखित है कि दक्ष ने वीरण नामक प्रजापति की असिक्नी नामक धर्मनिरत कन्या मे एक समुद्र पुत्रो को उत्पन्न किया। नारद की माया से उन पुत्रो के नष्ट होने पर प्रजापति दक्ष ने वीरण पुत्री असिक्नी से ही साठ कन्याओ को उत्पन्न किया। उन्होने उसमे से दस कन्याये धर्म को तेरह कश्यप को सत्ताइस सोम को, चार अरिष्टनेमि को दो बहुपुत्र को दो बुद्धिमान कृशाश्व को एव उसी प्रकार अगिरा को प्रदान किया [58]।

धर्म की पत्नियाँ एव उनकी सन्तान

आलोचित पुराण के अनुसार धर्म की दस पत्नियो का उल्लेख मिलता है– जैसे अरून्धती, वसु, जामी, लम्बा, भानु, मरूत्वती, सकल्या, मुहूर्ता, साध्या एव भामिनीविश्वा। उनके पुत्रो का नाम– विश्वा से विश्वेदेवो की उत्पत्ति हुई एव साध्या ने साध्यो को उत्पन्न किया मरूत्वती से भरूद्गण की उत्पत्ति हुई, आठ वसुगण वसु के पुत्र है। भानु से भानुओ का एव मुहूर्तो का जन्म हुआ। लम्बा से घोष तथा जामि से नागवीथी उत्पन्न हुए। सम्पूर्ण पृथ्वी के प्राणियो की उत्पत्ति अरून्धती से हुई सकल्पा से सकल्प उत्पन्न हुए– धर्म के ये दस पुत्र कहे गये है। आलोचित पुराण मे आठ वसुओ के नामोल्लेख किये गये है जो निम्नवत है– आप, ध्रुव, सोम, धर, अनिल, अनल, प्रत्यूप, एव प्रभास। इन वस्तुओ के पुत्रो के नाम इस प्रकार है– आप के पुत्र वैतण्ड्यश्रम, श्रान्त एव धुनि है। ध्रुव के काल, सोम के वर्चा एव धर के पुत्र द्रविण है अनिल के दो पुत्र पुरोजव एव अविज्ञात गति कहे गये है। अनल के पुत्र कुमार है जिन्हे सेनापति कहा जाता है। प्रत्यूप के पुत्र देवल, एव प्रभास के पुत्र शिल्पकर्ता विश्वकर्मा कहे गये है[59]।

आलोचित पुराण मे कश्यपन की पत्नियो एव पुत्रो के नाम इस प्रकार है। अदिति, दिति, दनु अरिष्टा, सुरसा, सुरभि, विनता ताम्रा, क्रोधवशा, इरा, कद्रू, मुनि एव धर्मज्ञा कही गयी है। इनके पुत्र अश, धाता, भग, त्वष्टा मित्र, वरूण, अर्यमा विवस्वान, सविता, पूपा, अशुमान एव विष्णु ये सभी चाक्षुष मनवन्तर मे तुषित नाम के देवता थे। वैवस्वत मनवन्तर मे तुषित नाम के देवता थे। वैवस्वत मनवन्तर मे अदिति के पुत्र (वारह) आदित्य गये है। दिति को कश्यप से दो पुत्र हिरण्यकशिपु एव हिरण्याक्ष हुए। दैत्य हिरण्यकशिपु महाबलवान एव पराक्रमी था। उसने तपस्या द्वारा परमेश्वर ब्रह्मदेव की आराधना कर उनका दर्शन किया एव स्त्रोतो से उनकी स्तुति कर दिव्य वर प्राप्त किये। तदनन्तर उसके बल से पीडित एव ताडित सभी देवता पितामह के पास गये[60]। तब पितामह सभी देवो के कल्याणर्थ विष्णु के पास गये और कहा कि आप ही कर्त्ता एव भरण पोषण करने वाले तथा देव–द्वेषियो के विनाशक है आप रक्षा करे[61] देवताओ के रक्षार्थ विष्णु ने हिरण्य कशिपु का वध करने के लिए स्वय एक पुरूष को उत्पन्न किया और कहा कि दैत्यराज हिरण्यकशिपु को मार कर पुन इसी स्थान

पर आओ। ऐसा आदेश पाते ही वेह दैत्यो के महान नगर को गया तो उसकी आवाज को सुनकर हिरण्यकशिपु असुरो एव आयुधो से सज्जित प्रहलाद इत्यादि पुत्रो के साथ युद्ध के लिए चला[62]। पर्वताकार उस पुरूष को देखकर बहुत से भाग गये परन्तु उसके प्रहलाद, अनुहलाद, सहलाद एव हलाद नामक चार पुत्र नारायण से उत्पन्न पुरूष से युद्ध करने लगे। इन चारो ने अलग–अलग शस्त्रो का प्रयोग किया प्रहलाद ने ब्रह्मास्त्र, अनुहलाद ने नारायणास्त्र, सहलाद ने कौमाशस्त्र एव हलाद ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया। वे चारो अस्त्र उस पुरूष के पास पहुॅचकर उस पुरूष को विचलित नही कर सके। तदुपरान्त उन चारो पुत्रो को दिया और गर्जना करने लगा। पुत्रो के फेक दिये जाने पर बलवान हिरण्यकशिपु ने स्वय पैर से उसकी छाती पर मारा [63]।

इससे अत्यन्त पीडित होकर वह पुरूष गरूड पर चढकर शीघ्रता पूर्वक अदृश्य होकर वहॉ गया जहॉ नारायण स्थित थे। वहॉ जाकर उसने सम्पूर्ण वृतान्त बतलाया। तब प्रभु ने आधा शरीर मनुष्य का एव आधा शरीर सिह का बनाया। दैत्यो एव दानवो को मोहित करते हए नृसिह शरीर धारी अकस्मात हिरण्यकशिपु के पुर मे प्रकट हुए [64]। नृसिह स्वरूपी को देख उस असुर ने पहले अपने बडे पुत्र प्रहलाद को नृसिह के वध हेतु प्रेरित किया। परन्तु वह प्रहलाद पराजित हो गया। तदनन्तर हिरण्याक्ष ने पशुपति के अस्त्र को चलाया और गर्जन करने लगा। परन्तु उस अस्त्र ने विष्णु को कोई हानि नही किया। इस प्रकार अस्त्र को विफल होते देखकर प्रहलाद ने उन्हे देव माना। प्रहलाद ने ऐसा जानकर देव की स्तुति कर पिता, भाइयो एव हिरण्याक्ष से कहा कि ये अनन्त् शाश्वत, अज, पुराण पुरूष महायोगी, भगवान है परन्तु विष्णु की माया से मोहित दुर्बुद्धि हिरण्यकशिपु ने पुत्र प्रहलाद से कहा कि इस समय काल से प्रेरित नृसिह मेरे घर आया है इस लिए यह सभी प्रकार से वध करने योग्य है [65]।

प्रहलाद ने हॅसकर पिता से कहा कि प्राणियो के एक मात्र ईश इनकी निन्दा मत करो। काल रूपधारी, महादेव विष्णु को काल कैसे मार सकता है। तदुपरान्त भाग्य द्वारा प्रेरित दुरात्मा हिरण्यकशिपु पुत्र के मना करने पर भी हरि से लडने लगा। अत्यन्त लाल नेत्रो वाले विष्णु ने प्रहलाद के देखते ही देखते हिरण्यकशिपु को नखो से फाड डाला। इस दृश्य

को देखकर हिरण्याक्ष पुत्र प्रहलाद को छोडकर भाग गया। अनुहलादि पुत्र एव दूसरे सैकडो असुरो को नृसिह को देह से उत्पन्न सिहो ने मार डाला। तदनन्तर नारायण हरि ने उस रूप को छोडकर मूल रूप को धारण किया [66]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लिखित है कि नारायण के चले जाने पर दैत्य प्रहलाद ने हिरण्याक्ष का उचित अभिषेक किया। हिरण्याक्ष ने युद्ध मे देवताओ और मुनियो को जीतकर उन्हे कष्ट दिया और तपस्या द्वारा शकर की आराधना करने के उपरान्त अन्धक नामक श्रेष्ठ पुत्र प्राप्त किया। उसने देवेन्द्र सहित देवताओ को जीता और कामतुल्य इस पृथ्वी को बॉधकर रसातल मे ले जाकर बन्दी बना दिया। तदनन्तर ब्रह्मादि देवता हरि के पास गये और विष्णु से सारा वृत्तान्त बतलाया। उन हरि ने उसके वध का उपाय सोचकर वराह का रूप धारण किया था[67]।

कूर्म पुराण के अनुसार कल्प के प्रारम्भ काल मे पुरूषोत्तम हिरण्याक्ष के पास गये और उसे मार कर अपनी दाढो से इस पृथ्वी का उद्वार किया। विष्णु ने वराह रूप का परित्याग कर देवो एव द्विजो को सस्थापित कर विष्णु ने अपनी ही दिव्य रूप को धारण कर अपने स्थान को चले गये[68]। आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि हिरण्याक्ष के मारे जाने पर विष्णु भक्त प्रहलाद आसुर भाव को छोडकर अपने राज्य का पालन करने लगा। विष्णु की आराधना करते हुए वह विधि पूर्वक देवो एव यज्ञो का पूजन करने लगा। तदनन्तर किसी समय घर मे आये हुए तपस्वी ब्राह्मण देवो की मायावश असुर प्रहलाद ने अर्चना नही की। इस प्रकार प्रहलाद से अपमानित होकर क्रोध से उस ब्राह्मण ने असुर राज को शाप दिया कि जिस बल का आश्रय ग्रहण कर तुम ब्राह्मणो का अपमान करते हो वह वैष्णवी भक्ति विनष्ट हो जायेगी। तदुपरान्त शाप के प्रभाव से राज्य के कार्य मे तत्पर वह प्रहलाद भी मोहग्रस्त हो गया। वह भी ब्राह्मणो को कष्ट देने लगा एव जर्नादन का ज्ञान उसे न रहा। पिता के वध का स्मरण कर उसने हरि के ऊपर क्रोध किया। तदनन्तर नारायण एव प्रहलाद के बीच भयकर युद्ध हुआ। विष्णु ने महान युद्ध कर उसे जीत लिया पहले के संस्कार के कारण उसको हरि का ज्ञान उत्पन्न हो गया। इस प्रकार नारायण मे अनन्य भक्ति रखते हुए प्रहलाद ने महायोग प्राप्त किया [69]।

अन्धक

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि प्रहलाद के योग आसक्त हो जाने पर शम्भु की देह से उत्पन्न हिरण्याक्ष के पुत्र असुर श्रेष्ठ अन्धक को वह महद् राज्य प्राप्त हुआ। उसने मन्दर पर्वत पर स्थित उमा देवी की कामना की[70]।

आलोचित पुराण मे आख्यात है कि प्राचीन काल मे पवित्र दारूनवन मे सहत्रो गृहस्थ मुनि ईश्वर की आराधना करने के लिए तप कर रहे थे। तदनन्तर काल के सयोग से किसी समय प्राणियो का विनाश करने वाली भयकर वृष्टि हुई तब सभी भूखे मुनियो ने तपोनिधि गौतम के पास जाकर आहार मॉगा। तब गौतम ने उन्हे अत्यन्त सुस्वाद अन्न दिया। सभी ब्राह्मणो शका रहित होकर भोजन किया। बारह वर्ष बीत जाने पर कल्वान्त सदृश कल्याण करने वाली भारी वृष्टि हुई। ससार पूर्व के तुल्य हो गया। तब मुनियो ने जाने की इच्छा की तो गौतम ने उन्हे कुछ दिन और रहने को कहा। तत्पश्चात मुनियो ने मायामयी दुर्बल गाय बनाकर महात्मा गौतम के पास पहुॅचा दी। गायो को देखकर मुनि गौतम ने उन गायो को देखकर मुनि गौतम ने उन गायो के रक्षार्थ उन्हे गोशाला मे बॉध दिया। वे छूते ही मर गयी। तब शोक से पीडित वे महामुनि कार्य एव अकार्य को न समझ पाये। मुनियो ने ऋषि का अन्न खाने से मना कर दिया कि जब तक यह गोहत्या आपके शरीर मे रहेगा उस समय तक आपका अन्न नही खाया जा सकता। अत हम जाते है। वे मुनिगण प्रशन्नता पूर्वक पूर्व के सदृश तप करने देव दारू वन गये [71]। आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि गौतम ने किसी कारण वश उन मुनियो को माया से उत्पन्न गोहत्या को जानकर अत्यन्त कोप पूर्वक शाप दिया कि महा पातकियो के भॉति ये लोग वेद से बहिष्कृत हो जायेगे। इस प्रकार वे सभी बार--बार जन्म ग्रहण करने वाले हो गये। तदुपरान्त शाप के कारण वे सभी मुनि बचे हुए जूठे भोजन के समान हो गये। तब से सभी ऋषि शकर और विष्णु की स्तुति करने लगे कि पाप से हमारी रक्षा करे। इस प्रकार मुनियो के कहने पर शकर ने विष्णु की ओर देखकर मुनियो के कार्य के सम्बन्ध मे पूॅछा। तत्पश्चात विष्णु ने विप्रो को देखकर पशुपति से कहा कि वेद बहिष्कृत पुरूष मे थोडा भी पुण्य नही रहता है। क्योकि धर्म वेद से उत्पन्न हुआ है। तथापि भक्त होने के कारण हम लोगो को इन सभी नरक जाने वालो की रक्षा करनी

चाहिए[72]। तब विष्णु ने शिव से कहा कि वेद बहिष्कृत ब्राह्मणो की रक्षा करने एव उन्हे विमोहित करने के लिए मै शास्त्रो की रचना करूगॉ। ऐसा कहहने पर माधव से प्रबुद्ध किये गये रूद्र ने मोहशास्त्र बनाया और शिव से प्रेरित केशव ने भी मोहकारक शास्त्रो की रचना की। जिनके नाम इस प्रकार है–कापालि, नाकुल, वाम, भैरव पूर्व–पश्चिम, पञ्चरात्र, पाशुपत, एव अन्य सहस्रो प्रकार के शास्त्रो का निर्माण करने के उपरान्त उन देवो ने वेद बहिष्कृत ब्राह्मणो से कहा कि "अनेक कल्पो तक बार–बार घोर नरक मे गिरते एव मनुष्यलोक मे जन्म ग्रहण करते हुए इन शास्त्रो मे कहे गये कर्म को करने से पापो के नष्ट पर ईश्वर की आराधना के बल से आप लोग पुण्यवानो की गति प्राप्त करेगे। इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नही है। इस प्रकार शकर और विष्णु प्रेरित उन महर्षियो ने देवो के आदेश को स्वीकार कर लिया [73]।

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि अनेक सम्प्रदायो से प्रवृत्त उन लोगो ने पुन अन्य शास्त्रो की रचना की और उन शास्त्रो का फल बताकर उन्हे शिष्यो को पढाया और पृथ्वी पर लेकर इस लोक को मोहित किया। उन ऋषियो के कल्याण के लिए भगवान रूद्र ने विष्णु के पास पार्वती को छोडकर दुष्टो के निग्रह हेतु अपने अग से उत्पन्न भैरव को नियुक्त किया एव नन्दी एव देवी को नारायण के पास रखा तथा वहॉ इन्द्रादि देवो को नियुक्त कर दिया। तदुपरान्त शकर ने लोगो को मोहित करने वाला क्रय धारण किया और इस ससार को मोहित करते हुए उन द्विजो के साथ भिक्षा मॉगने लगे। महादेव के जाने के बाद विष्णु ने स्त्री का रूप धारण स्वय महेश्वरी की सेवा करने लगे[74]।

आलोचित पुराण मे आख्यात है कि महादेवी के सेवार्थ विभिन्न देवताओ ने सुन्दर स्त्री का रूप धारण किया था जिनके नाम इस प्रकार है–ब्रह्मा, अग्नि, इन्द्र, यम, एव अन्य देवता[75] शम्भु के अत्यन्त प्रिय गणाध्यक्ष भगवान नदीश्वर यथा पूर्व द्वार पर स्थित रहे। इसी बीच अन्धक नाम का एक दुर्बुद्धि दैत्य पार्वती को हरने की इच्छा से मन्दराचल पर आया। अन्धक को आया देख कर काल भैरव ने उसे रोका। तब उन दोनो मे अत्यन्त भयकर युद्ध हुआ। वृषध्वज ने शूल से उस दैत्य की छाती पर प्रहार किया। तो अन्धक ने सहस्रो अन्धक नामक दैत्यो को उत्पन्न किया। उन अन्धक दैत्यो ने नादि आदि गणो को पराजित कर

दिया। तब पाग्ताकर्ण मेधनाद चण्डेश, चण्ड तापन, विनायक मेधवाह, सोमनन्दी एव वैधुत ये सभी अतिबली गण अन्धक के पास जाकर शूल, शक्ति, ऋषि, गिरि, शिखर और परशु द्वारा युद्ध करने लगे। अति बली दैत्य ने हाथो मे उन सभी के हाथो को पकडकर और घुमाकर उन सभी को सौ योजन दूर फेक दिया। तदुपरान्त अन्धक द्वारा निर्मित सैकडो–सहस्त्रो योद्धा भैरव के ऊपर टूट पडे। भयकर शूल लेकर भैरव रूद्र से लडने लगे। अन्धक की सेना को दुर्जय देखकर भयभीत भैरव स्वरूप हर विभु, अज, देव, वासुदेव की शरण गये [76]। देव शत्रुओ का विनाश करने के लिए देवी पार्वती के समीप स्थित विष्णु ने एक सौ उत्तम देवियो को उत्पन्न किया। उन देवियो ने केशव के माहात्म्य से लीला द्वारा ही रणागण मे सहस्रो अन्धको को यमराज के घर पहुचा दिया। सेना को नष्ट हुआ देखकर अन्धक भी उस युद्ध से पराङ्मुख होकर अत्यन्त वेग से भाग गया। तदुपरान्त महादेव भक्तजनो के हितार्थ बारह वर्ष तक चलने वाली क्रीडा लोक मे समस्त कर मन्दराचल पर आये [77]।

कूर्म पुराण के अनुसार ऐसा उल्लेख मिलता है कि ईश्वर के वापस आने पर सभी गणेश्वर आकर उनके समीप इस प्रकार उपस्थित हुए जैसे द्विज लोग सूर्य की उपासना करते है। उन योगियो के लिए दुर्गम पवित्र भवन मे प्रवेश कर शिव ने नन्दी, भैरव और केशव को देखा। शकर ने प्रणाम करने वाले नन्दी के शिर को सूघा और केशव का आलिगन किया। प्रीति से उन देवी ने महादेव को देखकर उन ईश्वर के चरणो मे प्रणाम किया। तदुपरान्त पार्वती ने शकर से विजय का समाचार कहा एव भैरव ने विष्णु का माहात्म्य बतलाया[78]। तब शिव ने कहा कि जो श्रद्धायुक्त व्यक्ति अव्यक्त एव आत्मा स्वरूप विष्णु को भिन्न मान कर शिव की पूजा करते है तो मुझे प्रिय नही होते। जो लोग जगत को उत्पन्न करने वाले विष्णु से द्वेष करते है। वे सभी मोहित प्राणी रौरवादि नरको मे पकते रहते है। अतएव सभी प्राणियो के रक्षक अव्यय विष्णु को ठीक प्रकार से जानकर समस्त आपत्तियो मे ध्यान करना चाहिए [79]।

विरोचन नामक राजा

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि प्राचीन काल मे अन्धक के निगृहीत हो जाने पर महात्मा प्रहलाद का विरोचन नामक पुत्र राजा हुआ। उस असुर ने देवेन्द्र सहित देवो को

जीत कर बहुत वर्षो तक धर्म पूर्वक चराचर सहित त्रैलोक्य का पालन किया। उसके इस व्यवहार करते समय विष्णु से प्रेरित भगवान सनत्कुमार उसके नगर मे पहुँचे। सिहासन पर बैठे हुए महान असुर ने ब्रह्म पुत्र को देखा और प्रणाम किया तथा हाथ जोडकर यह वचन कहा कि मै धन्य हूँ कि भगवान स्वय मुझे मिले है। तब उसने ब्रह्म पुत्र से कहा कि आप क्यो आये है। तब भगवान ने कहा "मै आपको ही देखने आया हूँ। आप भाग्यवान है। तीनो लोको मे तुम्हारे समान कोई दूसरा धार्मिक नही है। तब असुर राज ने महामुनि से कहा कि आप मुझे धर्मो मे सर्वश्रेष्ठ धर्म बतलाये। तब उन्होने आत्म ज्ञान रूपी अत्यन्त रहस्यमय धर्म बतलाया। तब उसने ज्ञान प्राप्त करने के उपरान्त गुरूदक्षिणा देकर विदा किया तथा वह राज्य पुत्र को देकर योगाभ्यास करने लगा [80]।

आलोचित पुराण मे आख्यात है कि विरोचन का पुत्र वलि अत्यन्त ब्राह्मण भक्त और धार्मिक था। उस बलि से देवो के सहित इन्द्र महान युद्ध करने के उपरान्त पराजित होकर विष्णु की शरण मे गये। तदनन्तर देवो की माता अदिति देवी अत्यन्त दु खित होकर दैत्येन्द्रो के वध हेतु पुत्र की कामना से अत्यन्त कठिन तप करने लगी। वे हृदय से वासुदेव का ध्यान करते हुए विष्णु की शरण मे गयी तो विष्णु प्रसन्न होकर देवमाता अदिति के समक्ष प्रकट हुए[81]। तब अदिति ने विभिन्न विशेषणो द्वारा नमस्कार किया। देवमाता के इस प्रकार प्रसन्न किये जाने पर भगवान कृष्ण ने किचित् हॅसते हुए वर मॉगने को कहा। तो अदिति ने देवो के हितार्थ कृष्ण को ही पुत्र रूप मे मॉगा। भगवान ने कहा वैसा ही हो यह कहकर भगवान वही अन्तर्हित हो गये [82]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि बहुत दिनो के बाद अदिति ने स्वय जनार्दन को धारण किया। तदुपरान्त वलि के पुर में घोर उत्पात प्रकट हुए। सभी उत्पातो को देख वलि ने अपने वृद्ध पितामह प्रहलाद से उत्पात के सम्बन्ध मे पूछा तब प्रहलाद ने कहा असुरो के विनाश हेतु देवो की माता अदिति के गर्भ मे समाविष्ट हुए है जिनके स्वरूप को देवता लोग भी यथार्थ रूप से नही जानते है। जिनसे सभी प्राणियो की उत्पत्ति एव विनाश होता है। जहॉ नाम एव जाति आदि की कोई कल्पना नही होती एव 'सत्ता' की जिनका स्वरूप है वे विष्णु अशरूप से प्रकट हो रहे है। जगत की माता स्वरूप एव उनके

धर्म को धारण करने वाली लक्ष्मी जिनकी माया शक्ति है वे जर्नादन अवतीर्ण हुए है। शकर जिनकी तमोगुणमयी मूर्ति है एव ब्रह्मा जिनके राजोगुणमय शरीर है। वे सत्वगुण धारी विष्णु एक अश से प्रकट हो रहे है। गोविन्द को ऐसा समझकर भक्ति से विनम्र चित्त होकर उन्ही की शरण मे जाओ। इससे तुम्हे शान्ति प्राप्त होगी [83]। तदुपरान्त प्रहलाद के कहने से वलि विष्णु का शरणागत होकर विश्व का पालन करने लगा। समय आने पर कश्यप से स्वय देवमाता अदिति ने महाविष्णु को उत्पन्न किया[84]।

कूर्म पुराण के अनुसार ऐसा उल्लेख मिलता है कि उपनयन सस्कार हो जाने के अनन्तर भगवान हरि ने तीनो लोको को प्रदर्शित करते हुए भरद्वाज से वेदो एव सदाचार का अध्ययन किया। तदुपरान्त समयानुसार विरोचन के पुत्र वलि ने यज्ञ द्वारा यज्ञेश्वर विष्णु का अर्चन किया। अत्यधिक धन देकर ब्राह्मणो की पूजा की। ब्रह्मर्षि लोग उस महात्मा के यज्ञ स्थल मे आये। भरद्वाज से प्रेरित भगवान विष्णु वामन रूप धारण कर उस यज्ञ स्थान मे आये। शरीर पर उपवीत धारण किये, पलाशदण्ड से सुशोभित, भस्म लगाये हुए ब्राह्मण के रूप मे वेदमन्त्रो का उच्चारण करते हुए भिक्षुक हरि ने बलि से तीन पगो द्वारा मापी गयी भूमि की याचना की। तब बलि ने श्रृद्धापूर्वक विष्णु के दोनो चरणो का प्रक्षालन करने के उपरान्त स्वर्ण निर्मित पात्र द्वारा आचमन कराया और कहा कि मै आपको यह तीन पग भूमि देता हूँ, हरि प्रसन्न हो जल गिराया। उन आदि देव ने पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक मे पाद विक्षेप किया। तीनो लोको को आक्रान्त कर ईश्वर का चरण प्रजापति लोक से ब्रह्मलोक तक पहुॅचा। तदुपरान्त पितामह ने उपस्थित होकर विष्ण को सन्तुष्ट किया। उस ब्रह्माण के ऊपरी कपाल को भेदकर विष्णु का चरण दिव्यावरणो मे जाने लगा। तदनन्तर अण्ड का भेद होने के कारण पुण्यकर्मियो से सेवित जल नीचे गिरा। तभी से आकाश स्थित वह श्रेष्ठ नदी प्रवर्तित है। ब्रह्म ने उस जल को गगा के नाम से अभिहित किया है [85]।

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि उन विश्वमय शरीर वाले पुरुष विष्णु को देखकर बलि ने अपने भक्तियुक्त होकर नारायण को नमस्कार किया। पुन वामन होकर वासुदेव ने बलि से कहा कि आपका दिया हुआ तीनो लोक अब मेरा ही है। ऐसा सुन बलि ने पुन प्रमाण कर उनके हाथ पर जल गिराया और कहा कि मै अपने आपको तुम्हे प्रदान

करता हूँ [86]। आलोचित पुराण मे आख्यात है कि बलि को दिया हुआ ग्रहण कर बलि ने पुन दैत्य से कहा कि अब पाताल मूल मे चले जाओ। "आप वहॉ निरन्तर रहते हुए देवो को भी न प्राप्त होने वाले भोगो का उपभोग कर सतत मेरा ध्यान करे। कल्पान्त होने पर पुन मुझसे प्रवेश करोगे।" बलि से ऐसा कहने के बाद विष्णु ने इन्द्र को तीनो लोक दे दिया[87]। यह अद्भूद कर्म कर वामन रुपधारी विष्णु सभी को देखते–देखते अन्तर्हित हो गये। वह विष्णु भक्त बलि भी विष्णु की प्रेरणा से प्रहलाद एव असुर श्रेष्ठो के साथ पाताल मे चला गया [88]।

वाण नामक राजा

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि बलि के महान सौ पुत्रो मे वाण नामक असुर प्रधान था[89]। शकर का वह भक्त राजा राज्य का पालन करते हुए तीनो लोको को वशीभूत कर इन्द्र को पीडित करने लगा। तदन्तर इन्द्रादि देव शकर के पास गये और उनसे कहा कि आपका भक्त वाण हम लोगो को पीडित कर रहा है। देवो के ऐसा कहने पर महेश्वर ने एक ही वाण से वाण के पुरा को लीलापूर्वक दग्ध कर दिया। जब वह पुर जलने लगा तब वह वाण रुद्र की शरण मे गया। शकर का लिग मस्तक पर धारण कर वह उस पुर से निकल गया और परमेश्वर की स्तुति करने लगा। तब शकर ने उस बाण को गणपति पद प्रदान किया [90]।

दनु वंशज

कूर्म पुराण के अनुसार दनु के पुत्रो का नामोल्लेख इस प्रकार मिलता है – तार, शम्बर, कपिला, शकर, स्वर्भानु एव वृषपर्वा ये [91]।

नागो की उत्पत्ति

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि सुरसा को अनेक शिरो वाले सहस्र सर्प उत्पन्न हुए। इसी प्रकार अरिष्टा ने एक सहस्र आकाशपुरी महात्मा गन्धर्वो को जन्म दिया । अनन्त इत्यादि महान नाग कद्रू के पुत्र कहे गये है [92]।

ताम्रा ने शुकी, श्येनी, भासी, सुग्रीवा, गृधिका एव शुचि नामक छ· कन्यायो को जन्म दिया सुरभि ने गायो एव महिषियो को उत्पन्न किया। इरा ने सभी प्रकार के वृक्ष लता,

बल्लरी और तृण की जातियो को उत्पन्न किया[93]। खसा ने पक्षो और राक्षसो को मुनि ने अप्सराओ को तथा क्रोधवशा मे राक्षसो को उत्पन्न किया [94]।

विनता के गरुड और अरूण नामक दो प्रसिद्ध हुए। गरूड कठोर तप करके शकर के अनुग्रह से विष्णु के वाहन बन गये [95]। इसी प्रकार पूर्वकाल मे अरुण ने तपस्या द्वारा महादेव की आराधना की। तब शम्भु ने उसे सूर्य का सारथी बना दिया [96]। कूर्मपुराण मे आख्यात है कि दक्ष की सत्ताइस पुत्तियॉ कही गयी है। अरिष्टनेमि की पत्नियो को सोलह सन्ताने हुयी। बहुपुत्र के चार विद्युत नामक पुत्र कहे गये है। इसी प्रकार अगिरा के पुत्र ब्रह्म द्वारा सत्कृत श्रेष्ठ ऋषि थे। आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि देवर्षि कृशाश्व के पुत्र देवो के शस्त्र थे। सहस्र युगो का अन्त होने पर विभिन्न मन्वन्तरो मे निश्चित रुप से ये अपने नामो के तुल्य कार्यो के साथ पुन उत्पन्न होते है [97]।

कूर्मपुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि कश्यप ने प्रजा की वृद्धि हेतु और पुत्रो की इच्छा से तप करने लगे। तप के प्रभाव से कश्यप को वत्सर और असित नामक दो पुत्र हुए। वत्सर ने नैध्रुव और रैभ्य उत्पन्न हुए। च्यवन की पुत्री सुमेधा नैध्रुव की पत्नी थी । उस सुमेधा ने कुण्डपायी पुत्रो को उत्पन्न किया[98]। असित की एकपर्वा नामक पत्नी से ब्रह्मिष्ठ एव देवल एव श्रीमान् उत्पन्न हुआ। उसे शकर के अनुग्रह से उत्तम योग प्राप्त हुआ[99]।

पुलस्त्य वश

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि तृण बिन्दु की एक पुत्री इलविला नाम की थी । उन्होने वह कन्या पुलस्त्य को दे दी। उस इलबिला से विश्रवा ऋषि उत्पन्न हुए विश्रव्य की चार पत्नियॉ थी जिनके नाम क्रमश इस प्रकार है। पुष्पोत्कटा, राका, कैकसी और देववर्णिनी 'देवरूपिणी ने कुबेर को जन्म दिया। कैकसी ने रावण, कुम्भकर्ण विभीषण और सूर्पणखा को उत्पन्न किया। पुष्कोटा ने महोदर, प्रहस्त, महापार्श्व एव खर तथा कुम्भनिसी नामक कन्या को जन्म दिया। राका ने त्रिशिरा, दूषण ओर विद्युज्जिह्व नामक पुत्र हुए। पुलस्त्य के वश मे ये दस रुद्रभक्त एव क्रूरकार्मा राक्षसो का उल्लेख किया गया है। समस्त मृण, ब्याल, दॉढो वाले प्राणी, भूत पिशाच सूर्य, शूकर, और हाथी पुलह के पुत्र है [100]।

आलोचित पुराण मे आख्यात है कि उस वैवस्वत मनवन्तर क्रतु को सन्तान रहित कहा गया है। मरीचि के पुत्र स्वय प्रजापति कश्यप थे। भृग से दैत्याचार्य शुक्र उत्पन्न हुए।

अग्नि ने आत्रेयो को उत्पन्न किया[101]। नारद की माया से हर्यवश्वो के नष्ट होने पर क्रोध से दक्ष ने नारद को शाप दिया चूँकि आपकी माया से मेरे सभी पुत्र नष्ट हो गये है अत आप सन्तान रहित हो जायेगे। नारद दक्ष के शाप से उर्ध्वरेता हो गये। उन्होने वशिष्ठ को देवी अरूधती को दे दिया[102]। वशिष्ठ ने अरुधन्ती से शक्ति नामक पुत्र को उत्पन्न किया। शक्ति के पुत्र पराशर ने शकर की अराधना कर कृष्णद्वैयायन नामक पुत्र प्राप्त किया। भगवान शकर के शुक नाम से द्वैपायन के पुत्र उत्पन्न हुए। अशाश रुप से पृथ्वी पर उत्पन्न होकर अपने परम पद को चले गये[103]।

आलोचित पुराण मे आख्यात है कि भूतिश्रवा, प्रभु, शम्भु, कृष्ण, एव पॉचवे गौर नामक अत्यन्त तपस्वी पॉच पुत्र एव कीर्तिमती नाम की कन्या उत्पन्न हुई जो योगमाता एव धृतव्रता थी[104]।

कश्यप क्षत्रिय वश

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि आदिति ने कश्यत से आदित्य को उत्पन्न किया। उन आदित्य की सज्ञा, राज्ञी, प्रभा और छाया नाम की चार भार्याये थी। मनु त्वष्टा की पुत्री सज्ञा ने सूर्य से श्रेष्ठ यम एव यमुना को उत्पन्न किया । राज्ञी ने रैवत को उत्पन्न किया।

प्रभा ने आदित्य से प्रभात को उत्पन्न किया तथा छाया ने क्रमानुसार सावर्ण, शनि, तप्ती एव विशिष्ट को उत्पन्न किया। प्रथम मनु को इक्ष्वाकु, नभग, धृष्ट, शर्याति नरिष्यन्त, नाभाग, अरिष्ट, कारुषक, एव पृषध्र नामक नव पुत्र उत्पन्न हुए [105]। सोमवश की वृद्धि हेतु (मनु की) ज्येष्ठ पुत्री, इलादेवी बुध के ग्रह मे गयी एव चन्द्रमा पुत्र वुध के सयोग से इला ने पुरुवा को जन्म दिया। सुन्दर पुत्र की प्राप्ति के उपरान्त इला को शुद्ध पुरुषत्व की प्राप्ति हुई और उनका नाम सुद्युम्न पडा। पुरुष मे इला ने उत्कल, गप एव विनताख नामक तीन पुत्रो को प्राप्त किया। तदान्तर वह पुन स्त्री हो गयी[106]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि इक्ष्वाकु से उत्पन्न पुत्रो मे ज्येष्ठ बिकुक्षि नामक वीर राजा हुए। जिनसे पन्द्रह पुत्र उत्पन्न हुए। उनमे ककुत्स्थ, सबसे बडे थे। विश्वक से आर्द्रता की उत्पत्ति हुई एव उनका पुत्र युवनाश्व था। युवानाश्व गोकर्ण तीर्थ गये। वहॉ तप कर रहे गौतम का दर्शन करने के उपरान्त पुत्र की इच्छा वाले राजा ने दण्डवत कर गौतम से पूछा कि किस कर्म द्वारा धार्मिक पुत्र प्राप्ति का उपाय बतलाते हुए कहा कि आदि और अन्त से रहित नारायण देव की आराधना करने से धार्मिक पुत्र प्राप्त होता है। स्वय ब्रह्मा जिनके पुत्र शकर उनके पौत्र है। उन आदि कृष्ण की आराधना करके मनुष्य सत्पुत्र प्राप्त करता है[107]। गौतम के वचन को सुनकर युवानाश्व नामक उस राजा ने वासदेव की आराधना की। तब उसे श्रावस्ति नामक प्रसिद्ध वीर पुत्र हुआ जिसने गौडदेश मे श्रावस्ति नामक महापुरी का निर्माण किया। उससे वृहदश्व उत्पन्न हुए एव वृहदश्व से कुवलयाश्वक की उत्पत्ति हुई । धुन्ध नामक असुर को मारकर वे धुन्धुमार के नाम से प्रसिद्ध हुए। धुन्धुमार के दृढाश्व और कपिलाश्व नामक तीन पुत्र का उल्लेख मिलता है। दुढाश्व के पुत्र प्रमोद नामक तीन पुत्र कहे जाते है। प्रमोद का पुत्र कहे जाते है। प्रमोद का पुत्र हर्यश्व तथा हर्यश्य का पुत्र निकुम्भ था। निकुम्भ से सहताश्वक की उत्पत्ति हुई। सहताश्व के कृशाश्व ओर रणाश्व नामक दो पुत्रो को उल्लेख किया गया है। रणाश्व इन्द्र के तल्य बलवान, युवनाश्व नामक पुत्र था[108]।

आलोचित पुराण ऐसा उल्लेख मिलता है कि ऋषियो की कृपा से वारुणी नामक याग करने पर उसे मान्धाता नामक विष्णु भक्त पुत्र प्राप्त किये। मान्धाता को पुरुकुज्स, वीर्यवान, अम्बरीष का दूसरा पुत्र युवनाश्व कहा जाता है। युवनाश्व का पुत्र हरित एव हरित का पुत्र हारित था। इसी तरह पुरुकुत्स को नर्मदा से महायशस्वी त्रसदस्यु एव त्रसदस्यु से सभूति की उत्पत्ति हुई। उस सभूति का पुत्र विष्णुवृद्ध एव दूसरा अनरण्य का पुत्र वृहदश्व एव वृहदश्व से हर्यश्व हुआ[109]। कूर्मपुराण मे ऐसा उल्लिखित है कि हर्यश्व राजा को कर्दम प्रजापति के अनुग्रह से सूर्यभक्त धार्मिक पुत्र वसुमना हुआ। वसुमना राजा को सूर्य की आराधना से शत्रुओ का दमन करने वाला त्रिन्धावा नामक पुत्र प्राप्त हुआ। उस धम्रपरायण रारा ने शत्रुओ को जीतकर अश्वमेघ यज्ञ किया[110]। ऐसा उल्लिखित है कि यज्ञ की समाप्ति पर यज्ञशाला मे

आये, ऋषिगण एव इन्द्रादि देवता से वसुमना, ने पूछा कि इस लोक यज्ञ, तप अथवा सन्यास इनमे कौन अधिक श्रेयस्कर है। वशिष्ठ के अनुसार वेदो का अध्ययन करने के उपरान्त धर्मपूर्वक पुत्र उत्पन्न कर यज्ञो द्वारा यज्ञेश्वर की आराधना कर बन मे जाना चाहिए [111]।

पुलस्य के अनुसार विधि पूर्वक यज्ञ द्वारा देवो का पूजन कर तथा तप द्वारा योगी देव परमेश्वर की आराधना कर सन्यास ग्रहण करना चाहिए [112]। पुलह के अनुसार जिन्हे पुरुषोत्तम कहा जाता है तपस्या द्वारा उन सूर्यदेव की आराधना कर मोक्ष प्राप्त करे[113]। जमदग्नि के अनुसार जिन भगवान ने अजन्मा ब्रह्मा को नाभि मे अद्वितीय जगत को कारण स्वरुप वौज की स्थना की यज्ञो द्वारा उन्ही की आराधना करनी चाहिए [114]।

विश्वामित्र के अनुसार उग्र तपस्या द्वारा न कि अन्य यज्ञो द्वारा उन रुद्र की आराधना की जाती है जो अग्नि स्वरुप स्वयभू विश्वतोमुख है[115]। भारद्वाज के अनुसार यज्ञो द्वारा जिन सनातन अग्निदेव की पूजा की जाती है सभी देवो के शरीर स्वरूप के परमेश्वर ही तप द्वारा पूजित होते है[116]। अत्रि के अनुसार अत्यन्त महान तप करके उन महेश्वर की पूजा की जाती हे जिससे यह सम्पूर्ण विश्व उत्पन्न हुआ है एव प्रजापति जिनकी सन्तान है[117]।

गौतम के अनुसार–तपस्या द्वारा उन देवाधिदेव की पूजा करनी चाहिए जिनको शक्ति से यह जगत उत्पन्न हुआ है [118]। कश्यप के अनुसार तप द्वारा आराधना करने से सहस्रनेत्र शम्भु प्रसन्न होते है [119]। क्रुत के अनुसार अध्ययन यज्ञ समाप्त कर पुत्र प्राप्त कर लेने वाले पुरुष के लिए शास्त्रो मे तप के अतिरिक्त कोई धर्म नही है [120]।

त्रिधन्वा

त्रिधन्वा ने पृथ्वी का पालन किया उसे त्रय्यारूण नायक पुत्र हुआ। त्रय्यारूण को सत्यव्रत नामक महावलवान पुत्र हुआ। सत्यव्रत की पत्नी सत्यधना से हरिश्चन्द्र की उत्पत्ति हुई। हरिश्चन्द्र को रोहित नामक वीर्य पान पुत्र हुआ। रोहित का पुत्र हरित था। उस हरित का पुत्र धुन्धु था। धुन्ध को विजय और सुदेव नामक दो पुत्र हुए। विजय को कारूक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ कारूक का पुत्र वृक था। वृक से बाहु हुआ। उस बाहु का धार्मिक पुत्र

राजा सगर था। सगर की प्रभा एव भानुमति नामक दो पत्नियॉ थी। उन दोनो से पूजित और्वाग्नि ने उन्हे उत्तम वर दिया[121]।

भानुमति ने असमञ्जस नामक एक पुत्र लिया। कल्याणमयी प्रभा ने साठ हजार पुत्र लिये असमञ्य के पुत्र अशुमन नामक राजा थे। अशुमन के पुत्र दिलीप थे और दिलीप से भगीरथ उत्पन्न हुए जिन्होने तप करके महादेव के अनुग्रह से भागीरथी गगा को पृथ्वी पर अवतरित किया। भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न मन शकर ने सिर पर चन्द्रमा के अग्रभाग मे गगा को धारण किया ।

आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि भगीरथ को श्रुत का पुत्र नाभाग उस नाभाग से श्रुत नामक पुत्र हुआ उस श्रुत का पुत्र नाभाग था। उस नाभाग से सिन्धुद्वीप उत्पन्न हुआ। सिन्धुद्वीप का पुत्र अयुतायु था और उस अयुतायु का पुत्र ऋतु पर्ण था। ऋतुपर्ण को सुदास नामक धार्मिक पुत्र हुआ। उस सुदास का सौदास नामक पुत्र कल्माषपाद नाम से प्रसिद्ध हुआ। वशिष्ठ ने कल्माषपाद क्षेत्र मे पत्नी से इक्ष्वाकु कुल के ध्वजस्वरूप अश्मक नामक पुत्र को उत्पन्न कराया। अश्मक की उत्कला नामक पत्नी से नकुल नायक राजा की उत्पत्ति हुई वह राजा परशुराम के भय से अत्यन्त दु खित होकर वन मे चला गया [122]।

आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि नारी कवच से शतरथ । शतरथ से विलिविलि की उत्पत्ति हुई। श्रीमान वृद्ध शर्मा विलिविलि के पुत्र हुए। वृद्धशर्मा से विश्वसह और उस विश्वसह से खटवाग का जन्म हुआ उस खटवाग का पुत्र दीर्घवाहु, तथा दीर्घवाहु से रघु का जन्म हुआ [123]। रघु से अज उत्पन्न हुए। अज से दशरथ दशरथ से लोक प्रसिद्ध धर्मज्ञ वीर राम। दशरथ से ही भरत, लक्ष्मण, और शत्रुध्न की उत्पत्ति हुई। विष्णु की शक्ति से युक्त सभी पुत्र युद्ध मे इन्द्र के तुल्य के। रावण का नाश करने वाले के लिए विश्व के पालन कर्ता विष्णु अशरूप से प्रकट हुए। जनक की पुत्री राम की पत्नी थी। राम की पत्नी तीनो लोको मे सीता के नाम से विख्यात है[1124]।

पुरूरवा राजा

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि इला का पुत्र पुरूरवा था। उसे इन्द्र के समान तेजस्वी छ पुत्र हुए– आयु, भायु, अभायु, वीर्यवान, विश्वासु, शतायु और श्रुतायु ये उर्वशी के छ पुत्र कहे गये है। राहु की कन्या प्रभा से पॉच वीर पुत्र हुए। उनमे नहुष प्रथम थे। नहुष को पितृकन्या विरजा से यदि यति, ययाति, सयाति, आयाति और पॉचवे अश्वन पॉच पुत्र थे। ययाति से शुक्राचार्य की पुत्री देवयानी एव वृषवर्षा की कन्या शर्मिष्ठा को गुरूपत्नी के रूप मे प्राप्त किया। देवयानी ने यदु और तुर्वसु को जन्म दिया। शमिष्ठि ने भी दुह्य, अनु और पूरू को उत्पन्न किया। ययाति ने ज्येष्ठ पुत्र यदु को छोडकर पिता के वचन का पालन करने वाले कनिष्ठ पुरू को अभिषिक्त किया। राजा ययाति से तुर्वसु को दक्षिण पूर्व की दिशा मे ज्येष्ठ पुत्र यदु को दक्षिण–पश्चिम मे, पश्चिम मे दुह्यु को उत्तर मे अनु को नियोजित किया। यदु को सहस्रजित कोष्टु, नील, अजित और रघु नामक पॉच देवतुल्य पुत्र हुए [125]।

इसी प्रकार सहस्रजित का पुत्र शतजित नाम का राजा था। शतजित् को भी हैहय, हय और श्रेष्ठ वेणुहय तीन पुत्र थे। हैहय को धर्म नाम से प्रसिद्ध पुत्र हुआ। नाम से धर्मनेत्र, धर्मनेत्र का पुत्र कीर्ति, कीर्ति का पुत्र सजित था।

सजित को नहिष्मान, एव महिष्मान का पुत्र भद्रश्रेण्य था। भद्रश्रेण्य का पुत्र दुर्दुभ राजा था। दुर्दभ का धनक धनक के कृतवीर्य कृताग्नि, कृतवर्मा, और कृतौजा, नामक चार पुत्र थे। उनमे कृतवीर्य का पुत्र अर्जुन था अर्जुन सहस्रवाहुओ वाला तेजस्वी एव धुनेर्वेदज्ञो मे श्रेष्ठ था। जमदग्नि के पुत्र जर्नादन परशुराम उस सहस्रार्जुन के काल हुए। सहस्रार्जुन के सौ पुत्र थे। उनमे शूर, शूरसेन, कृष्ण, धृष्ण और जयध्वज नामक पॉच पुत्र महारथी अस्त्र सम्पन्न, बलवान, शूर धर्मात्मा और मनस्वी थे। बलवान जयध्वज नारायण का भक्त था [126]।

व्यास परम्परा कालक्रम

व्यासों के काल और क्रम

इस वर्तमान मनन्वतन्तर के पूर्व कालिक व्यास कूर्मपुराण 1 50 1-9

प्रथम द्वापर मे विमुखस्वायम्भुव मनु को व्यास माना गया है ।

द्वितीय द्वापर मे प्रजापति वेदव्यास थे ।

तृतीय द्वापर मे शुक्राचर्य

चतुर्थ द्वापर मे बृहस्पतिव्यास

पञ्चम द्वापर मे सविता

छठवे द्वापर मे मृत्यु का व्यास कहा गया है ।

सातवे द्वापर मे इन्द्र

आठवे द्वापर मे वशिष्ठ को व्यास माना गया है ।

नवम् द्वापर मे सारस्वत

दशम् द्वापर मे त्रिधामा व्यास माने गये है ।

ग्यारहवे द्वापर मे त्रिवृष

बारहवे द्वापर मे शततेजा को व्यास कहा गया है ।

तेरहवे द्वापर मे धर्म

चौदहवें द्वापर मे तरक्षु व्यास होते है ।

पन्द्रहवें द्वापर मे त्रयारूणि

सोलहवें द्वापर मे धनञ्जय

सत्रहवें द्वापर मे कृतञ्जय

अट्ठारहवे द्वापर मे ॠतञ्जय को व्यास माना गया है ।

उन्नीसवे द्वापर मे भरद्वाज व्यास थे ।

बीसवे द्वापर मे गौतम व्यास

इक्कीसवें द्वापर मे राजश्रवा

बाइसवे द्वापर मे श्रेष्ठ शुष्मायण व्यास हुए

तेइसवे द्वापर मे तृण बिन्दु

चौबीसवे द्वापर मे वाल्मीकि को व्यास कहा गया है ।

पच्चीसवे द्वापर मे शक्ति

छब्बीसवे द्वापर मे पराशर व्यास हुए ।

सत्ताइसवें द्वापर मे महामुनि जातूकर्ण व्यास थे ।

अट्ठाइसवे द्वापर मे पराशर के पुत्र कृष्णद्वैपायन ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) कूर्म पुराण 1 9 6-7

(2) कूर्म पुराण 1 9 8-10

(3) कूर्म पुराण 1 9 11-16

(4) कूर्म पुराण 1 9 17-25

(5) कूर्म पुराण 1 9 18-30

(6) कूर्म पुराण 1 9 31-35

(7) कूर्म पुराण 1 9 36-40

(8) कूर्म पुराण 1 9 41-47

(9) कूर्म पुराण 1 9 48-50

(10) कूर्म पुराण 1 9 50-56

(11) कूर्म पुराण 1 9 6-57-61

(12) कूर्म पुराण 1 9 62-66

(13) कूर्म पुराण 1 9 6-67-87

(14) कूर्म पुराण 1 10 1-8

(15) कूर्म पुराण 1 10 9-12

(16) कूर्म पुराण 1 10 13-21

(17) कूर्म पुराण 1 10 22-23

(18) कूर्म पुराण 1.10 25-25

(19) कूर्म पुराण 1 10 26-27

(20) कूर्म पुराण 1 10 28

(21) कूर्म पुराण 1 10 29

(22) कूर्म पुराण 1 10 30-36

(23) कूर्म पुराण 1 10 37-71

(24) कूर्म पुराण 1 10 72-75

(25) कूर्म पुराण 1 10 76-86

(26) कूर्म पुराण 1 12.1

(27) कूर्म पुराण 1 12 2-5

(28) कूर्म पुराण 1 12 6-11

(29) कूर्म पुराण 1 12 12-13

(30) कूर्म पुराण 1 12 14-18

(31) कूर्म पुराण 1 12 19-20

(32) कूर्म पुराण 1 12 21-22

(33) कूर्म पुराण 1 13 2

(34) कूर्म पुराण 1 13 3-6

(35) कूर्म पुराण 1 13 7-8

(36) कूर्म पुराण 1.13 9-10

(37) कूर्म पुराण 1 13 13

(38) कूर्म पुराण 1 13 14-15

(39) कूर्म पुराण 1 13 20

(40) कूर्म पुराण 1 13 22

(41) कूर्म पुराण 1 13 50-51

(42) कूर्म पुराण 1 13 52-54

(43) कूर्म पुराण 1 13 55-58

(44) कूर्म पुराण 1 13 59-63

(45) कूर्म पुराण 1 14 1-2

(46) कूर्म पुराण 1 14 7

(47) कूर्म पुराण 1 14 8

(48) कूर्म पुराण 1 14 26

(49) कूर्म पुराण 1 14 27-32

(50) कूर्म पुराण 1 14 14-33

(51) कूर्म पुराण 1 14 34-40

(52) कूर्म पुराण 1 14 41-44

(53) कूर्म पुराण 1 14 58-59

(54) कूर्म पुराण 1 14 64

(55) कूर्म पुराण 1 14 65-66

(56) कूर्म पुराण 1 14 67-76

(57) कूर्म पुराण 1.15 1-2

(58) कूर्म पुराण 1 15 3-5

(59) कूर्म पुराण 1 15 6-14

(60) कूर्म पुराण 1 15 16-21

(61) कूर्म पुराण 1 15 27

(62) कूर्म पुराण 1 15 24-39

(63) कूर्म पुराण 1 15 40-47

(64) कूर्म पुराण 1 15 48-50

(65) कूर्म पुराण 1 15 51-64

(66) कूर्म पुराण 1 15 65-70

(67) कूर्म पुराण 1 15 71-76

(68) कूर्म पुराण 1 15 77-79

(69) कूर्म पुराण 1 15 80-88

(70) कूर्म पुराण 1 15 89-90

(71) कूर्म पुराण 1 15 91-102

(72) कूर्म पुराण 1 15 103-110

(73) कूर्म पुराण 1 15 111-116

(74) कूर्म पुराण 1 15 117-122

(75) कूर्म पुराण 1 15 123

(76) कूर्म पुराण 1 15 124-134

(77) कूर्म पुराण 1 15 135-138

(78) कूर्म पुराण 1 15 139-143

(79) कूर्म पुराण 1 15.162-164

(80) कूर्म पुराण 1 16 1-11

(81) कूर्म पुराण 1 16 12-17

(82) कूर्म पुराण 1 16 18-26

(83) कूर्म पुराण 1 16 27-39

(84) कूर्म पुराण 1 16 40-41

(85) कूर्म पुराण 1 16 44-57

(86) कूर्म पुराण 1 16 58-60

(87) कूर्म पुराण 1 16 61-63

(88) कूर्म पुराण 1 16 65-66

(89) कूर्म पुराण 1 17 1

(90) कूर्म पुराण 1 17 2-7

(91) कूर्म पुराण 1 17 8

(92) कूर्म पुराण 1 17 9-10

(93) कूर्म पुराण 1 17 12

(94) कूर्म पुराण 1 17 13

(95) कूर्म पुराण 1 17 14

(96) कूर्म पुराण 1 17 15

(97) कूर्म पुराण 1 17 17-19

(98) कूर्म पुराण 1 18 2-4

(99) कूर्म पुराण 1 18 5-6

(100) कूर्म पुराण 1 18 11-15

(101) कूर्म पुराण 1 18 11-16-19

(102) कूर्म पुराण 1 18 20-22

(103) कूर्म पुराण 1 18 23-25

(104) कूर्म पुराण 1 18 26

(105) कूर्म पुराण 1 19 1-5

(106) कूर्म पुराण 1 19 6-9

(107) कूर्म पुराण 1 19 10-16

(108) कूर्म पुराण 1 19 17-22

(109) कूर्म पुराण 1 19 23-27

(110) कूर्म पुराण 1 19 28-30

(111) कूर्म पुराण 1 19 31-34

(112) कूर्म पुराण 1 19 35

(113) कूर्म पुराण 1 19 36

(114) कूर्म पुराण 1 19 37

(115) कूर्म पुराण 1 19 38

(116) कूर्म पुराण 1 19 39

(117) कूर्म पुराण 1 19 40

(118) कूर्म पुराण 1 19 41

(119) कूर्म पुराण 1 19 42

(120) कूर्म पुराण 1 19 43

(121) कूर्म पुराण 1 20.1-6

(122) कूर्म पुराण 1 20 11-14

(123) कूर्म पुराण 1 20 15-16

(124) कूर्म पुराण 1 20 17-19

(125) कूर्म पुराण 1 21 1-11

(126) कूर्म पुराण 1 21 12-20

पंचम अध्याय

कूर्म पुराण में प्रतिबिम्बित सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति

कूर्म पुराण में प्रतिबिम्बित सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति

वर्ण व्यवस्था

कूर्म पुराण के अनुसार वर्णो की उत्पत्ति का दैवी उद्भव परिकल्पित है। कूर्मावातार नारायण क्षीर सागर मे शेष शैय्या मे दीर्घ काल तक शयन करने के उपरान्त जब जागृत हुए तब उनको सृष्टि निर्माण की चिन्ता व्याप्त हुई। उनकी इच्छा (प्रसन्नता प्रसाद) से लोकपितामह चर्तुमुख ब्रम्हा की उत्पत्ति हुई तत्पश्चात कतिपय कारणो से क्रोध उत्पन्न हुआ उस क्रोध से अपने तेज से त्रैयलोक्य का सहार करते हुए महेश्वर(रूद्र) उत्पन्न हुए। तद्नन्तर सभी प्राणियो को मोहित करने वाली लक्ष्मी उत्पन्न हुई। वे नारायणी इस (ससार) को अपने तेज से आपूरित करती हुई विष्णु स्वरूप नारायण देव (कूर्म) के पार्श्व मे बैठ गयी[1]। इस प्रकार नारायणी को देखकर ब्रह्मा ने नारायण से कहा कि लक्ष्मी देवी को प्राणियो के मोहार्थ आप नियुक्त करे जिससे विशाल सृष्टि को विकास हो सके[2]। नारायण के आदेश स श्रीदेवी ने ससार मे देवता, असुर एव मनुष्यो को मोहित कर ससार मे उत्पन्न होने के लिए प्रेरित किया। ध्यातव्य है कि ऐसे ब्राम्हणो को जो जन, तप, व्रत, धर्म–कार्य मे लगे थे उन्हे बिना मोहित किये अपनी माया से वचित रखा[3]। तदुपरान्त लोकपितामह ने नारायण के आज्ञा से सृष्टि के चर अचर प्राणियो की उत्पत्ति की उसमे योग विद्या से मरीचि आदि नव पुत्रो को उत्पन्न किया[4]। कूर्म पुराण मे आख्यात है कि चारो वर्णो को ब्रम्हा ने लोकवृद्धि हेतु अपने अगो द्वारा उत्पन्न किया । उनके मुख, बाहु, उरू और पैर से क्रमश ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र वर्णो की उत्पत्ति हुई[5]।

ध्यातव्य है कि अन्य पुराणो मे भी जो चातुर्वर्ण का दैवी उदभव परिकल्पित है । विष्णु पुराण के अनुसार ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र की उत्पत्ति विष्णु के मुख, बॉहु, जघा, तथा चरण से है[6] वायु[7] और ब्रम्हाण्ड[8] पुराणो मे चारो वर्णो को ब्रह्मा के अगो से उत्पन्न माना गया है। ऋृग्वेद मे चारो वर्णो को मूल पुरूष के इन्हीं अगो से उत्पन्न माना गया है [9]।

मत्स्य पुराण के अनुसार ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, तथा शूद्र ब्रहमोद्भूत भगवान वामदेव के मुख, बाहु, जघा, तथा चरण से क्रमश उत्पन्न है[10]।

ध्यातव्य है कि अन्य पुराणो मे वर्ण उत्पत्ति विषयक जो वृतान्त मिलते है वे कूर्म पुराण से किचित भिन्न है। भविष्य पुराण मे उल्लेख मिलता है कि ब्रह्मा ने अपने मुख से सोम को उत्पन्न किया जिन्हे द्विजुराज, महाबुद्धिमान, सर्ववेद, विशारद् कहा जाता है[11]। भुजाओ से क्षत्रराज सूर्य को उत्पन्न किया जिन्हे सरिताओ का पति कहा गया है। तथा चरणो से विश्वकर्मा दक्ष को उत्पन्न किया जो कलाओ के विशेषज्ञ, शूद्रराज एव सुकृत्यकर्मा कहे जाते है। इसके पश्चात् द्विजराज सोमद्वारा ब्राह्मण, सूर्य द्वारा क्षत्रिय गण, समुद्र द्वारा समस्त वैश्य और विश्वकर्मा तथा दक्ष द्वारा शूद्र उत्पन्न हुए है ।

भविष्य पुराण[12] मे कर्म को प्रधान मानते हुए कहा गया है कि ब्राह्मण ज्ञान से ज्येष्ठ होते है, क्षत्रिय कर्म से, वैश्य धन से और शूद्र जन्म से ज्येष्ठ माने जाते है[13]।

वमन पुराण[14] मे ब्रह्मा की वृक्ष रूप मे कल्पना की गयी है जिसमे इस बात का उल्लेख है कि ब्राह्मण ब्रह्मा रूपी वृक्ष के मूल है, क्षत्रिय स्कन्ध है, वैश्य शाखा है, तथा शूद्र पत्र है।

कूर्म पुराण[15] मे वर्णित सत्व, रज, एव तम के योग से सर्वोच्च परमात्मा की तीन मूर्तियॉ कही गयी हैं इसकी पुष्टि विष्णु[16], वायु[17], वामन[18], पद्म[19], एव गरूड पुराण[20] से भी होती है। ज्ञातव्य है कि पद्म पुराण मे कहा गया है कि वैश्य के अर्न्तगत ही शूद्र का अर्न्तभाव हो जाता है क्योकि दोनो के व्यावसायिक कर्म लगभग समान होते है ।

कर्म की प्रधानता पर निरुपित करते हुए कूर्म पुराण मे कहा गया है कि क्रियावान् ब्राह्मणो के लिए प्रजापत्य स्थान क्षत्रियो के लिए ऐन्द्र स्थान (सग्राम मे पलायन न करने वाले) एव वैश्यो के लिए मारूत स्थान तथा शूद्रो के लिए गन्धर्व स्थान की प्राप्ति होती है[21]।

ध्यातव्य है कि कूर्म पुराण की इस बात की सम्पुष्टि पद्म पुराण[22] तथा गरूण पुराण[23] मे भी होती है।

ब्राह्मण

कूर्म पुराण मे ब्राह्मण की उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से मानी गयी है ध्यातव्य है कि ऋृग्वेद मे ब्राह्मण की उत्पत्ति ब्रह्मा के स्थान पर विराट पुरूष के मुख से उत्पन्न बताया गया है। भविष्य पुराण मे भी ब्राह्मणो की उत्पत्ति को स्वय भू भगवान के पुनीत मुख से बतलाया गया है इसमे ब्राह्मणो को सभी वर्गो से श्रेष्ठ बतलाया गया है[24]।

महाभारत के शान्ति पर्व[25] मे ब्राह्माण को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है। तैतरीय ब्राह्माण मे लिखा है। कि मनुष्य को ब्राम्हण के दाहिने मे दान देना चाहिए। क्योकि वह अग्नि वैश्यानट का स्वरूप है[26]। मनु ब्राह्मण की प्रशसा मे कहते है कि ब्राह्मण धर्म की मूर्ति है । कोष का रक्षक तथा समस्त जीवो का स्वामी है[27]। विष्णु धर्म सूत्र मे यह उल्लेख मिलता है कि देवता अदृश्य होते है परन्तु ब्राम्हण दृश्यमान साक्षात् देवता है । ब्राह्मणो के द्वारा ही समस्त रूप धारण किया जाता है ब्राह्मणो की दया से ही देवता स्वर्ग मे निवास करते है[28]। मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्मण केवल जन्म लेने के कारण से ही देवताओ के लिए प्रतिष्ठा तथा सम्मान का विषय है[29]।

पद्म पुराण के अनुसार ब्राह्मण विष्णु का साक्षात् स्वरूप है जो लोग ब्राह्मण की पूजा करते है विष्णु उनसे प्रसन्न होते है। विष्णु ब्राह्मण के रूप मे इस पृथ्वी पर विचरण करते है। जो ब्राह्मण को भोजन कराते है उनके अन्न को साक्षात् विष्णु ग्रहण करते है। ब्राह्मणो के निवास के करने के कारण ही यह पृथ्वी धन्य मानी जाती है[30]।

कूर्म पुराण मे भी इस बात का उल्लेख मिलता है कि मनुष्य जो किसी भी देवता की आराधना करना चाहता हो उसे प्रयत्न पूर्वक ब्राह्मणो की पूजा करनी चाहिए। क्योकि देवता ब्राम्हणो के शरीर का आश्रय ग्रहण करते है। यदि ब्राम्हणो की प्राप्ति न हो तो प्रतिमा द्वारा देवता की पूजा करनी चाहिए[31]।

पद्म पुराण के अनुसार भी ब्राह्मण की पूजा करने से विष्णु प्रसन्न होते है[32]।

कूर्मपुराण मे यह कहा गया है कि ब्राह्मण को क्षत्रियादि का अभिवादन नही करना चाहिए वह चाहे जितना ही ज्ञान कर्म बहुश्रुति, यज्ञ आदि गुण से सम्पन्न हो[33]।

कूर्मपुराण के अनुसार द्विजातियो का गुरू अग्नि और सभी वर्णो का गुरू ब्राह्मण होता है[34]। इस प्रकार का उल्लेख पद्म पुराण मे भी मिलता है कि ब्राह्मण लोगो का गुरू है वह तीर्थ है, वह पूज्यनीय है। ब्रह्मा ने उसे सभी देवताओ के आलय के रूप मे बनाया है[35]।

इन समस्त विवरणो से स्पष्ट प्रतीत होता है कि ब्राम्हण का प्राचीन भारतीय समाज मे बडा आदर तथा सम्मान था। यह सम्मान उसकी तपस्या, त्याग एव विद्वता पर आश्रित था।

ब्राह्मण के लक्षण

कूर्मपुराण के अनुसार क्षमा, दया, विज्ञान, सत्य, दम, शम, एव अध्यात्म मे निरत् होना यही ब्राम्हणत्व के लक्षण है[36]। पद्म पुराण के आदि खण्ड मे भी ऐसा ही उल्लेख प्राप्त होता है । पदम पुराण मे कहा गया है कि ब्राह्मण के यज्ञोपतीत् आदि सस्कार होने पर द्विजुत्व प्राप्त होता है [37]।

विद्या अर्जन करने पर विप्र कहलाता है तथा तीनो से युक्त होने पर श्रोत्रिय के अभिधान को पाता है। विद्या, मन्त्र, वेद तीर्थ, और स्नान से पवित्र ब्राह्मण पूज्यनीय माना जाता है[38] । ब्राह्मण विष्णु का भक्त शुद्ध आत्मा, जितेन्द्रिय, जितक्रोध सब लोगो के साथ समान व्यवहार करने वाला गुरू, देवता तथा अतिथि का भक्त, माता–पिता की सेवा मे निरत, पराई स्त्री से दूर रहने वाला तथा पुराण की कथा कहने वाला होता है। जो मित्र तथा शत्रु के प्रति दयालु गरीबी मे भी दूसरो का धन न चुराने वाला, काम क्रोध, आदि विकारो से रहित इन्द्रियो को बस मे रखने वाला तथा चौबीस अक्षरो वाली गायत्री का जप करने वाला है वही ब्राह्मण की पद्वी को प्राप्त कर सकता है [39]।

ब्राह्मण के कर्त्तव्य

कूर्म पुराण मे ब्राह्मणो के छ कर्त्तव्यो का उल्लेख किया गया है । (1) यज्ञ करना, (2) यज्ञ कराना, (3) दान देना, (4) दान लेना (5) अध्यापन, (6) अध्ययन । कूर्म पुराण मे उल्लिखित ब्राह्मणो के कर्त्तव्यो की पुष्टि स्मृतियो एव अन्य पुराणो से भी होती है [40]।

मनुस्मृति मे भी इन्ही छ कर्त्तव्यो का उल्लेख मिलता है, परन्तु क्रम अलग है । उनके अनुसार (1) अध्ययन (2) अध्यापन (3) यज्ञ करना (4) यज्ञ कराना (5) दान देना (6) दान लेना[41] ।

पद्म पुराण मे अख्यात है कि ब्राह्मण का धर्म यजन, अध्यापन, वेदो का अध्ययन तथा दान है। प्रतिग्रह की दृष्टि से ब्राह्मण नीच पुरूषो की सेवा न करे आपत्ति आने पर भी उसे स्वान की वृत्ति से जीवन निर्वाह नही करना चाहिए[42]। विष्णु पुराण के अनुसार ब्राह्मण को स्वाध्याय मे तत्पर रहना चाहिए[43]। वायु तथा ब्रह्मण्ड पुराणो मे विद्या को ब्राह्मणो का धन माना गया है[44]। वायु पुराण के अनुसार विप्र को दक्षिणा देना यज्ञ की प्रतिष्ठा का कारण है[45]। मत्स्य पुराण मे विद्या को ही ब्राह्मणो की श्रेष्ठता की कसौटी के रूप मे स्वीकार किया गया है[46]।

इस प्रकार ब्राह्मणो के छ कर्त्तव्यो का उल्लेख स्मृतियो/पुराणो तथा अन्य धर्म ग्रन्थो मे समान रूप से पाया जाता है। कूर्म पुराण मे एक स्थान पर ब्राह्मण के कर्त्तव्यो का उल्लेख इस प्रकार मिलता है कि उसे नित, धर्म, अर्थ एव काम की पूर्ति मे नियम पूर्वक निरत रहना चाहिए। धर्म से रहित, काम या अर्थ का मन मे भी विचार नही करना चाहिए । धर्म के कारण कष्ट पाते हुए भी अधर्म का आचरण नही करना चाहिए[47]।

क्षत्रिय

कर्त्तव्य

कूर्म पुराण मे क्षत्रियो के लिए दण्ड एव युद्ध कर्म एव दान लेना, अध्ययन एव यज्ञ करना इन तीन धर्मो का उल्लेख मिलता है[48]। ध्यातव्य है कि मनु ने भी क्षत्रिय के धर्म का उल्लेख करते हुए लिखा है कि अध्ययन, यज्ञ करना, और दान देना इनका कर्त्तव्य है[49]। एक अन्य स्थान पर क्षत्रिय का धर्म जनता की रक्षा बतलाया गया है[50]।

जो वीर पुरूष (क्षत्रिय) युद्ध मे लडकर अपने सिर के खून को पीता है वह अश्वमेध यज्ञ के फल को पाकर इन्द्र लोक का भागी होता है[51]।

कूर्म पुराण के एक अन्य स्थान पर यह उल्लेख है कि अजन्मा ब्रह्मा ने ब्रह्मणो की मर्यादा की प्रतिष्ठा के हितार्थ क्षत्रियो की सृष्टि की[52]। गीता मे श्री कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा है कि क्षत्रिय का कर्त्तव्य युद्ध क्षेत्र मे जूझकर मर जाना है[53]। विष्णु पुराण मे यह वर्णन पाया जाता है कि क्षत्रिय को चाहिए की वह शस्त्र को ही अपनी जीविका समझे[54]।

कूर्म पुराण मे लिखा है कि जो क्षत्रिय सग्राम से पलायन नही करते उनके लिए ऐन्द्र स्थान कहा गया है[55]। इसी प्रकार का उल्लेख ब्रह्माण्ड पुराण मे भी मिलता है कि जो क्षत्रिय लडाई के मैदान से नही भागते उन्हे इन्द्र लोक मे स्थान मिलता है[56]। इस प्रकार विभिन्न सहिता एव पुराणो मे क्षत्रिय कर्त्तव्य का उल्लेख मिलता है ।

वैश्य

कर्त्तव्य

कूर्म पुराण मे वैश्य की उत्पत्ति ब्रह्मा के जघे से मानी गयी है। वैश्य के तीन धर्म दान देना, अध्ययन, यज्ञ करना, तथा कृषि प्रशस्त कर्म का उल्लेख है[57]। इसी पुराण मे एक अन्य स्थान पर कृषि, पशुपालन एव वाणिज्य शिल्प कौशल द्वारा आजीविका की व्यवस्था का उल्लेख है[58]। पद्म पुराण मे वैश्य के कर्त्तव्य के सम्बन्ध मे लिखा है कि स्वाध्यय, यज्ञ करना, दान देना, सूदखोरी, पशुओ को पालना, गोरक्षा, कृषि और वाणिज्य उनका धर्म है[59]। विष्णु पुराण के अनुसार ब्रह्मा ने पशुपालन, वाणिज्य और कृषि वैश्य को जीविका के रूप मे दिया था[60]। वायु[61] तथा ब्रह्माण्ड पुराणो[61] मे भी पशुपालन, वाणिज्य और कृषि वैश्यो के लिए ब्रह्मा द्वारा जीविका बतलायी गयी है ।

मनु ने लिखा है कि व्यापार, सूदखोरी, खेती और पशुओ की रक्षा करना वैश्यो का कर्त्तव्य है[63]। मत्स्य पुराण मे वैश्य का कर्त्तव्य वाणिज्य एव कृषि बताया गया है[64]। वामन पुराण के अनुसार वाणिज्यादि कर्म के अर्न्तगत व्यापार, कृषि पशुपालन आदि वैश्यो के लिए विहित–कर्म परिकल्पित है। वैश्य वर्ण के विशिष्ट कर्म के रूप मे पशुपालन का स्पष्ट उल्लेख मिलता है[65]। वैश्यो को अपने कर्त्तव्यो का पालन प्रयत्न पूर्वक करना चाहिए। क्योकि उनके

धर्म से च्युत हो जाने पर यह ससार क्षुब्ध हो जाता है[66]। विष्णु पुराण[67] के अनुसार वैश्यो का स्थान समाज मे ब्राह्मण और क्षत्रियो से घटकर था। वैश्यो का कर्म ब्राह्मण और क्षत्रियो के आश्रित बतलाया गया है।

शूद्र

कर्त्तव्य

कूर्म पुराण के अनुसार शूद्रो की उत्पत्ति ब्रह्मा के चरणो से बतलायी गयी है[68]। एक अन्य स्थान पर इस प्रकार का उल्लेख है कि ब्रह्मा ने यज्ञ की निष्पति एव वेदो की रक्षा के लिए शूद्र के अतिरिक्त अन्य सभी वर्णो की सृष्टि की[69]।

धर्मानुसार पाकयज्ञ तथा कारूकर्म अर्थात् शिल्प कौशल उनकी आजीविका है।ऋृग्वेद के पुरूष सूक्त मे यह उल्लेख मिलता है कि शूद्रो की उत्पत्ति पुरूष के पैर से बतलायी गयी है । (पदभ्या शूद्रोअजायत्)

ब्रह्मा स्वरूप विराट स्वरूप का सर्म्पूण अग एक दूसरे का पूरक तथा महत्वपूर्ण था यदि उसमे कुछ भी अन्तर दिखलायी पडता है तो यह कि मुख पैर का काम नही कर सकता, पैर मुख का काम नही कर सकता, लेकिन सामाजिक शरीर व्यवस्थित रखने के लिए यह आवश्यक था। इसमे किसी से किसी को बडा न छोटा माने जाने का प्रश्न है। केवल इन वर्णो के कर्म अलग–अलग थे लेकिन मूलत वे विराट पुरूष के शरीर के एक दूसरे के पूरक अग थे। पुराणो मे शूद्रो के विहित कर्त्तव्यो मे समाज के अन्य वर्णो के साथ रह कर उनके साथ सहयोग एव सेवा अर्पण उल्लेख किया गया है। इस बात की सम्पुष्टि पद्म, वामन, आदि पुराणो से भी होती है[70]।

गीता मे भगवान श्री कृष्ण ने गुण और कर्म को आधार मानकर चार्तुवर्ण, का जो विभाजन प्रस्तुत किया है उसमे इस बात का ध्यान रखा गया है कि कौन किस कार्य को भली भाति कर सकता है । इसमे कहा गया है कि शूद्र समाज को व्यवस्थित रखने के लिए अपनी शारीरिक सेवाए प्रस्तुत कर सकता है। जिसका सम्बल पाकर द्विज लोग समाज को स्वस्थ और विकास उन्मुख बना सकते थे[71]। भविष्य पुराण के अनुसार शूद्रो की उत्पत्ति

ब्रह्मा के चरणो से हुई[72]। तीनो वर्णो की सेवा करने वाले निस्तेज एव अल्प शक्ति वालो को शूद्र कहा गया है[73]।

कूर्म पुराण मे यह भी उल्लिखित है कि शूद्र को ज्ञानोपदेश नही देना चाहिए तथा तिल, तण्डुल, पक्व वस्तु, पायस, दही, घृत, मधु, कृष्ण मृगचर्म, हवि एव उच्छिष्ट देना वर्जित है। शूद्र को व्रत तथा धर्म सम्बन्धी उपदेश भी नही देना चाहिए[74]। समाज मे शूद्रो की स्थिति हीन एव नीच थी। वे वेद का अध्ययन नही कर सकते थे। उनकी उपस्थिति मे वेदो का पठन–पाठन भी निषिद्ध माना जाता था[75]।

व्यास की शत्साहस्त्री सहिता मे लिखा है कि चूँकि शूद्र, स्त्री तथा द्विज बन्धुओ के लिए वेदो का सुनना निषिद्व अत व्यास मुनि ने कृपा करके भारत (महाभारत) नामक आख्यान की रचना की। महाभारत आदि वर्ष अग्निहोत्र तथा अन्य यज्ञो को नही कर सकते थे। विवाह को छोडकर अन्य सस्कारो का करना भी उनके लिए निषिद्ध था। छोटे–छोटे अपराधो के लिए शूद्रो को कठिन दण्ड दिया जाता था। यदि कोई शूद्र दूसरे वर्ण की स्त्री से व्यभिचार करे तो गौतम के अनुसार उसकी समस्त सम्पत्ति जब्त कर लेनी चाहिए[76]। शूद्र के लिए कपिला गाय का पालना तथा उसका दूध दुहना वर्जित था। शूद्र क लिए अपने घर मे बकरी रखकर उसका दूध पीना भी मना था। ब्राह्मण के साथ व्यापार करना उससे जल मगवाकर पीने से शूद्र को पाप लगता था[77]।

गौतम धर्मसूत्र[78] के अनुसार शूद्र निजी धन के सग्रह करने का अधिकारी नही था और न ही अपने सग्रहीत धन को अपने के लिए उपयोग मे खर्च कर सकता था। उसके द्वारा सचित धन उसके स्वामी अर्थात द्विज वर्ण वाले व्यक्ति का होता था।

बौधायन गृह्यसूत्र मे वर्णित शूद्रो की हीनावस्था का अनुमान इससे किया जा सकता है कि शूद्र की हत्या करने वाले को मात्र वही दण्ड दिया जा सकता है जो स्वान, मार्जार, मेढक काक अथवा उलूक की हत्या करने वाले को दिया जाता है। वह शमशान के सदृश अपवित्र एव तिरस्कृत था[79]। पाकर लोग द्विज लोग समाज को स्वस्थ और विकास उन्मुख बना सकते थे[80]

समाज मे शूद्रो की स्थिति

कूर्मपुराण मे यह उल्लेख मिलता है कि शूद्र भी यदि नब्बे वर्ष की अवस्था प्राप्त कर ले तब वह द्विज वर्णो की तरह माननीय हो जाता है[81]। शूद्रो को नाम लेकर अर्चन करने का अधिकार है[82]। भगवतपुराण के अनुसार शूद्र अपनी तपस्या, त्याग, सदाचार तथा व्रत से महात्मा के पद को भी प्राप्त कर सकते थे। शूद्रो को पुराण श्रवण का अधिकार दिया गया[83]।

इसी पुराण के एक अन्य स्थान पर यह उल्लेख है कि निम्नकोटि के व्यक्ति से भी कल्याणदायिनी विद्या श्रृद्धापूर्वक लेनी चाहिए । कूर्म पुराण मे शूद्रो की आजीविका शिल्प कौशल थी[84]।

भारत की सस्कृति साधना नामक पुस्तक मे भी यह उल्लेख है कि शिल्प व्यवसाय प्रधानत शूद्रो के हाथ मे था, यद्यपि अन्य जातियो के लोग भी शिल्प सीखते थे। जातक साहित्य मे अनेक शिल्पाचार्यो के नाम मिलते है, जो शूद्र थे। आर० एस० शर्मा के अनुसार शूद्रो को कला और शिल्प का प्रशिक्षण तो इसलिए दिया जाता था क्योकि शूद्रो को वेद से वचित रखा गया[85]। वायु पुराण[86] मे भी शूद्रो के दो प्रधानकर्म उल्लिखित है – शिल्प कर्म एव मृत्यु कर्म[87]।

शूद्रो का उन्नति

कूर्म पुराण के अनुसार कलियुग मे शूद्रो का ब्राहम्णो के साथ मन्त्र, योनि, शयन, आसन और भोजन के द्वारा सम्बन्ध हो जायेगा[88]। शासको मे शूद्रो की अधिकता होगी जो ब्राहम्णो को पीडित करेगे । भ्रूण, हत्या एव वीर हत्या प्रचलित होगी[88]।

पौराणिक धर्म एव समाज उल्लिखितविष्णु पुराण के अनुसार शूद्र को पाक–यज्ञ करना चाहिए, किन्तु इस अवसर पर मन्त्रोचारण वर्जित है [89]। इसी प्रकार वायु और ब्राह्मण पुराणो मे विवेचित है कि गृहस्थ के लिए निर्धारित पॉच महायज्ञो के अनुष्ठान का अधिकार शूद्र को भी है । पर मन्त्रोचारण निषिद्ध किया गया है [90]।

शूद्र का दयनीय स्तर

वेदाध्ययन के विषय मे शूद्र के अनाधिकार पर प्रकाश डालते हुए मत्स्य पुराण उद्घोषित करता है कि अव्यवस्थित–कलियुग मे शूद्र वेद का अध्ययन करते है[91]। विष्णु पुराण के अनुसार शूद्र का यज्ञ करने से ब्राह्मण नरकगामी होता है[92] । वायु[93] और ब्रह्मण्ड पुराणो[94] के अनुसार शूद्र को श्राद्धावशिष्ट अन्न देने से श्राद्ध का फल नही मिलता। शूद्र के दयनीय स्तर का उल्लेख स्मृतियो मे भी प्राप्त होता है, जिनके स्थल प्राय पुराण सम ही है[95]। मनुस्मृति[96] तथा विष्णु स्मृति[97] दोनो ही ग्रथो मे शूद्रार्थ यज्ञकर्ता ब्राह्मण को चिन्हित माना गया है। मनु के मतानुसार श्राद्धावशिष्ट अन्न, वृषल, को दान करने से नरक मिलता है[98]।

शूद्र के प्रति उदार भावनाएँ

मत्स्य पुराण मे शूद्र हन्ता को पापी की कोटि मे रखा गया है[99]। विष्णु[100] और मत्स्य पुराण[101] मे शूद्र के लिए भी दान क्रिया का उल्लेख है । वायु[102] और ब्रह्मण्ड पुराणो[103] के अनुसार यदि शूद्र भक्ति मे निमग्न रहे, मदिरापान न करे, इन्द्रियो को सयत रखे तथा निर्भय रहे, तो वह मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

अस्पृश्यजन

ब्राह्मण स्त्री तथा शूद्र पुरुष से उत्पन्न सन्तान को चाण्डाल कहा गया है[103]। भागवत् पुराण के अनुसार यदि कुल्टा (व्याभिचारिणी) ब्राह्म्णी नित्य अपने पति का त्याग कर किसी अन्य ब्राह्मण के घर जाती है तो उस ब्राह्मण द्वारा उत्पन्न सन्तान को चाण्डाल एव महाचाण्डाल कहा जाता है[104]।

कूर्म पुराण के अनुसार द्विजो को चाण्डालादि जनो के समीप नहीं रहना चाहिए[105]। पतित चाण्डाल, पुक्कस, मूर्ख अभिमानी अन्त्यत जनो एव नीचो का साथ वर्णित है[106]। इनके साथ एक शया पर सोना एक आसन पर बैठना एक पक्ति मे बैठकर भोजन करना बर्तनो एवं पकवान का मिश्रण, यज्ञ करना, अध्यापन इनके साथा विवाहादि सम्बन्ध करना एक साथ

भोजन करना, एव एक साथ अध्ययन करना तथा एक साथ यज्ञ करना ये ग्यारह साङ्कर्य नामक दोष होते है[107]।

विष्णु पुराण मे चाण्डाल को पतित मानते हुए उसे कुत्ता और पक्षियो की श्रेणी मे रखा जाता है। एक अन्य स्थान पर उल्लेख है कि श्राद्धान्न पर चाण्डाल की दृष्टि पड जाय, तो देवता और पितर अपना भाग नही लेते [108]। एक अन्य स्थान पर उल्लिखित है किसी धर्मानुष्ठान मे पतित होने वाले ब्राह्मण की सतान एव वृषल ब्राह्मण इन दोनो को भी चाण्डाल जानना चाहिए[109]।

उपर्युक्त उल्लेखो के आधार पर कहा जा सकता है कि आचरण से च्युत व्यक्ति भी चाहे वह ब्राह्मण ही क्यो न हो, अपने निकृष्ट कर्मो से चाण्डाल जाति को प्राप्त होता है[110]। मनु के अनुसार चाण्डाल मनुष्यो मे सबसे नीच थे[111]। छान्दोग्य उपनिषद्[112] मे वर्णित है कि चाण्डाल–योनि मे वही लोग जन्म लेते है, जिनके पूर्व जन्म का कर्म अक्षत रहता है।

मनु ने स्पष्ट शब्दो मे चाण्डाल को सहवास निषिद्ध किया है[113]। विष्णु धर्म सूत्र के अनुसार इनका पेशा जल्लाद का है, और ये लोग मृत व्यक्ति के वस्त्रो को लेकर पहनते है। उशनस्[114] के मतानुसार चाण्डालो का आभूषण शीशे व लोहे का बना होना चाहिए। उनको अपने गले मे झाझ या मजीरा पहन कर चलना चाहिए या चमडे का पट्टा डालना चाहिए। चीनी यात्री फाह्यान ने लिखा है कि चाण्डाल लोग गॉव के बाहर रहते थे। वे नगर या बाजार मे जाते समय अपने जाने की सूचना लकडी के दो टुकडो को बजाकर किया करते थे जिससे लोग उनका स्पर्श न कर सके ।

आश्रम व्यवस्था

वर्ण आश्रम व्यवस्था का महत्व

कूर्म पुराण मे वर्ण व्यवस्था की सम्पुष्टि अन्य पुराणो से होती है। जो भारतीय सस्कृति का प्रधान स्वरूप है[115]। इस पुराण मे एक स्थान पर ऐसा उल्लेख है कि भारत मे अनेक वर्णो मे स्त्री, पुरूषो के लिए देव कर्म रत् होते हुए उनकी परमायु सौ वर्ष है[116]। ऐसा प्रतीत होता है कि आयु के अनुपात मे चारो आश्रमो का विभाजन किया गया है। इस पुराण

मे वर्णो की व्यवस्था हो जाने पर मनुष्यो के लिए चार आश्रमो की स्थापना की[117]। जिसमे दैवी उत्पत्ति का समर्थन किया गया है और कहा गया है कि ब्रम्हचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम। सन्यास अन्तिम ध्येय है। कूर्म के अनुसार मनुष्य जन्मत तीन ऋण लेकर आता है देव ऋण, ऋषि ऋण, पितृ ऋण[118]। ब्रम्हचर्य आश्रम मे हम उत्तम ज्ञान सम्पादन करके, ऋषिश्रृग से श्रृग से उऋण होते है। गृहस्थ आश्रम मे सन्तति पैदा करके उसका ठीक तरह से पालन–पोषण करके हम पितृ ॠण से उऋण होते है। वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम द्वारा सारे समाज की सेवा करके हम ईश्वर ॠण से उऋण होते है। एक आश्रम मे रहकर विहित कर्मो का सम्पादन करके ही दूसरे आश्रम मे प्रवेश करने का विधान है। श्री कूर्म ने कहा कि ज्ञान विज्ञान युक्त परवैराग्यवान (व्यक्ति) यदि परमगति चाहता है तो उसे ब्रम्हचर्य आश्रम से सन्यासाश्रम मे जाना चाहिए[119]। परन्तु वानप्रस्थ आश्रम मे जाकर पुन गृहस्थाश्रम मे प्रवेश नही करना चाहिए। सन्यासी को वानप्रस्थ आश्रम मे तथा साधक–गृहस्थ को ब्रह्मचर्याश्रम मे प्रवेश नही करना चाहिए[120]।

ब्रह्मचर्याश्रम

चतुराश्रमो मे ब्रह्मचर्याश्रम प्रथम है[121]। कुर्मपुराण के अनुसार ब्रह्मचर्य आश्रम की दो कोटियॉ बतलायी गयी है। पहला उपकुर्वाण दूसरा नैष्ठिक ब्रह्मचारी[123] ।

(1) उपकुर्वाण ब्रह्मचारी

उपकुर्वाण ब्रह्मचारी वे होते है जो यथा विधि वेदो का अध्ययन कर गृहास्थाश्रम मे प्रवेश करते है।

(2) नैष्ठिक ब्रम्हचारी

नैष्ठिक ब्रह्मचारी मरणपर्यन्त गुरू के यहॉ रहता है[124]। विष्णुपुराण के अनुसार उपनयन सस्कार होने के उपरान्त बालक को ब्रह्मचर्य– निर्वाहार्थ तथा वेदाध्ययनार्थ गुरू गृह का आश्रय लेना चाहिए[125]। विष्णु[126], वायु[127] और ब्रह्मण पुराणो[128] को अनुसार ब्रह्मचारी को गुरूवासी माना गया है। वामन पुराण मे उल्लिखित है कि यदि गुरू की मृत्यु हो जाय और उनके पुत्र–पुत्री न हो तो उनके शिष्य के समीप निवास कर ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता था। बह्मचारी को अभिमान रहित होकर गुरू की सुश्रुषा करते हुए ब्रम्हचर्या आश्रम का पालन करना चाहिए ।

ब्रह्मचारी के धर्म

कूर्मपुराण मे ब्रह्मचारियो के निम्नलिखित धर्म उल्लिखित है । (1) भिक्षा मॉगना (2) गुरू की सेवा (3) स्वाध्याय पुराण (4) सध्याकर्म (5) अग्निकार्य

(1) भिक्षा मॉगना प्रतिदिन शिष्ट पुरूषो के गृह से भिक्षा लाने के उपरान्त गुरू को निवेदित कर उनकी आज्ञा से मौन धारण कर भोजना चाहिए[129]। एक अन्य स्थान पर ऐसा कहा गया है कि देवाधि कर्मो के लिए उदक पुष्प, समिधा एव इसी प्रकार के अन्य पदार्थ भिक्षा मे नहीं प्राप्त करना चाहिए[130]।

विष्णुपुराण के अनुसार ब्रह्मचारी को ऐसे अन्न का आहार करना चाहिए, जो भिक्षा द्वारा प्राप्त हो[131]। वायु और ब्रह्माण्ड पुराणो मे भी ब्रम्हचारी के कर्तव्य और दिनचर्या का भिक्षा वृत्त द्वारा जीवन निर्वाह करने का उल्लेख है। कूर्म पुराण[133] मे यह भी उल्लेख मे है कि ब्रह्मचारी को प्रतिदिन प्रयत्न पूर्वक ऐसे व्यक्तियो के घर से भिक्षा ग्रहण करना चाहिए जिनके यहॉ वेद और यज्ञ का लोप न हुआ हो। परन्तु गुरू के कुल अपनी जाति के कुल एव बान्धवो के कुल मे भिक्षा नही मॉगनी चाहिए। यदि दूसरो के घर भिक्षा न मिलने पर पूर्व–पूर्व का त्याग कर, विशेष परिस्थितियो मे वाणी को नियन्त्रित कर सम्पूर्ण ग्राम मे भिक्षा मॉगकर, और उसे एकत्रित कर भोजन करने का विधान है। इस प्रकार ब्रह्मचारी को नित्य भिक्षा द्वारा जीवन निर्वाह करना चाहिए। ब्रह्मचारी को नित्य एक अन्य नही खाना चाहिए, इस प्रकार भिक्षा निर्वाह करने वाले पुरूष वृत्त को उपवास के तुल्य कहा गया है[134]। विष्णु पुराण के अनुसार उपनयन सस्कार के बाद बालक को ब्रह्मचर्य पालन तथा वेदाध्ययन के लिए के लिए गुरूगृह का आश्रय लेना चाहिए।

(2) गुरूसेवा

कूर्म पुराण के अनुसार आठ वर्ष (जन्म से) की आयु मे उपनयन सस्कार के बाद गुरू हित मे तत्पर रहना चाहिए[135]। ध्यातव्य है कि मत्स्य पुराण मे भी इसी प्रकार का वर्णन मिलता है, कि ब्रह्मचारी को गुरू के कायार्थ सदैव तत्पर रहना चाहिए। उसे गुरू के सोने के उपरान्त ही सोना चाहिए, तथा उनके उठने के पूर्व उठ जाना चाहिए[136]।

विष्णु पुराण के अनुसार ब्रह्मचारी का कर्तव्य गुरू के अनुकूल होना चाहिए। वह उसी समय तक रूके जब तक गुरू रूके, वह उसी समय तक चले जब गुरू चले, वह उसी स्थान पर बैठे जो गुरू के नीचे हो, उसे वही अध्ययन करना चाहिए जो गुरू के मुॅह से निकले, जब गुरू स्नान कर चुके तभी वह स्नान करे। प्रतिदिन वह गुरू के लिए समिधा एव नित्य कर्मोपयोगी वस्तु एकत्र करे[137]। वायु और बह्माण्ड पुराणो मे गुरू सेवा करना ब्रह्मचारी का परमधर्म बताया गया है[138]।

स्वध्याय

कूर्म पुराण के अनुसार सस्कार के उपरान्त ब्रह्मचारी को दण्ड, मेखला, यज्ञोपवीत एव मृग चर्म धारण कर भिक्षा से प्राप्त भोजन को ग्रहण गुरू मुख को देखते हुए वेदाध्ययन करना चाहिए[139]। विष्णु पुराण मे भी इसी प्रकार का उल्लेख मिलता है कि बह्मचारी को सावधान पूर्वक वेदाध्ययन मे लगे रहना चाहिए[140]। वायु[141] और ब्रह्माण्ड[142] पुराणो मे ब्रह्मचारी का लक्ष्य विद्याभ्यास माना गया है । मत्स्य पुराण[143] के अनुसार ब्रह्मचर्य मे तभी सिद्धि मिल सकती है, जबकि ब्रह्मचारी अध्ययन मे निरन्तर रत रहे।

सन्ध्याकर्म

कूर्मपुराण[144] के अनुसार ब्रह्मचारी को एकाग्रता पूर्वक साय एव प्रात काल सन्ध्या करना चाहिए। विष्णु पुराण[145] मे आख्यात है कि ब्रह्मचारी को पवित्रता पूर्वक रहना चाहिए। एकाग्रचित होना चाहिए। वह नित्य प्रति दोनो सध्याओ मे सूर्य और अग्नि की उपासना करने का विधान बताया गया है।

अग्निकार्य

कूर्म पुराण[146] के अनुसार ब्रह्मचारी को सन्ध्योपरान्त साय एव प्रात काल अग्नि कार्य (हवन करना) चाहिए।

गृहास्थाश्रम

गृहस्थ

कूर्मपुराण[147] मे उल्लेख मिलता है कि सर्वदा (दान द्वारा अपनी सम्पत्ति का) विभाजन करने वाला क्षमा युक्त एव दयालु (व्यक्ति) गृहस्थ कहलाता है। कोई व्यक्ति गृह के कारण गृही नही होता। गृहस्थ को तीनो आश्रमो का मूल कहा गया है। अन्य आश्रम उसके आश्रित होते है। इस प्रकार गृहाश्रमी को श्रेष्ठ माना गया है। वैदिक मान्यता मे भी गृहस्थ आश्रम ही अन्य तीनो आश्रमो का समावेश माना गया है। इसलिए गृहस्थ आश्रम को ही धर्म का साधन मानना चाहिए[148]। अन्य पुराणो मे भी गृहस्थ आश्रम को स्रोत माना गया है। विष्णु पुराण[149], वायु पुराण[150] बह्माण्ड पुराण[151]।

मनु स्मृति के अनुसार गृहस्थ सारे समाज का आधार है। गृहस्थाश्रम भविष्य का निर्माण करता है। मनु कहते है कि जिस प्रकार समस्त जीव वायु के कारण जीवित है, उसी प्रकार अन्य तीन आश्रम गृहास्थाश्रम पर अवलम्बित होकर अपनी स्थिति धारण करते है। तीनो आश्रम गृहस्थ के ऊपर ही आश्रित है, इस तरह गृहस्थाश्रम ही सबसे श्रेष्ठ है [152]।

कूर्म पुराण के अनुसार बह्मचर्य आश्रम के बाद अपने समान वर्ण की सर्वगुण सम्पन्न कन्या से विवाह करना चाहिए। परन्तु मातृ कुल एव ॠृषि कुल की कन्या से विवाह नही करना चाहिए [153]। ध्यातव्य है कि अन्य पुराणो मे भी इसी तरह का उल्लेख मिलता है कि ब्रम्हचर्य आश्रम के उपरान्त पत्नी को विधवत् अगीकार करना चाहिए [154]। वामन पुराण[155] मे आख्यात है कि ब्रम्हचर्याश्रम के उपरान्त गृहस्थाश्रमी मे प्रवेश करना चाहिए। गृहास्थश्रमी को आश्रम धर्म सम्यक् निर्वाह हेतु असमान ॠृषि वाले कुल मे उत्पन्न कन्या से ही विवाह सस्कार करना चाहिए।

गृहस्थ के भेद

कूर्म पुराण मे उदासीन एव साधक नामक दो गृहाश्रियो का उल्लेख है उदासीन गृहस्थ वह है जो देवऋण, ऋषिऋण एव पितृऋण को चुकाने के बाद स्त्री एव धन का त्याग कर विचरण करे। साधक गृहस्थ कुटुम्ब के पालन पोषण मे आसक्त गृहस्थ साधक होता है। इसी मे एक अन्य स्थान साधक एव आसाधक दो प्रकार के गृहस्थो का उल्लेख इस प्रकार मिलता है। (1) पहला साधक एव (2) आसाधक गृही ।

साधक गृही को जीविका साधन अध्यपन, यजन एव दान है इसके अतिरिक्त वह स्वय न करके दूसरो के द्वारा सूदी व्यवहारी, कृषि एव व्यापार भी कर सकते है। परन्तु आपत्ति काल मे उपरोक्त वर्जित कार्य किया जा सकता है। लेकिन सूदखोरी अत्यन्त पाप पूर्ण वृत्ति है। इसलिए इसका त्याग करना चाहिए। अध्यापनादि ही मुख्य वृत्ति है। छात्रवृत्ति अर्थात शास्त्रजीविका को भी अपने श्रेष्ठ माना गया है, परन्तु द्विजो को स्वय इस कार्य को करना वर्जित है। आपत्ति काल मे द्विज को भी शस्त्रधर्म से जीवनयापन करना चाहिए। यदि शस्त्र जीविका से जीवन यापन न हो सके तो कृषि स्वरूप वैश्यवृत्ति का अवलम्बन करना चाहिए। लेकिन ब्राह्मण को कभी भी खेत जोतने का कार्य नही करना चाहिए[156]। इसी पुराण को एक अन्य स्थान पर उल्लेख मिलता है कि साधक गृहस्थ के शिलोञ्छवृत्ति, विद्या तथा शिल्पादि के द्वारा जीवन निर्वाह करना चाहिए[157]।

असाधक गृहस्थ

कूर्मपुराण के अनुसार कटे हुए खेत मे पडे हुए दानो को बीनकर जीवन निर्वाह करने वाली दो वृत्तियाँ बतलाई गयी है[158]। एक अन्य स्थान पर असाधक गृहस्थ को अयाचित, वस्तु तथा याचना द्वारा प्राप्त भिक्षा से जीवन यापन करने का उल्लेख मिलता है[159]। कूर्म पुराण मे गृहस्थ का चार वृत्तियो का उल्लेख किया गया है । (1) कुशलधान्यक (2)कुम्भीधान्यक (3) त्रैहिक (4) अश्वस्तनिक। कूर्म के अनुसार तीन वर्षो केलिए प्रर्याप्त धान्य सञ्चयी को कुशलधान्यक कहते है, जो चार प्रकार के गृहस्थो मे श्रेष्ठ होता है, एक वर्ष के लिए धान्य सचय करने वाले को कुम्भीधान्यक, तीन दिनो के लिए पर्याप्त धान्य के सचयी कसे त्रैहिक एव आगामी दिन के लिए भी सचय न करने वाले को अश्वस्तनिक कहा जाता है[160]।

आलोचित पुराण उल्लिखित वृत्ति की सम्पुटित मनुस्मृति एव से भी होती है। (2) पद्म पुराण सृष्टि[161]। कूर्म पुराण (1) मनुस्मृति[162] – 4 7 पर कुल्लूक की टीका देखिए ।

गृहस्थ के धर्म

कूर्म पुराण मे मार्हपत्य, आहवनीय, एव दक्षिणाग्नि नामक तीन अग्नियॉ। अतिथि सेवा, यज्ञ, दान एव देवपूजन गृहस्थो का धर्म है[163]। एक अन्य स्थान पर मनु ने कहा है कि क्षमा, दया, दान, अलोभ, त्याग, सरलता, अनसूया, गुरू एव शास्त्र का अनुगमन एव तीर्थयात्रा, सत्य, सन्तोष, ईश्वर एव परलोक के अस्तित्व मे विश्वास, श्रद्धा, इन्द्रिय, निग्रह, देवाराधन विशेषरूप से ब्राह्मणो की पूजा, अहिसा, प्रियवादिता, अपिशुनता, पाप से निवृत्त ये सभी चारो वर्णो का धर्म कहा गया है[164]। धर्मसूत्रो स्मृतियो, पुराणो मे गृहस्थ के धर्म का बडा ही विस्तृत विवरण उपलब्ध होता है। आप० धर्मसूत्र[165], मनु स्मृति अध्याय 4, या० स्मृति[166] मत्स्य पुराण [167] बौधायन सूत्र[168] महाभारत मे गृहस्थ के विषय मे लिखा है कि उसे अहिसा, सत्य, दया, राम, दान का पालन करना चाहिए[167]।

गृहस्थ की दिनचर्या

गृहस्थ ब्राहम्ण को ब्रम्ह मुहूर्त मे उठकर धर्म और अर्थ तथा उससे होने वाले शारीरिक कष्ट का चिन्तन करना चाहिए तथा मन मे ईश्वर का ध्यान करना चाहिए [168]। उषाकाल होने पर व्यक्ति को आवश्यक कर्म करने के बाद शौचकर्म कर शुद्व नदी मे स्नान करना चाहिए [169]। क्योकि सोये हुए व्यक्ति के मुख से निरन्तर लार बहता है अत बिना स्नान किये हुए कर्म नही दु स्वप्न, दुर्विचार एव अन्य पाप दूर होते है[170]। बिना स्नान के मनुष्यो को पवित्र करने वाला कोई कर्म नही बतलाया गया है। होम, जप के समय स्नान अवश्य करना चाहिए [171]।

स्नान कर्म

अस्मर्थ व्यक्ति को मस्तक छोडकर स्नान करने का विधान है। भीगे वस्त्र से शरीर को पोछने को कपिल स्नान कहा गया है[172]। शक्ति होने पर ब्रह्मा इत्यादि स्नान का विधान

विशेष रूप से छ प्रकार के स्नान का उल्लेख है[173]। मत्र पूर्वक कुशा से जल छिडकने को ब्रह्म स्नान कहा गया है[175]।

गायो के धूल से सम्पन्न उत्तम स्नान को वायव्य कहा जाता है। धूपयुक्त वर्षा द्वारा जल के स्नान को उत्तम एव दिव्य कहा गया है [176]। (जल मे) अवगाहन करने को वारूण स्नान कहा गया है। मन द्वारा आत्मज्ञान करने को यौगिक स्नान कहा गया है। विष्णु का चितन करना ही योग है। इससे मनुष्यो के भी शुद्धि होती है। इसलिए इसे आत्मतीर्थ स्नान कहा जाता है[177]।

दन्तकाष्ठ कर्म

मनुष्य को दन्तकाष्ठ करना चाहिए। तदुपरान्त भोजन करना चाहिए [178]। दन्तकाष्ठ सदैव दूध वाले वृक्षो का करना चाहिए। यह मध्यमा अगुली के बराबर मोटा एव बारह अगुल का मोटा त्वचा युक्त होना चाहिए और इसके अग्रभाग से मुख शुद्धि करनी चाहिए।

सध्यातर्पण

स्नानोपरान्त कुछ बिछाकर एकाग्रतापूर्वक तीन प्राणायम् तथा सध्या का ध्यान करना चाहिए [179]। साय एव प्रात काल सदैव अग्निछोत्र होम करना चाहिए। पक्ष के अन्त मे अमावस्या और पूर्णमासी को हवन करना चाहिए [180]। द्विजो के लिए अग्निहोत्र से श्रेष्ठ कोई धर्म नही है[181]।

भोजन विधान

नित्य क्रिया के उपरान्त हाथ पैर मुख को धुलकर गोबर से लीपे हुए स्थान पर शुद्ध आसन पर बैठकर पूर्व की ओर अथवा सूर्य की ओर मुख करके भोजन चाहिए[182]। पूर्वाभिमुख भोजन करने से दीर्घायु, दक्षिणाभिमुख भोजन करने से यश, पश्चिमाभिमुख भोजन करने से सम्पत्ति एव उत्तर की ओर मुख करके भोजन करने से सत्य की प्राप्ति होती है[183]। इस बात की सम्पुष्टि भविष्य पुराण[184] से भी होती है। भोजनोपरान्त "अमृतापिधानमास" यह मत्र कहकर जल पीना चाहिए[185]। यज्ञोपवीत धारण कर पवित्रता पूर्वक सुगन्धि तथा माला से

अलकृत होकर भोजन करना चाहिए परन्तु प्रात या सायकाल तथा मध्य मे विशेष रूप से सन्ध्याकाल मे भोजन नही करना चाहिए[186]।

सूर्यग्रहण के पूर्व दिन मे चन्द्रग्रहण के पूर्व सायकाल एव ग्रहणकाल के भोजन नही चाहिए। ग्रहण की समाप्ति पर स्नानोपरान्त भोजन करना चाहिए[187]। भोजन के समय यदि कोई भूखा व्यक्ति हो तो उसे बिना भोजन कराये भोजन नही करना चाहिए। साथ ही यह भी कहा गया है कि यज्ञ शिष्ट पदार्थ से भिन्न पदार्थ नही खाना चाहिए। तथा अन्यत्र चित्त कर एव क्रोध करते हुए भोजन नही करना चाहिए। इस पुराण मे यह भी कहा गया है कि जिसका भोजन अपने लिए, जिसका मैथुन रत के लिए, एव जिसका अध्ययन जीविका के लिए होता है उसका जीवन व्यर्थ होता है[188]।

आलोचित पुराण के अनुसार जो व्यक्ति मस्तक ढककर उत्तर की ओर मुख करके एव जूता पहने हुए भोजन करता है उसे आसुरी भोजन कहा गया है। अर्धरात्रि मे मध्यान मे, अजीर्ण होने पर, गीला वस्त्र धारण कर, टूटे आसन पर बैठे हुए, सोये हुए अथवा खडे हुए भोजन नही करना चाहिए। टूटे फूटे पात्र मे भूमि पर यह हाथ पर भोजन रखकर नही खाना चाहिए। जूठे हाथ से घी नही लेना तथा मस्तक को भी नही छूना चाहिए। भोजन के समय वेद का उच्चारण करना वर्जित है। स्त्री के साथ अन्धकार मे, खुले आकाश मे, देवालय इत्यादि भोजन करना वर्जित किया गया है। भोजन को थोडा सा अन्त मे छोडदेने का विधान है, एक वस्त्र धारण किये हुए सवारी या सैया पर बैठकर खडॉऊ पहने हुए, अथवा हस्ते हुए, रोते हुए, भोजन नही करना चाहिए[189]। भोजनोपरान्त सुखपूर्वक खाये हुए अन्न को पचाना चाहिए एव इतिहास पुराण वेद का पाठ करना चाहिए[190]।

शयन विधान

भोजनोपरान्त रात्रि मे सोना चाहिए, परन्तु उत्तर या पश्चिम की ओर सिर कर नही सोना चाहिए। खुले आकाश के नीचे, नग्नावस्था मे, अशुचि अवस्था मे तथा बैठने के आसन पर, टूटी–फूटी चारपाई पर, सूने घर मे बास या पलास की खाट पर कभी नहीं सोना चाहिए[191]।

वानप्रस्थ

कूर्मपुराण के अनुसार सभी आश्रम दो प्रकार के माने गये है । (1) तापस वानप्रस्थी (2) सान्यायिक वानप्रस्थी

(1) तापस वानप्रस्थी वे होते है, जो वन मे तपस्या देव पूजन, अग्नि मे आहुति, तथा स्वाध्याय मे निरत होते है[192]।

(2) सान्यायिक वानप्रस्थी. जो तपस्या मे रत होने के कारण कृश एव ध्यान मे सदा सलग्न रहते है उन्हे सान्ययिक वानप्रस्थी कहते है[193]।

इस प्रकार आयु के द्वितीय भाग को बिताकर तृतीय आश्रम (वानप्रस्थ) मे अग्नि एव भार्या के साथ प्रवेश करे, या पौत्र को देखने के बाद शरीर के जर्जर हो जाने पर अपनी भार्या का उत्तरदायित्व पुत्रो को देकर वन मे जाना चाहिए[194]। उसे जटा, दाढी, एव नख को रखना चाहिए। इसकी सम्पुष्टि पद्म पुराण[195] के आदि खण्ड से भी होती है।

वानप्रस्थी के कार्य

उत्तरायण के समय शुक्ल पक्ष के पहले वन मे जाने के बाद नियम पूर्वक तप करना नित्य पवित्र फलो एव मूलों का आहार एव पितरो देवो का पूजन करना चाहिए। अतिथि सत्कार देव, पूजन के बाद एकाग्रता पूर्वक आठ ग्रास का भक्षण करना चाहिए[196]। वानप्रस्थी को अग्निहोत्र सम्बन्धी हवन एव वन मे उपलब्ध अन्नो तथा शाक मूल और फलो से पन्चमहायज्ञो का अनुष्ठान करना चाहिए। तीनो सन्ध्याओ मे स्नान, प्राणियो पर दया करना तथा दान ग्रहण नहीं करना चाहिए[197]। वानप्रस्थी को नियमपूर्वक दर्शपौर्णमास, नक्षत्रयाग, नवशस्येष्टि एव चार्तुमासयाग तथा उत्तरायण एव दक्षिणायण याग करना बतलाया गया है। उसके लिए पुरोडास एव चरू से देवता एव पितृगण को हवि (हवन) प्रदान करना तदुपरान्त बची हुई वन्य पवित्र हवि को नमक मिलाकर स्वय खाने का विधान बताया गया है[198]। ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए स्त्री सभोग का त्याग परित्याग कर दे। जो ऐसा नही

करता उसका व्रत नष्ट हो जाता है । और प्रयश्चित का भागी होता है। कूर्म पुराण[199], पद्म पुराण आदि[200]। कूर्मपुराण[201] और पद्म पुराण[202] के अनुसारवानप्रस्थी को गायत्री का जप करना, भूमि पर शयन करते हुए सभी प्राणियो को शरण देते हुए, दानशील होना चाहिए। उसे किसी की निन्दा नही करनी चाहिए, तथा असत्य नही बोलना चाहिए, इतना ही नही उसे निद्रा तथा आलस्य का परित्याग कर देना चाहिए, अशली, पशुओ के साथ निवास करना चाहिए, आरामदायक एव विलासिता पूर्ण विस्तर का परित्याग कर उपलब्ध भूमि पर शयन करना चाहिए ।

पद्म पुराण मे चार प्रकार के वानप्रस्थियो का उल्लेख मिलता है ।

(सद्य प्रभक्षक– वे है जो आये हुए भोज्य पदार्थ को शीघ्र ही खाकर समाप्त कर देते है।

(1) मासिक सचय– वे होते है जो एक मास के लिए एकत्रित करके रखते है ।

(2) वार्षिक सचय– ये एक वर्ष भर के लिए और

(3) द्ववादश वार्षिक सचय– बारह वर्षो के लिए अन्न धान्य को सचित कर रखते है[203]। कूर्म पुराण के अनुसार वानप्रस्थी को तत्काल समाप्त होने वाला फलमूलादि, एक मास, छ मास, तथा एक वर्ष तक के लिए सचय करने का विधान है लेकिन क्वार मास मे पूर्व के सचित, पदार्थो, जीर्ण शीर्ण पुराने वस्त्रो को त्याग कर देना चाहिए[204]। वानप्रस्थी को अपने दॉतो को कबूतर पक्षी के दॉत की तरह अपने दॉतो से अनाज के छिलके को अलग कर केवल उसके गूदे को खाना चाहिए, अथवा पत्थरो से कूटकर खाना चाहिए[205]। वानप्रस्थी को यथाशक्ति उपवास एव शुक्ल पक्ष और कृष्ण पक्ष मे चन्द्रायण व्रत की विधि से निर्वाह करना बतलाया गया[206] ।

वानप्रस्थी को भूमि शयन एव पैरो द्वारा आवागमन करना, ग्रीष्मकाल मे पञ्चाग्नि तापना, वर्षा के दिनो मे खुले आसमान के नीचे रहना तथा जाडे मे गीला वस्त्र धारण करने का विधान है। वानप्रस्थी को सक्ष्यो स्वाध्याय रूद्राध्याय, अथर्ववेद, वेदाभ्यास, योगाभ्यास, करना एव पञ्चाग्नि का सेवन, धूम्रपान, उष्मपान अथवा सोमपान करना बतलाया गया है।

शुक्ल पक्ष मे दुग्धपान एव कृष्ण पक्ष मे गोमय पान करना, गिरे हुए पत्तो का भक्षण करना, सदयो कृच्द्व्रत करना बतलाया गया है। आलोचित पुराण मे वानप्रस्थी के लिए कहा गया है कि निरन्तर यमो एव नियमो का पालन करते हुए कृष्णचर्म, उत्तरीय एव शुक्ल यज्ञोपवीत धारण सध्या तर्पण कर एक पैर पर खडे होकर सूर्य के किरणो को टकटकी लगाकर सूर्य का अवलोकन करना चाहिए[207]। कूर्म पुराण, पद्म पुराण आदि[208] ।

संन्यासाश्रम

श्रमो मे अन्तिम आश्रम सन्यास है कूर्म पुराण मे लिखा है कि वन मे रहते हुए अपनी आयु के तृतीय भाग को बिताकर, चौथे भाग को सन्यास द्वारा व्यतीत करना चाहिए[209]। पदम पुराण[210]। मनु[211] के अनुसार चौथे भाग मे लोगो का साथ छोडकर परिव्रजित हो जाना चाहिए।

सन्यासियो के भेद

कूर्म पुराण मे तीन प्रकार के सन्यासियो का उल्लेख पाया जाता है (1) ज्ञान सन्यासी, (2) वेद सन्यासी, (3) कर्म सन्यासी जो सभी प्रकार के सगो से मुक्त सभी जगह निर्द्वन्द्व तथा निर्भय होकर अपनी आत्मा मे स्थिति होकर विचरता है वह ज्ञान सन्यासी है। जो सदा जितेन्द्रिय, मोक्षार्थी, भोजन न कर, स्त्री का परित्याग कर, वेद के अध्ययन मे लगा रहता है वह वेद सन्यासी कहलाता है। इसी प्रकार जो महायज्ञो को करता है, जो अग्नि को आत्मसात करके सभी वस्तुओ को ब्रह्मार्पण कर देता है उसे कर्म सन्यासी कहते है[212]। इसकी सम्पुष्टि पद्म पुराण[213] से ही होती है परन्तु महाभारत मे सन्यासियो को चार श्रेणियो मे विभक्त किया गया है[214] महा भारत, अनुशासन पर्व। (1) कुटीचक (2) बहूदक (3) हस तथा (4) परमहस। कुटीचक उस सन्यासी को कहते है जो अपने घर मे अथवा पुत्रो के द्वारा बनवायी गयी कुटिया मे निवास करता है। वह शिखा, सूत्र को धारण करता हुआ अपने पुत्रो तथा सम्बन्धियो से भिक्षा माग कर अपना जीवन व्यतीत करता है। पद्म पुराण मे भी यह उल्लेख मिलता है कि कुटीचक सन्यासी क्षेत्र सन्यासी की भाति अपनी कुटिया को छोडकर भिक्षा के लिए कही भी बाहर नही जा सकता[215]। बहुदक त्रिदण्ड धारण करता है कमण्डल तथा काषाय वस्त्र पहनता है तथा सात घरो से भिक्षा मागकर अपनी पेट पूजा करता है। हस किसी गॉव मे एक रात्रि तथा शहर मे पाच रात्रि से अधिक भिक्षावृत्ति के लिए नही ठहरता। वह एक मास तक उपवास रखता, तथा चान्द्रायण व्रत करता है। परमहस सदा किसी वृक्ष के

नीचे, जनवास से दूर किसी स्थान मे तथा श्मसान मे निवास करता है। वह कौपीन धारण करता है, या नगा रहता है वह धर्म–अधर्म शौचाशौच तथा सत्य–अनृत्त के द्वन्द्व से परे रहता है। ऐसा सन्यासी लोष्ठ तथा काचन मे समान भाव रखता है[216]।

वेशभूषा

सन्यासी को केवल एक जीर्णवस्त्र धारण करना चाहिए, अथवा नगा रहना चाहिए[217]। एक अन्य स्थान पर यह कहा गया है कि विद्वान सन्यासी को एक जीर्णवस्त्र धारण करना बताया गया है सन्यासी को बाल तथा शिखा भी रखना चाहिए तथा वह यज्ञोपवीत भी धारण करे[218]। आलोचित पुराण मे सन्यासी के लिए सिर, दाढी तथा मूँछो को मुडाकर शिखा न रखने का विधान है। उसे यज्ञोपवीत भी नही पहना चाहिए[219]। कमड, एक दण्ड, या त्रिदड (तीन छोटी छडियॉ) एव कुश तथा भस्म धारण करना उसका कर्तव्य है अनेक आर्चायो ने दण्ड का अर्थ सयम बतलाते हुए त्रिदण्डी की व्याख्या मनसा, वाचा, कर्मणा, सयमित रहना की है[220]। इसकी सम्पुष्टि मनुस्मृति से भी होती है[221]।

भोजन पात्र

आलोचित पुराण मे सन्यासी के लिए केवल चार प्रकार के पात्रो मे भोजन करने का विधान पाया जाता है । (1) लौकी का बना बर्तन (2) लकडी (3) मिट्टी तथा (4) बास का बना हुआ पात्र [222]।

मनु ने यतियो के पात्रो का वर्णन करते हुए ठीक इन्ही प्रकारो का उल्लेख किया है[223]। इन बर्तनो को गाय के बालो से रगड कर पानी से साफ करना चाहिए[224]। धातु से बने बर्तनो का पात्रो का प्रयोग करना सन्यासी के लिए वर्जित है ।

सन्यासियों के धर्म

कूर्म पुराण मे सन्यासियो के धर्म के सम्बन्ध मे लिखा है कि उन्हे कमण्डल रखना चाहिए, ग्राम की सीमा पर, वृक्ष के नीचे सोना चाहिए, अथवा देवालय मे निवास करना, गदा वस्त्र पहनना अथवा एक ही व्यक्ति का अन्न न खाना तथा दूसरो की सहायता पर अवलम्बित नही रहना चाहिए । इसके साथ ही ससार की सभी जीवो से उसे उदासीन

(उपेक्षा) भाव से व्यवहार करना चाहिए। वर्षा काल को छोडकर एक स्थान पर नही रहना चाहिए[225]।

भिक्षा की याचना

आलोचित पुराण के अनुसार सन्यासी को केवल सात घरो मे भिक्षा मॉगनी चाहिए। परन्तु वह बीमार हो अथवा वृद्धावस्था मे चलने फिरने मे असमर्थ हो तो एक ही घर मे भिक्षा माग सकता है। उसे अगले दिन के लिए अन्न इकट्ठा नही करना चाहिए वह गाव से जो माग माग कर भिक्षा लाये उसमे से केवल आठ ग्रास भोजन करे। आहार की मात्रा करके उसे एक ही समय भोजन करना चाहिए। एक बार मागने पर भिक्षा न मिले तो पुन भिक्षा मागनी चाहिए [226]। गृहस्थ का घर मूसल की आवाज एव धुऑ रहित हो जाये तथा घर के सभी लोग भोजन कर लेने के उपरान्त कसोरे एव पत्तल का ढेर लग जाय तो यति को भिक्षा मागनी चाहिए [227]। एक बार "भिक्षा" यह शब्द कहकर भिक्षा मागे और मुख नीचे किये हुए उतने समय तक रूकना चाहिए जितने समय मे गाय दुही जाती है[228]। भिक्षा मे प्राप्त भोजन को सूर्य को दिखाकर "प्राणयाम स्वाहा" इत्यादि मत्रोचारण द्वारा पाच प्राणहुति देने के बाद पवित्रता पूर्वक पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख होकर आठ ग्रास भोजन करना चाहिए[229]। सन्यासी को आकण्ठ भोजन नही करना चाहिए, केवल उतना ही खाये जिससे जीवन यात्रा का निर्वाह होता रहे । बोधायन तथा आयस्तम्ब ने सन्यासी के लिए आठ, वानप्रस्थी के सोलह, ग्रहस्थ के लिए बत्तीस कौर भोजन करने का विधान बताया है । आयस्तम्ब धर्मसूत्र[230], बौधायन धर्मसूत्र[231] ।

आलोचित पुराण मे यति का धर्म अहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रम्हचर्य, तपस्या, क्षमा, दया, तथा सन्तोष बतलाया गया है[232]। वह होम मत्र तथा गायत्री का जप करे, पच यज्ञो का विधान करे, सदैव स्वध्याय मे निरत रहे तथा वेद शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करे[233]। सन्यासी को चाहिए कि वह अधियज्ञ आधिदैविक तथा आध्यात्मिक यज्ञो को सम्पादित करे। उसे जीवन या मरण का स्वागत नहीं करना चाहिए उसे न कुछ पढना चाहिए, न बोलना चाहिए, और न किसी की बात को ध्यानपूर्वक सुनना चाहिए [234]।

सन्यासी काम–वासना से दूर ही रहे क्योकि इससे उसका व्रत नष्ट हो जाता है[235]। उसे ऑख से देखकर जमीन पर पैर रखना चाहिए, वस्त्र से छानकर जल पीना चाहिए, वह सत्य से पवित्र वाणी को बोले, और मन से पवित्र कार्य को करे[236]। भिक्षु असत्य भाषण न करे। हिसा, तृष्ठा, तथा याञ्चा कभी न करे। चोरी कदापि न करे, चोरी करने पर चान्द्रायण व्रत करने से ही उसका पाप नष्ट हो सकता है चोरी से बैठकर उसका कोई दूसरा अधर्म नही है[237]। विष्णु पुराण[238] के अनुसार सन्यासी को पुत्र, द्रव्य और पत्नी के स्नेह का सर्वथा परित्याग करना चाहिए। मत्स्य पुराण[239] के अनुसार वही सच्चा भिक्षु है जो अपनी इन्द्रियो पर विजय प्राप्त कर सके। मनुस्मृति मे लिखा है कि इन्द्रिय निरोध के द्वारा ही भिक्षु अमरता प्राप्त कर सकता है[240]। वायु पुराण[241] मे कहा गया है कि भिक्षु को ब्रह्म की प्राप्त तभी हो सकती है जब वह सासरिक पदार्थो के प्रति आसक्त त्याग दे।

सन्यासी को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए ससार के सुख दुख से उदासीन रहकर ध्यान तथा आध्यात्मिक ज्ञान के सम्पादन मे निरत रहना चाहिए। उसे श्रौत तथा गृह अग्नि का सेवन नही करना चाहिए और न अन्न पकाने के लिए वह साधारण आग को ही जलाये। भिक्षु को अपरिग्रही होना चाहिए, वह अपने जीर्ण–शीर्ण वस्त्र, कमण्डल, भिक्षा–पात्र के अतिरिक्त किसी भी वस्तु को अपने पास न रखे। चबूतरे पर सोते हुए उसे रूग्णावस्था मे भी कुछ चिन्ता नही करनी चाहिए। वह मौन व्रत का पालन करे तथा वेदो का पाठ कर सकता है। प्राणायाम के द्वारा अपने मन को पवित्र करते हुए उसे मोक्ष प्राप्ति के लिए साधना करनी चाहिए[242]।

चारो आश्रमों के तीन सम्प्रदाय

(1) वैष्णव (2) ब्राह्मा (3) हराश्रम [243]।

भक्तो को अपने ईष्ट देव का ध्यान एव पूजन करे । शिवभक्त– शिव भक्त को शिव लिग चिन्ह धारण कर मस्तक पर श्वेत भस्म से त्रिपुण्ड बनाये[244]।

नारायण देव

जो व्यक्ति नारायण देव के भक्त हो उसे सदैव मस्तक पर कस्तूरी आदि के सुगन्धित जल से शूल की आकृति का तिलक धारण करना चाहिए [245]।

ब्रह्मा

जो व्यक्ति ब्रह्मा का भक्त हो उसे सदैव मस्तक पर तिलक लगाना चाहिए [246]। त्रिशूल का चिन्ह धारण करने से वह त्रिगुणात्मक धारण होता है जो ब्रह्मा, विष्णु एव शिवरूप है । इस प्रकार तीनो प्रकार के भक्तो को कल्याणकारी आयु प्रदान करने वाला त्रिशूल का चिन्ह धारण करना बतलाया गया है[247]।

कूर्म पुराण मे वर्णित प्रमुख सस्कार

भारतीय सस्कृति के अजस्र प्रवाह मे जिन अवधारणाओ मे शनै शनै एक निश्चित स्वरूप ग्रहण करके भारत के मानव जीवन को अत्याधिक पभावित किया और जो हिन्दू धर्म का एक अनिवार्य अग बन गयी उनमे से एक अवधारणा सस्कार की थी जैमिनी के सूत्रो मे सस्कार शब्द का अनेक बार प्रयोग हुआ है। 'सस्करोति' शब्द बनाने या चमका देने के अर्थ मे उपनिषदो मे प्रयुक्त हुआ है छान्दोग्य उपनिषद[248]।

"तस्मादेष एव यज्ञस्तस्य मनश्च वाक् च वर्तिनी ।
त्योरन्यतरामनसा सस्करोति ब्रम्हा वाचा होता।।"

कात्यायन श्रौत सूत्र मे सस्कार को पवित्रिकरण का एक सहायक कृत माना गया है। जिसे श्रौत या गृहकर्मणिी के अर्न्तगत किया जाता है[249]। शत्पथ ब्राह्मण[250] मे सस्कार को लक्ष्य करके सस्कुरू तथा सस्कृत शब्द प्रयुक्त हुए है। गृहय सूत्र मे भी सस्कार का लक्षित अर्थ उपनयन माना गया है[251]। जैमिनी सूत्र[252] की शबर टीका सस्कार शब्द का इस प्रकार का अर्थ किया गया है कि सस्कार वह है जिसके हो जाने पर पदार्थ (या व्यक्ति) किसी कार्य के योग्य हो जाता है। क्रमश शबर कथित अर्थ ही सस्कार शब्द के लिए रूढ हो गया। पी०वी० काणे[253] के अनुसार सस्कार का मनोवैज्ञानिक महत्व ही था सस्कार करने वाला व्यक्ति एक नये जीवन का आरम्भ करता था जिसके लिए वह नियमो के लिए पालन हेतु

प्रतिश्रुत होता था। डॉ० राम जी उपाध्याय[254] के मत मे सस्कार वस्तुत उस मानवीय योजना का अभिव्यक्त करता है जो उसकी मानसिक एव शारीरिक शुद्धि के साथ उसके समक्ष भावी जीवन की उत्थान परक परम्परा प्रस्तुत करता है। डॉ बैशम[255] के अनुसार सस्कार मानवीय जीवन को पूर्णतया अवृत्ति किये रहता है तथा जन्म से मृत्यु तक उसे प्रभावित करते है।

डॉ राज बली पाण्डेय के अनुसार सस्कार का अभिप्राय शुद्धि की धार्मिक क्रियाओ तथा व्यक्ति के दैहिक, मानसिक और बैद्धिक परिष्कार के लिए किये जाने वाले अनुष्ठानो मे से है, जिनसे वह समाज का पूर्ण विकसित सदस्य हो सके। किन्तु हिन्दू सस्कारो मे अनेक आरम्भिक विचार, धार्मिक विधि विधान, उनके सहवर्ती नियम तथा अनुष्ठान भी समाविष्ट है, जिनका उद्देश्य केवल दैहिक सस्कार ही न होकर सस्कार्य व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का परिष्कार शुद्धि और पूर्णत भी है[256]।

सस्कार किये जाने से उत्पन्न योग्यता, दो प्रकार की मानी जाती है। पथमत सस्कार किये जाने से व्यक्ति वेदाध्ययन या गृहस्थाश्रम प्रवेश आदि क्रियाओ के योग्य हो जाता था। द्वितीयत सस्कार करने से वीर्य अथवा गर्भादि के विभिन्न दोषो का परिहरण हो जाता था। इन दोनो योग्यताओ पर बल दिये जाने के कारण धीरे–धीरे भारत के जन–जीवन मे सस्कारो की अनिवार्यत प्रारम्भ हो गयी। स्मृति काल मे अनिवार्यता इतनी बढी कि सस्कार (उपनयन) होने से ही द्विजत्व सिद्ध होने लगा (जन्मना जायते शुद्र सस्कारात् द्विज उच्यते)। डा० राजबली पाण्डेय[257] के अनुसार उपनयन सस्कार वस्तुत द्विजातियो के लिए धार्मिक साहित्य मे प्रविष्ट एव प्रतिष्ठित होने का एक प्रकार का प्रवेश पत्र था।

भारत वर्ष मे वेदो को हिन्दू धर्म का आदि श्रोत माना जाता है किन्तु वेदो मे न तो सस्कार शब्द प्राप्त होता है और न ही किसी भी सस्कार के प्रति निश्चित विधि या निषेध मिलते है। तथापि ऋृग्वेद[258] मे गर्भाधान, विवाह तथा अन्त्येष्टि के मन्त्र अवश्य प्राप्त होते है। अथर्ववेद मे उन सक्षिप्त सूक्तो का और भी विस्तृत रूप प्राप्त है। ऋृग्वेद तथा अथर्ववेद के ये ही मन्त्र स्मृति काल मे तन्तद् सस्कारो के अवसर पर प्रयोग किए गए प्रतीत होते है[259]।

वेदो के व्याख्या रूप ब्राह्मणग्रन्थ मुख्यत श्रौत भागो से सबद्ध रहे। अत इन ग्रन्थो मे भी साक्षात् रूप से तो सस्कारो का विवेचन नही हुआ है किन्तु उपनयन सस्कार से जुडी

अनेक विधियॉ अवश्य वर्णित है। यही स्थिति कूर्म पुराण, अरण्यको तथा उपनिषदो की है इन ग्रन्थो मे भी केवल उपनयन सस्कार तथा ब्रह्मचर्य से सम्बद्ध कतिपय प्रसग प्राप्त होते है।

प्रयोजन

सस्कार विवेचन की दृष्टि से सूत्र साहित्य सर्वाधिक समृद्ध है। गृह्य सूत्रो मे गर्भाधान से अन्त्येष्टि तक सारे सस्कारो का विविध एव विस्तृत वर्णन है। धर्म सूत्रो मे सस्कारो की विधि का वर्णन तो अत्यल्प है किन्तु सस्कारो की सामाजिक उपयोगिता को भली प्रकार प्रकट किया गया है। गौतम धर्म सूत्र[260], आपस्तम्ब धर्मसूत्र[261], वशिष्ठ धर्म सूत्र[262]।

गृह्य सूत्रो मे सस्कार विवेचन प्राय विवाह से प्रारम्भ हुआ हे। वस्तुत इन सस्कारो का सबन्ध व्यक्ति विशेष मात्र से न होकर सम्पूर्ण समाज मे था। ये सस्कार वैवाहिक जीवन के दायित्वो के प्रतीक भी थे। इसीलिए कहा गया है कि जो माता पिता अपनी सन्तान के सस्कार नही करते वे जनक मात्र है तथा पशु सदृश है (जो इन्द्रिय तृप्ति के लिए सन्तान उत्पन्न करते है)। इस विषय मे मनु[263] का कथन नितान्त स्पष्ट है। तदनुसार गर्भाधान तथा अन्य सस्कारो की क्रियाये शरीर को शुद्धि करती है तथा इहलोक और परलोक मे भी मनुष्य को पाप से विमुक्त कराती है । विशिष्ट सस्कारो के किये जाने से व्यक्ति के जन्मजाति दोष नष्ट हो जाते है । शकर ने भी वेदान्त सूत्र[264] के भाष्य मे यही अभिमत प्रगट किया है। मानव व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास ही सस्कारो का प्रयोजन है। जीवन की प्रगति मार्ग मे ये सस्कार सुन्दर सोपान के सदृश है, जो मनुष्य के मनोविचारो तथा प्रवृत्तियो को शुद्ध करते हुए उसे निरन्तर ऊँचा उठाते है। बाल्यावस्था मे इन सस्कारो का विशिष्ट प्रयोजन है। बालक के अपरिपक्व मस्तिष्क पर सस्कारो की विभिन्न क्रियाये अपना दृढ एव दूरगामी प्रभाव छोडती हैं। विभिन्न संस्कारो से शुद्ध हुआ शरीर ही ब्रम्हपात्र के योग्य हो पाता है[265]। मेघातिथि मे मनु के श्लोक की व्याख्या मे सस्कारो से केवल शरीर की ही शुद्धि नही अपितु आत्मा को भी सस्कृत माना[266]। शुद्ध शरीर मे ही पवित्र आत्मा निवास करती है अशुद्ध शरीर मे नही। प्रकाश मे हरीति के वचनो को उद्धृत किया है कि 'ब्राम्ह सस्कार सम्पन्न व्यक्ति ऋषि पद प्राप्त कर लेता है तथा दैव सस्कार सम्पन्न व्यक्ति देव पर प्राप्त करता है। भारतीय ऋषियो ने सस्कारो के द्वारा मनुष्य के व्यक्तित्व को परिष्कृत करने और एक

विशिष्ट लक्ष्य की ओर प्रेरित करने का प्रयत्न किया था, जिस प्रकार कोई चित्र सुन्दर रगो के समायोजन से धीरे–धीरे अपने सौन्दर्य उद्घाटित करता है, उसी प्रकार विधि विधान पूर्वक किये गये सकारो से व्यक्ति मे ब्राम्हण्य प्रतिष्ठित होता है[267]। डा० राजबली पाण्डेय [268] के अनुसार सस्कार जीवन के विभिन्न अवसरो को महत्व और पवित्रता प्रदान करते है। वे इस बात पर जोर देते है कि जीवन के विकास का प्रत्येक चरण केवल शारीरिक क्रिया नही किन्तु उसका सम्बन्ध मनुष्य की बुद्धि भावना और आत्मिक अभिव्यक्ति से है जिनके प्रति व्यक्ति को जागरूक रहना चाहिए। अतिपरिचय के कारण जीवन की घटनाओ की तरफ प्राय उदासीनता और असावधानी उत्पन्न हो जाती है और कुछ व्यक्तियो के प्रति अवज्ञा भी। सस्कार इस तन्द्रा और अवज्ञा का निराकरण करता है। और जीवन के विकास क्रमो के महत्व का स्पष्टीकरण सामूहिक तथा सामाजिक स्तर पर करता है। सस्कारो के अभाव मे जीवन की घटनाये शरीर की दैनिक आवश्यकताओ और आर्थिक व्यापार के समान अनाकर्षक चमत्कारहीन और जीवन के भावुक सगीत से रहित हो जाती है।

सस्कार पौराणिक प्रवृत्ति

पुराणो मे भी सस्कारो के महत्व को विशेष रूप से स्वीकार किया गया है। आलोचित पुराण मे आख्यात कुछ स्थानो पर गर्भाधान, चूडाकरण सस्कार का जिक्र तो है परन्तु इस सम्बन्ध मे विस्तृत प्राप्त नही है। अन्य पुराणो मे इसका विस्तृत विवरण प्राप्त होता है जिससे ब्राह्मण ब्रह्मा के स्थान को प्राप्त करता है और वह सबसे ब्रम्हात्व को भी प्राप्त करता है। सस्कारो से पापहरण की पौराणिक मान्यता की पुष्टि याज्ञवल्क स्मृति मे विहित है, जिसमे चूडाकर्म आदि सस्कार पाप– अपहार के कारण बताये गये है[269]। शुचिता सन्निवेश एव धमार्थ, समाचरण के कारण सस्कार समाज मे विशेष लोकप्रिय थे[270]। पुराणो मे उत्सवो परम्पराओ व्रतो उपवासो तथा विभिन्न क्रियाविधियो के प्रचलनो का उल्लेख मिलता है, जिनमे हिन्दू सस्कारो की परम्परा एव उनकी महत्ता पर प्रकाश पडता है। इसी प्रकार ज्योतिष शास्त्र सम्मत विचारो के जन–जीवन मे विशिष्ट प्रयोग एव सनिवेश भी पौराणिक समाज मे सस्कारो एव उनकी विधियो की परम्परा की जानकारी की जा सकती है[271]।

विहित संस्कार

सस्कारो की सख्या के सम्बन्ध मे भारतीय विचारक सहमत नही है। गौतम मे सस्कारो की सख्या चालीस कही है[272]। जिनमे अनेक पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ, सोमयज्ञ तथा वेदव्रत सम्मिलित कर दिये गये है। अलोचित पुराण मे ब्राह्मणो के सस्कारो की सख्याओ का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त नही होता है कि कितने सस्कार है परन्तु कुछ सस्कारो का उल्लेख अवश्य है जिसके अन्तर्गत उपनयन, देव पितर, भूत एव बह्म इन सबके अष्टकाकर्म, हविर्यज्ञ, सोमयज्ञ की भी परिगणना की गयी है। मनुस्मृति, याज्ञवल्क स्मृति आदि मे सस्कारो की कोई सख्या नही दी गयी है। अपितु गर्भाधान से अन्त्येष्टि तक के सस्कारो का सम्पूर्ण विधि विधानो के साथ वर्णन अवश्य किया गया है। परवर्ती निबन्ध कारो ने ही अधिकाशतय सोलह सस्कारो को मान्यता दी है 'सस्कार शब्द को शारीरिक शुद्धता के अर्थ रूढ कर दिया[273]। डॉ० राजबली पाण्डेय ने इन समस्त सस्कारो को पॉच भागो मे विभाजित किया है । (1)जन्म से पूर्व के सस्कार, (2) शिशु के सस्कार (3) शिक्षा सबधी सस्कार (4) विवाह (5) अन्तेष्टि 2 आलोचित पुराण मे सभी सस्कारो के विस्तृत विवरण नही प्राप्त होते परन्तु गर्भाधान के समय एवम उपनयन सस्कार सम्बधित उल्लेख मिलते है।

गर्भाधान

इस सस्कार को निषेक अथवा चतुर्थी कर्म भी कहा गया है किन्तु वैखानस ने निषेक तथा गर्भाधान को भिन्न–भिन्न माना है। इस सस्कार के द्वारा माता के गर्भ मे बीज रूप से शिशु प्रतिष्ठित किया जाता है। मनुस्मृति[274], याज्ञवल्क्य स्मृति[275]। पारस्कर गृहयसूत्र[276], आपस्तम्ब गृहयसूत्र[277], वैखानस धर्मसूत्र[278], वीरमित्रोदय सस्कार प्रकाश मे उद्धृत पूर्वमीमासा[279], "गर्भ सधार्यते येन कर्मणा तद् गर्भाधानमित्यनुगतार्थ कर्मनामधेयम्।"

उपनयन संस्कार

अथर्ववेद[280] मे उपनयन शब्द का प्रयोग ब्रह्मचारी को ग्रहण करने के अर्थ मे किया गया है। यहॉ का आशय आचार्य के द्वारा बह्मचारी की वेद विद्या मे दीक्षा से है। अपरार्क मे लिखा है कि उपनयन शब्द से अन्त वासी छात्र और गायत्री के बीच का सम्पर्क अभिप्रेत है,

जिसकी स्थापना आचार्य करता है[281]। कूर्म पुराण[282] के अनुसार उपनयन सस्कार एक महत्वपूर्ण सस्कार है इसी पुराण मे एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख है कि देवो की माता अदिति से उत्पन्न भगवान हरि ने उपनयन सस्कार के बाद ही तीनो लोको की उत्पत्ति कर भरद्वाज से वेदो एव सदाचार का अध्ययन किया । विष्णु पुराण[283] मे वर्णित है उक्त सस्कार से सस्कृत होकर बह्मचारी को विद्या लाभ करना चाहिए। उपनयन सस्कार से सुसस्कृत होने के उपरान्त आचार्य के आश्रम मे नैष्ठिक जीवन यापन तथा विद्या लाभ करने का उल्लेख अनेक पुराणो मे हुआ है[284]। डॉ० राजबली पाण्डेय[285] के अनुसार उपनयन सस्कार के बाद ही बालक का अनुशासित एव गम्भीर जीवन प्रारम्भ होता था । आपस्तम्ब धर्मसूत्र[286] मे भी उल्लिखित है कि उपनयन सस्कार विद्यार्थी के लिए श्रुति विहित सस्कार है। मिताक्षरा[287] का उल्लेख है कि यदि प्राकृतिक आवश्यकता के समय यज्ञोपवीत नही किया गया तो प्रायश्चित करना पडता है। अपरार्क [288] ने लघु हारीत का उदाहरण देते हुए यह निर्देश दिया है कि ब्राह्मण यदि यज्ञोपवीत के बिना भोजन करता है तो उसे प्रयश्चित करना चाहिए ।

आयु

कूर्मपुराण[289] मे उल्लिखित है कि ब्राह्मण शिशु का उपनयन सस्कार गर्भ से आठवे वर्ष अथवा आठवे वर्ष मे करना चाहिए, परन्तु अन्य वर्णो के उपनयन सस्कार की आयु का उल्लेख नही है। अन्य स्मृति एव पुराणो मे इसका अलग अलग उल्लेख है। ब्राह्मण का उपनयन सस्कार गर्भ से आठवे वर्ष मे करना चाहिए, क्षत्रिय का उपनयन सस्कार गर्भ से ग्यारहवे वर्ष मे करना चाहिए, वैश्यो के लिए यह व्रत बारहवे वर्ष मे भी वैध माना गया गया है[290]। गृह्य सूत्रो मे भी इसी प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है भविष्य पुराण मे एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि सोलह वर्ष की अवस्था तक ब्राह्मण कुमार की सावित्री अतिक्रमण नही करती उसी प्रकार क्षत्रियो का बाइस वर्ष तथा वैश्यो का चौबीस की अवस्था तक भी उपनयन सस्कार हो सकता है। मनुस्मृति मे भी इस प्रकार का उल्लेख मिलता है। कि इसके ऊपर हो जाने पर जिनका उपनयन सस्कार नही होता वह असस्कृति है। भविष्य पुराण ब्राह्मपर्व[291]। राजाओ के शिशुओ को अधिक बलि होने की कामना से छठे वर्ष मे

यज्ञोपवीत कर लेना चाहिए। इसी प्रकार विशेष धन उपार्जित करने की कामना से वैश्य का आठवे वर्ष मे उपनयन सस्कार करना चाहिए[292]।

चर्मवस्त्र

आलोचित पुराण मे उपनयन वाले व्रती के लिए तीन प्रकार के चर्म का उल्लेख मिलता है ब्राहम्ण के कृष्ण, मृग, चर्म उसके अभाव मे गाय के चर्म का या रूरू मृगचर्म [293]। परन्तु भविष्य पुराण के अनुसार उपनयन व्रत पालन करने वाले व्रतियो के लिए भी तीन प्रकार चर्म का उल्लेख मिलता है। ब्राह्मण के लिए कृष्ण मृगचर्म, क्षत्रिय के लिए रूरू मृगचर्म, और वैश्य के लिए बकरे का चर्म [294] इसी प्रकार कपास, रेशमी आदि विविध प्रकार के वस्त्र धारण करने चाहिए[295]। परन्तु भविष्य पुराण के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय एव वैश्यो को सन, रेशमी आदि विविध प्रकार के वस्त्र धारण करने चाहिए। प्राचीन काल मे पशुओ के चर्म का वस्त्र के रूप मे प्रयोग अजिन, वासिन, (शत्पथ ब्राह्मण[296]) इस विशेषण से सूचित होता है तथा चर्मकारो के व्यापार का उल्लेख मिलता है। मरूद्गण भी मृग चर्म धारण करने के लिए भी प्रसिद्व थे[297]। गोपथ ब्राह्मण के सुन्दर मृगचर्म वर्चस्व तथा बौद्धिक और अध्यात्मिक सर्वोच्चता का प्रतीक है[298]।

मेखला

कूर्मपुराण[299] मे आख्यात है कि ब्राहम्ण की मेखला मूज की बनी हुई त्रिसूती, तीन लडियो वाली समान तथा चिकनी होनी चाहिए। मूज न मिलने पर ब्राहम्णो के लिए कुश एव तीन गॉठ युक्त मेखला बनानी चाहिए। परन्तु अन्य वर्णो के सम्बन्ध अलग से कोई उल्लेख नही मिलता है।

भविष्य पुराण[300] के अनुसार ब्राह्मण की मेखला मूज की बनी हुई त्रसूती, तीन लडियो वाली समान तथा चिकनी होनी चाहिए, क्षत्रिय के लिए मूर्वा की बनी होनी चाहिए, तथा वैश्य के लिए सन के रेशो की होनी चाहिए[301]। मूज न मिलने पर ब्राह्मणो के लिए कुश अश्मन्तक अथवा बल्वज (बगही) की मेखला बनानी चाहिए । गौतम गृहयसूत्र[302], बौधायन गृहयसूत्र[303], मनुस्मृति[303] आदि मे भी ब्राह्मण, क्षत्रिय एव वैश्य बच्चे के लिए क्रमश

मुञ्ज, मूर्वा एव पटुआ की मेखला का विधान है। बौधायन गृहयसूत्र[304] ने मुञ्ज की मेखला सबके लिए मान्य कही है ।

यज्ञोपवीत

कूर्मपुराण[305] के अनुसार ब्राहम्ण का उपवीत कपास का होना चाहिए, जो तीन लडियो मे हो वह कुश का या वस्त्र का हो। अन्य धर्मशास्त्रो के नियमानुसार भी ब्राहम्ण को कपास का क्षत्रियो को सन का तथा वैश्य को भेड के ऊन का उपवीत धारण करना चाहिए [306]। मनुस्मृति[307],बौधायन धर्मसूत्र[308] विष्णु धर्मसूत्र[309]। किन्तु समस्त वर्णो के लिए कपास का यज्ञोपवीत विकल्प के रूप मे विहित है।

दण्ड

कूर्म पुराण के अनुसार ब्रह्मचारियो का दण्ड सिर के बराबर का भी तीन प्रकार के होने चाहिए। बेल, पलास तथा यज्ञीय वृक्ष का दण्ड ग्रहण करे। गौतम धर्मसूत्र[310] के अनुसार दण्ड घुना नही होना चाहिए [311]। उसकी छाल लगी रहनी चाहिए और ऊपरी भाग टेढा चाहिए। किन्तु मनु के अनुसार दण्ड सीधा, सुन्दर एव अग्निस्पर्श से रहित होना चाहिए। भविष्य पुराण[312] के अनुसार ब्रह्मचारियो के दण्ड भी तीन प्रकार के होने चाहिए। ब्राह्मण के लिए बेल, पलास अथवा पाकर का दण्ड ग्रहण करे। क्षत्रिय बरगद, बेत का तथा वैश्य पीलु वृक्ष का गूलर अथवा पीपल का दण्ड ग्रहण करे, ब्राहणो का दण्ड माप उनके केशान्त तक होना चाहिए। राजाओ का दण्ड ललाट तक तथा वैश्यो का नसिका के अन्त तक होना चाहिए। वे सब दण्ड देखने मे सीधे तथा सुन्दर हो जिनके देखने से मनुष्यो के मन किसी प्रकार के उद्वेग भावना न फैले। उन पर उत्तम बकला लगा हो कही अग्नि से जले हुए न हो। इस प्रकार अपनी इच्छानुसार दण्ड ग्रहण कर सूर्य की उपासना कर भलीभॉति गुरू की पूजा कर ब्रह्मचारी यथा विधि भिक्षाटन करे।

भिक्षाटन

कूर्मपुराण के अनुसार उपनीत ब्राह्मण पहले भवत् शब्द का प्रयोग कर भिक्षाटन करे, क्षत्रिय वाक्य के मध्य मे भवत् शब्द का प्रयोग करे और वैश्य वाक्य के अन्त मे भवत् शब्द

प्रयोग करे[313]। ब्रह्मचारी को सर्वप्रथम अपनी माता, बहन अथवा अपनी मौसी से भिक्षा की याचना करनी चाहिए जो उसकी आवमानना न करे[314]। कूर्म पुराण मे यह भी लिखा है कि जो अपने कर्म मे निरत् हो, वेदो मे आस्था रखते हो, यज्ञादि करने वाले और श्रद्धालु प्रकृति के हो उनके घर से ब्रह्मचारी अपने घर से भिक्षा सग्रह करे[315]। प्रतिदिन चित्त एव इन्द्रियो को निरूद्ध कर उसे गृहस्थो के घरो से भिक्षा की याचना करनी चाहिए। यदि अन्यत्र मिलना एकदम असम्भव हो तो शूद्र को छोडकर ग्राम भर मे भिक्षाटन करना चाहिये। यदि सर्वथा असम्भव हो तो चारो वर्णो मे भिक्षाटन करना चाहिए[316]। ब्रह्मचारी को सर्वदा भिक्षा द्वारा ही जीविका निर्वाहित करनी चाहिये। एक व्यक्ति का अन्न खाने वाला व्रती नही कहा जा सकता। भिक्षाटन द्वारा जीविका चलाने वाले ब्रह्मचारी का भोजन भी उपवास की भाति स्मरण किया जाता है। यही कथन मनुस्मृति [317], बौधायन धर्मसूत्र [318] एव याज्ञवल्क स्मृति [319] मे प्राप्त होता है ।

आपशतम्ब धर्मसूत्र[320] एव गौतम धर्मसूत्र के अनुसार ब्रम्हचारी अपात्रो (चाण्डाल आदि) एव अपराधियो को छोडकर किसी से भी भोजन माग सकता है। किन्तु परासर, माधवीय ने लिखा है कि आपात् काल मे भी शूद्र के यहॉ का पका भोजन भिक्षा के रूप मे नही लेना चाहिए[321]। पी० वी० काणे [322] ।

डॉ० राजबली पाण्डेय के अनुसार भिक्षा के इस कृत्य द्वारा विद्यार्थी के मन पर यह अकित करने का प्रयत्न किया जाता था कि समाज की एक अवित्तीय इकाई होने के कारण वह अपने निर्वाह के लिए सार्वजनिक सहायता पर निर्भर है तथा उसे उस समय तक समाज से पोषण लेना चाहिए जब तक कि वह उसका अर्जन करने वाला सदस्य न हो जाये [323]।

खान-पान

अन्न की महिमा

प्राचीन काल से ही अन्न की पवित्रता तथा शुद्धता पर विशेष बल प्रदान किया गया है। छान्दोग्य उपनिषद मे लिखा है कि भोजन की शुद्धि पर ही मन की शुद्धि निर्भर है और जब मन शुद्ध रहता है तब स्मृति ठीक रहती है । मनु के मतानुसार अन्य दोष के कारण की

ब्राह्मण की मृत्य होती है। कूर्म पुराण के अनुसार अन्न की सर्वदा पूजा करनी चाहिए अन्यत्र चित्त कर तथा क्रोध करते हुए भोजन नही करना चाहिए।

भोजन

आलोचित पुराण मे लिखा है कि पूर्वाभिमुख होकर भोजन करने से दीर्घायु की प्राप्ति होती है, दक्षिण मुख भोजन करने से यश की प्राप्त होती, पश्चिम मुख भोजन करने से लक्ष्मी (सम्पत्ति) की प्राप्ति होती है और उत्तर मुख भोजन करने से सत्य की प्राप्ति होती है[324]। द्विज समाहित चित होकर विधि पूर्वक आचमन कर अन्न का भक्षण करे। भोजन करने के उपरान्त भी जल से अच्छी तरह आचमन कर सब इन्द्रियो का स्पर्श करे[325]। अन्न की सदा पूजा करे। कलुषित भावना का सर्वथा परित्याग कर उसका भक्षण करे[326]। आलोचित पुराण मे उल्लिखित है कि ईश्वर को ध्यान कर अन्न का अभिनन्दन करने के बाद भोजन करे, पूजित अन्न सदा बल एव ओज प्रदान करता है[327]। और अपूजित अन्न के भोजन से उन दोनो का विनाश होता है। अपना जूठा किसी को न दे, और स्वय किसी का जूठा न खाये अपने ही बचे हुए जूठे अन्न को कुछ देर बाद फिर से न खाये। जो कोई लोभ वश ऐसा करता है वह दोनो लोको मे नष्ट होता है।

आचमन

कूर्म पुराण[336] मे ब्राम्ह्मण ब्रह्मचारी के लिए आचमन पवित्रा की दृष्टि से अत्यधिक महत्व उल्लिखित है। ब्राह्मण को हाथो एव पैरो को धोकर पूरब की मुँह करके पवित्र स्थान पर बैठकर भोजन कर आचमन करना चाहिए[328]।

इसी पुराण के एक अन्य स्थान इन क्रियाओ के तदुपरान्त आचमन करना चाहिए जो निम्नलिखित है – भोजन, पान, शयन, एव स्नान मार्ग गमन, ओठ स्पर्श, वस्त्र धारण, शुक्र–मूत्र एव मल त्याग, अनुपयुक्त भाषण, थूकरने के बाद एव अध्ययन आरम्भ के समय, खाशी आने पर चौराहा, श्मशान मे जाने पर दोनो सध्याओ के समय द्विज को आचमन करना चाहिए[329]। चाण्डाल, एव म्लेच्छ, स्त्री, शूद्र, जूठे मुखवाले व्यक्ति से बात करने पर, जूठे भोजन के स्पर्श, अश्रु एव रूधिर गिरने पर आचमन करना चाहिए[330]। इसी प्रकार पूर्व या

उत्तर की ओर मुख बैठकर शौच करने पर व्यक्ति शीतल एव फेन रहित शुद्ध जल से आचमन करना चाहिए[331]। अग्नि जलाने पर अधिक परिश्रमी पुरूष के स्पर्श तथा केशो तथा बिना धोये हुए वस्त्रो के छूने पर जल गीले तिनके या भूमि का स्पर्श करने से शुद्धि होती है [332]। परन्तु बात करते, हॅसते, देखते, सोते एव नमित होकर आचमन नही करना चाहिए । फेन इत्यादि से युक्त जल से आचमन नही करना चाहिए [333]।

शूद्र, अपवित्र व्यक्ति द्वारा दिये हुए एव खारे जल से आचमन नही करना चाहिए[334]। इस पुराण मे आचमन से वर्णो की शुद्धि के सम्बन्ध मे यह उल्लेख मिलता है। कि जल ब्राम्हण के हृदय तक पहुॅचने पर, क्षत्रिय के कष्ठ तक एव वैश्य के मुख मे पहुॅचने पर तथा स्त्री एव शूद्र जल के स्पर्श मात्र से शुद्ध होते है [335]।

ऐसा कहा गया है कि जल से तीन बार आचमन करने पर ब्रह्मा, विष्णु एव महेश अत्यन्त प्रसन्न होते है । द्विज को नित्य ब्रह्मतीर्थ से आचमन करना चाहिए अथवा प्राजापत्य तीर्थ या दैवतीर्थ से आचमन करना चाहिए किन्तु पितृतीर्थ आचमन वर्जित है [336]।

ब्राह्मण को मुडे हुए अगूॅठे के मूल से मुख का स्पर्श करने के उपरान्त तीन बार आचमन करना चाहिए[337]। तथा अगूॅठा और अनामिका से दोनो नेत्रो को स्पर्श करना तथा तर्जनी और अगूॅठे को मिलाकर नासिका के दोनो पुटो को स्पर्श करना चाहिए[338]। कनिष्ठा और अगूॅठे को मिलाकर कानो का स्पर्श करना तथा सभी अगुलियो को मिलाकर हथेली से हृदय का एव उसी प्रकार सिर को स्पर्श करना चाहिए[339]। नासापुटो का स्पर्श करने से दोनो नासत्य और दस्त्र प्रसन्न होते है। इसी प्रकार कानो का स्पर्श करने से वायु एव अग्नि प्रसन्न है[340]। हृदय का स्पर्श होने पर सभी देवता प्रसन्न होते है। मस्तक का स्पर्श होने पर अद्वितीय पुरूष प्रसन्न होते है[341]।

अगुलियों में तीर्थ

अगूॅठे की मूल रेखा मे ब्राम्हतीर्थ, अगूॅठे एव प्रदेशिनी के मध्य मे उत्तम पितृतीर्थ एव कनिष्ठा के मूल मे प्रजापत्य तीर्थ अगुलि के अग्रभाग देवतीर्थ (आर्षतीर्थ) देवतीर्थ के मध्य भाग को आग्नेय तीर्थ कहा गया है। आग्नेय तीर्थ को ही सौमिक तीर्थ कहा जाता है[342]।

भविष्य पुराण के अनुसार भी ब्राह्मण के हाथ मे पॉच तीर्थो का उल्लेख किया गया है। जिन्हे देवतीर्थ, पितृतीर्थ, ब्राह्मतीर्थ, प्रजापत्य तीर्थ तथा सौम्यतीर्थ कहा जाता है। वैखानस गृहय सूत्र मे भी सौम्यतीर्थ को आग्नेय तीर्थ कहा गया है। अॅगूठे के मूलभाग से जो रेखा प्रारम्भ होती है उसे ब्रह्मतीर्थ कहते है। कनिष्ठका के मूल मे प्राजापत्य तीर्थ एव अॅगुलियो के अग्रभाग मे देवतीर्थ विद्यमान है। तर्जनी एव अॅगूठे के मध्य भाग पितृतीर्थ के नाम से जाने जाते है। देवकार्य मे प्रस्तुत सौम्यतीर्थ हाथ के मध्य भाग मे स्थित है।

शिक्षा

कूर्मपुराण के अनुसार पौराणिक मान्यता मे गुरू के प्रकार

पुरूष गुरू

अध्यापक, पिता, ज्येष्ठ, भ्राता, महीपति, मामा, श्वसुर, रक्षक, मातामह, पितामत, अपने से श्रेष्ठ वर्ण का व्यक्ति एव चाचा ये पुरूष गुरू कहे गये है ।

स्त्री गुरू

माता, मातामही, गुरूपत्नी, पिता, एव माता की बहन, सास, पितामही, एव ज्येष्ठ दायी ये सभी स्त्रियॉ गुरू है [343]। इसी के साथ पाच विशेष गुरू श्रेणी का भी उल्लेख मिलता है। जन्म के कारण (पिता) जन्म देने वाली (माता) विद्या का ज्ञान कराने वाला (गुरू) ज्येष्ठ भ्राता एव भरण–पोषण करने वाला स्वामी ये पॉच प्रमुख गुरूजन कहे गये [344]।

गुरू का अभिवादन करने का विधान

गुरू के चरणो को स्पर्श व्यत्यस्तपाणि होकर अर्थात दोनो हाथो को एक दूसरे के ऊपर रखकर करना चाहिए। इस प्रकार बाये हाथ से बाये पैर और दाहिने हाथ से दाहिने पैर का स्पर्श करने का विधान है [345]।

शिक्षा और भक्ति

कूर्म पुराण मे आख्यात है कि शिक्षा के बदले गुरू को गुरूदक्षिणा देना चाहिए । उदाहरणार्थ– प्रहलाद के पुत्र विरोचन ने उपदेश के बदले भगवान् सनतकुमार को गुरूदक्षिणा मे दिया था [346]।

समावर्तन सस्कार

कूर्मपुराण के अुनसार चौदह विद्याओ का ज्ञान ही विज्ञान है उसके ज्ञान से ही धर्म की वृद्धि होती है[347]। विद्या अध्ययन के उपरान्त गुरू गृह से वापस आने पर धर्म सम्बन्धी अनुष्ठान ही विज्ञान है[348]।

वेदाध्ययन की समाप्ति पर समावर्तन सस्कार किया जाता है। तथा यह ब्रह्मचारी जीवन की समाप्ति का बोधक सस्कार है। समावर्तन का अर्थ है गुरू के गृह से अपने घर लौट आना। इस सस्कार को स्नान नाम भी दिया गया है। क्योकि इस सस्कार मे स्नान की क्रिया सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। अश्वलायन गृहय सूत्र[349], बौधायन गृहयसूत्र [350] गौतम धर्मसूत्र[351], याज्ञवल्क्य स्मृति[352], मनुस्मृति [353]।

भविष्यपुराण[354] के अनुसार धर्म की मर्यादा जानने वाले शिष्य को अध्ययन समाप्ति के पूर्व उपकार नही करना चाहिए, उसे दीक्षा स्नान के लिए गुरू की आज्ञा प्राप्त करने के अन्तर यथा शक्ति दक्षिणा देनी चाहिए। श्वेत स्वर्ण गौ, अश्व, छत्र, जूता, धान्य वस्त्र शाकादि गुरू के प्रशान्नार्थ लाना चाहिए [355]। समावर्तन करके स्नान किया हुआ व्यक्ति स्नातक कहलाता था समाज मे स्नातक अत्याधिक सम्मानित होता था [356]।

विवाह

कूर्म पुराण मे उल्लेख मिलता है कि ब्राम्हण को ऋृषि एव मात्र कुल को छोडकर विवाह करना चाहिए तथा पुत्र की उत्पत्ति करना चाहिए जिससे वश वृद्धि हो सके[357]।

विवाह और परिवार मानव जाति मे आत्मसरक्षण वश वृद्धि और जातीय जीवन के सातत्य को बनाये रखने का प्रधान साधन है[358]। मानव समाज की सत्ता और सरक्षण विवाह और परिवार पर अवलम्बित है अत विवाह को हमारे समाज की केन्द्रीय सस्था माना जाता है [359]। वेस्टरमार्क ने विवाह के लक्षण को निर्दिष्ट करते हुए कहा है कि यह अधिक पुरूषो का एक या अधिक स्त्रियो के साथ ऐसा सम्बन्ध है जो कानून द्वारा मान्य होता और इस सम्बन्ध को करने वाले दोनो पक्षो को तथा उनकी सन्तान को कुछ अधिकार और कर्तव्य प्रदान करता है[360]। जिलिन के मतानुसार विवाह सन्तान पैदा करने वाले परिवार को स्थापित करने की समाज द्वारा स्वीकृत पद्धति है[361]। मानव समाज की सत्ता और सरक्षण विवाह और परिवार पर अवलम्बित है। इस प्रकार को हमारे समाज की मुख्य सस्था के रूप मे माना जाता है[362]।

वेस्टरमार्क ने विवाह के लक्षण को निर्दिष्ट करते हुए कहा है कि "यह एक या एक से अधिक पुरूषो एक या अधिक स्त्रियो के साथ ऐसा सम्बन्ध है जो कानून द्वारा मान्य होता है[363]। और जो इस सम्बन्ध को करने वाले दोनो पक्षो को तथा उनकी सन्तान को कुछ अधिकार एव कतर्व्य प्रदान करता है"।

प्राचीन काल से ही इस सस्कार की आवश्यकता एव महत्ता का निरूपण होता चला आया है। ऋृग्वेद मे इसे अधिक महत्वपूर्ण बतलाते हुए कहा गया है कि गृहस्थ बनकर देवताओ के यज्ञ करना तथा सन्तति पैदा करना है[364]। शत्पथ ब्राह्मण के अनुसार कि पत्नी पति की अर्द्धनिगी कही गयी है। व्यक्ति तब तक अधूरा है जबतक वह पत्नी प्राप्त कर सन्तान उत्पन्न नही कर लेता है[365]। आपस्तम्ब धर्मसूत्र मे उल्लिखित है कि पत्नी पति को धार्मिक सस्कारो के योग्य बनाने वाले होती है। तथा पुत्र को उत्पन्न कर उसे पुत्र नामक कवच से उसकी रक्षा करती है[366]। महाभारत मे गृहणी का घर का पर्यायवाची कहा गया है[367]। मनुस्मृति मे विवाह के तीन मुख्य उद्‌देश्य बतलाये गये है। पहला धर्म—सम्पत्ति, धार्मिक कृत्य, सन्तान तथा कामजन्य इच्छा की सतुष्टि[368]। परन्तु आपस्त्ब धर्मसूत्र ने केवल धर्म का पालन एवे सतान की प्राप्ति इन दो प्रायोजन का ही उल्लेख किया है, और कहा है कि इनके पूरे हो जाने पर दूसरा विवाह नही करना चाहिए। केवल कामसुख की प्राप्ति के लिए विवाह जघन्य समझा जाता है[369]। याज्ञवल्क्य स्मृति के मतानुसार विवाह के

निम्नलिखित प्रयोजन है। पहला पुत्र–पौत्रादिक द्वारा वश विस्तार दूसरा अग्निहोत्रादि यज्ञो द्वारा स्वर्ग की प्राप्ति[370]। विज्ञानेश्वर ने धर्म तथा पुत्रो की प्राप्ति के दो प्रयोजन पर बल देते हुए इतिफल का लौकिक लाभ के रूप मे वर्णन किया है[371]।

विवाह-पौराणिक प्रवृत्ति

कूर्मपुराण मे कहा गया है कि ब्राम्हण को शील और शौच से युक्त भार्या ग्रहण करना चाहिए। जो मातृ कुल के गोत्र अथवा अपने गोत्र एव ऋृषि के गोत्र मे उत्पन्न न हुई हो[372]।

भविष्य पुराण के अनुसार पुरूष तब तक आधा है जब तक कि वह पत्नी का प्राप्त नही कर लेता[373]। अतएव अपने समान विद्या धन एव क्रियाओ से सम्पन्न कुल मे उत्पन्न होने वाली सुन्दर धर्म की साधन भूत प्रशसनीय कन्या का ग्रहण करना चाहिये[374]। पुराणकारो ने विवाह को पवित्रतम् सस्कार माना है। मार्कण्डेय पुराण मे त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) की प्राप्ति के लिए पत्नी पति की सहायक बताई गयी है, "भार्या मे त्रिवर्ग प्रतिष्ठित है। उसके द्वारा देवताओ पितरो तथा अतिथियो की पूजा नही की जा सकती[375]। सहधर्मचारिणी के बिना किसी भी धार्मिक, सामाजिक अथवा अभिषेक आदि क्रिया को अपूर्ण माना गया है। वायु तथा ब्राह्मण पुराणो मे उल्लिखित है कि स्त्री अबध्य होती है, क्योकि उसके बिना लोकवृद्धि सम्भव नही है। विष्णु पुराण[376], बाह्मण पुराण[377], मत्स्य पुराण[378]। विष्णु पुराण मे सन्तानोपत्ति की कामना से विवाह सस्कार अपेक्षित माना गया है [379]। मत्स्य पुराण मे गृहधर्मी के द्वारा ससार की वृद्धि विवृत्त है तथाा भार्यायुक्त ब्राम्हण ही दान का अधिकारी बताया गया है[380]। ब्रम्हपुराण मे कहा गया है कि देवता अमृत द्वारा अमर हुए एव ब्रह्माणादि मनुष्य पुत्र द्वारा। मार्कण्डेय पुराण मे आख्यात है कि रूचि ने बूढे होने पर भी पितरो के उद्धार के लिए मालिनी के साथ विवाह किया[381]। भविष्य पुराण के अनुसार स्त्री विहीन पुरूष को गृहस्थ आश्रम प्रविष्ट होने कोई अधिकार नहीं है[382]।

अन्तर्विवाह

अपस्तम्ब धर्मसूत्र[383], गौतम धर्मसूत्र[384] एव मनुस्मृति[385] ने इसके अन्तर्गत अपने ही वर्ण या जाति मे विवाह करना बताया है जो व्यक्ति वर्ण के बाहर विवाह करता है वह पाप

का भागी होता है। समाज शास्त्रीय दृष्ट अन्तर्विवाह के दो मुख्य उद्देश्य दिखायी देते है, प्रथम इसका लक्ष्य प्रजातीय रक्त सम्बन्धी शुद्धता को बनाये रखना है। द्वितीय अन्तर्विवाह विशिष्ट वर्ण के उन रीति– रिवाजो, परम्पराओ और पद्धितयो को सुरक्षित रखने मे सहायक होता है, जिनके कारण एक वर्ण दूसरे वर्ण से या एक जाति दूसरी जाति से पृथक दिखती है। अन्तर्विवाह को भी सवर्ण विवाह कहा जाता है। सवर्णापत्नी की सर्वत्र प्रशसा की गयी है।

सवर्ण तथा असवर्ण विवाह

कूर्मपुराण के अनुसार अपने समान वर्ण की दोष रहित स्त्री को विधि पूर्वक पत्नी के रूप मे ग्रहण करना ही सवर्ण विवाह के रूप मे कहा गया है। सवर्ण विवाह का कोई उल्लेख नही है[386]।

अपस्तम्ब धर्मसूत्र[387] भी वर्णनान्तर विवाह मे दोष समझता है। मनु अपने वर्ण की स्त्री विवाह को श्रेष्ठ कहते है[388]। भविष्य पुराण मे विवाह कर्म के तीन प्रकार बताए गए है – हीन, समान एव उच्च के साथ इनमे अपने बराबर वाले के यहॉ विवाह करने को समान और दोनो को नीच एव मध्यम कहा है, असमान वर्ण के यहॉ विवाह करने को साधु लोग निन्दित बताते है। उत्तम के यहॉ करने से अनादर होता है[389]। अपने से अधिक वाले के यहॉ सम्बन्ध करने से सर्वथा अपमान सहना पडता है। उसी प्रकार नीच स्थिति वाले के साथ उसे विवाह करने की इच्छा नही करनी चाहिए [390]। जिस प्रकार उत्तम के साथ विवाह वर्जनीय है उसी प्रकार नीच के साथ भी वर्जनीय है। अतएव बुद्धिमान पुरूष को उत्तम एव अधम वर्ण के साथ विवाह नही करना चाहिए[391]। मनु के मतानुसार शूद्र की स्त्री शूद्र ही होनी चाहिए। उत्तम द्विज चारो वर्णो की कन्याओ के साथ विवाह का कर सकता है[392]। इसकी सम्पुष्टि बौधायन धर्मसूत्र[393], शख मनु स्मृति[394] विष्णु धर्मसूत्र[395] से भी होती है। पारस्कर गृहयसूत्र[396] तथा वशिष्ठ धर्मसूत्र[397] मे लिखा है कि द्विजो को शूद्र नारी से विवाह करना चाहिए किन्तु बिना मन्त्रो के उच्चारण के।

उपर्युक्त शास्त्रकारो ने जो अपने निम्न वर्ण के साथ विवाह विधान प्रस्तुत किया है। वह मात्र अपने काल मे प्रचलित व्यवस्था की ओर सकेत करना ही है[398]। ब्रम्हपुराण के अनुसार क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कन्याओ से विवाह नही करना चाहिए[399]। बौधायन धर्मसूत्र मे

शूद्रा के साथ विवाह को पतित होना मानता है[400]। वशिष्ठ धर्मसूत्र के अनुसार शूद्रा के साथ विवाह करने से कुल का अपकर्ष होता है और मरने के बाद स्वर्ग नही मिलता[401]। मनु ने अनुलोम विवाह का विधान करके भी ब्राम्हण तथा क्षत्रिय के लिए शुद्रा का सर्वथा निषेध कर दिया[402]। विष्णु धर्मसूत्र[403] के अनुसार शूद्रा से विवाह करके व्यक्ति सन्तान सहित शूद्र हो जाता है। परास्कर गृह्यसूत्र[404] का कहना है कि शूद्रा से विवाह करने मे मन्त्रोपचारण नही करना चाहिए। शूद्रा से विवाह न करे क्योकि स्त्री मे स्वय पुरूष ही जन्म लेता है[405]।

सपिण्ड विवाह निषेध

कूर्मपुराण मे कहा गया है कि अपने गोत्र मे उत्पन्न कन्या से विवाह नही करना चाहिए [406]। इसी प्रकार हिन्दू समाज मे बहिर्विवाह का प्रतिबन्ध दो प्रकार का है, एक तो यह कि विवाह अपने गोत्र एव प्रवर से बाहर होना चाहिए दूसरा यह कि सपिण्डो मे विवाह नही होना चाहिए। सपिण्ड का अर्थ है कि एक ही पिण्ड अथवा देह वाला, दूसरे शब्दो मे रक्त सम्बन्धियो के लिए सपिण्ड शब्द का व्यवहार होता है। पिता से ऊपर के सात तथा माता से ऊपर के पॉच सपिण्ड कहलाते है। यह पीढियॉ निषिद्ध पीढियॉ कहलाती है। और प्रत्येक विवाह इन पीढियो से बाहर होना चाहिए। वैदिक साहित्य के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि उस समय असपिण्डता के नियम का पूर्णतया विकास नही हुआ था, वेदो मे पिण्ड शब्द का प्रयोग, शरीर के अर्थ मे न होकर प्राय अग्नि मे डाली जाने वाली हवि के रूप मे हुआ है। ॠृग्वेद[407] तैत्तिरीय सहिता[408]। मनु के अनुसार असपिण्ड एव असगोत्र कन्या से ही विवाह होना चाहिए [409]। गौतम धर्मसूत्र के समय से सपिण्ड शब्द का वर्तमान उपर्युक्त अर्थ मे प्रयोग होने लगा तथा स्पष्ट शब्दो मे सपिण्ड विवाहो की निन्दा की जाने लगी। गौतम माता की पॉच पीढी तथा पिता के सात पीढी के बाद विवाह की अनुमति देता है[410]।

विधवा

कूर्मपुराण[411] मे विधवा स्त्री की स्थित दुर्भाग्य पूर्ण दीखती है। यदि कोई व्यक्ति विधवा स्त्री से विवाह कर ले तो उसे श्राद्धादिक कार्यो मे नही बुलाया जाता था। विष्णु पुराण मे विधवा मारिषा के साथ मन्द भागिनी शब्द का प्रयोग किया गया है[412]। वामन पुराण मे

विधवा को पराश्रयी कहा गया है[413]। ब्रह्माण्ड पुराण मे रेणुकी की कथा के प्रसग मे वैधव्य दु ख का असह्य बताया गया है[414]।

स्त्रियो का धर्म

आलोचित पुराण के अनुसार स्त्रियो का एकमात्र धर्म पति सेवा है उसके अतिरिक्त कोई धर्म नही है। इस प्रकार पत्नी को सदा पति के सुख के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए क्योकि स्त्रियो के देवता उनके पति ही है [415]। मनुस्मृति के अनुसार पत्नियो की पतिभक्त एव नियमो का पालन आदि के विषय मे बहुत विस्तृत विवरण पाया जाता है । मनु का कथन है कि जो पत्नी विचार शब्द वाक्य एव कार्य से पति के प्रति सत्य रहती है, वह पति के साथ स्वर्गिक लोको को प्राप्त करती है और साध्वी कही जाती है। जो पति के प्रति असत्य रहती है वह निन्दा के पात्र होती है ऐसा कहा जाता है कि अगले जन्म मे सियारिन के रूप मे उत्पन्न होती है और भयकर रोगो से पीडित रहती है[416]। काणे धर्मशास्त्र के अनुसार वृहस्पति ने पतिव्रता की परिभाषा इस प्रकार दी है कि जो पति के आर्त होने पर आर्त होती है प्रसन्न होने पर प्रसन्न होती है, पति के विदेश गमन करने पर मलिनि वेश धारण करती है और दुर्बल हो जाती है एव पति के मरने पर मर जाती है।

भविष्य पुराण के अनुसार स्त्रियो के लिए धर्मार्थ काम त्रिवर्ग की सिद्ध के लिए दो कारण बताये गये है। प्रथमत उनका पति के अनुकूल व्यवहार द्वितीय उनके पवित्रशील सदाचार। पति की अनुकूलता उनके सास्वत कल्याण एक मात्र औषधि कही गयी है। इसलिए स्त्रियो को सभी उपायो द्वारा अपने मे वह योग्यता लानी चाहिए कि पति को बाहर से आता हुआ जानकर भूमि और आगन आदि खूब स्वच्छ सैय्या को सजाकर प्रतीक्षा करनी चाहिए। और आने पर उनकी आज्ञा का तत्परता पूर्वक पालन करना चाहिए[417]। पुराणो ने भी स्त्री धर्म के विषय मे विस्तार से लिखा है। कि भागवत पुराण[418] के अनुसार जो नारी पति को हरि के समान मानती है वह हरि लोक मे पति के साथ निवास करती है। स्कन्द पुराण[419] मे पतिव्रता स्त्री के विषय में उल्लिखित है कि 'पत्नी को पति का नाम नही लेना चाहिए' ऐसा करने से पति की आयु बढती है। उसे दूसरे पुरूषो का भी नाम नही लेना चाहिए, उसे सदैव हसमुख रहना चाहिए।

पतिव्रता स्त्री

कूर्म पुराण[420] मे उल्लिखित है कि जो स्त्री पतिव्रता एव पति सेवा परायण होती है उसे इस लोक एव परलोक मे कोई पाप नही लगता।

आलोचित पुराण मे धर्मरत पतिव्रता स्त्री को रूद्राणी कहा गया है कोई भी मनुष्य उसका पराभव नही कर सकता [421]। कूर्म पुराण मे पतिव्रता स्त्री की महत्ता को सदर्भित करते हुए दशरथ पुत्र भगवान राम की भार्या सीता का वृतान्त कई श्लोको मे प्राप्त होता है यह वर्णन अनेक दृष्टियो से महत्वपूर्ण है। वाल्मीकि रामायण, पद्म पुराण इत्यादि मे उल्लिखित कथानक से भिन्न कूर्म पुराण के इस प्रसग मे सीता के द्वारा बनाष्टक रूप मे जो स्तुतियॉ की गयी है। उससे अग्नि और शिव के एकात्मक स्वरूप पर प्रकाश पडता है। यह उल्लेखनीय है कि ऋग्वेद मे ही कतिपय ऐसे सन्दर्भ प्राप्त होते है जिनमे अग्नि के अनेक शिव पुत्र स्कन्द के साथ सयोजित कर दिया गया है। इसी प्रकार सीता के द्वारा अग्नि मे समाहित होने के समय त्रिशूल धारी माहेश्वर का प्रकटीकरण भी कूर्म पुराण के शैव स्वरूप का प्रमाण उपस्थित करता है।

शौच के भेद

वाह्य एव आभ्यन्तर भेद से शौच दो प्रकार का है । (1) मिट्टी एव जल द्वारा

(2) अभ्यान्तर शौच– मन की शुद्धि को अभ्यन्तर शौच कहते है[422]।

शौचा-शौच विवेक

कूर्म पुराण मे शौच सम्बन्धी स्थानो का विधान का उल्लेख किया गया है जो कि व्यक्ति की आवश्यक नित्य क्रिया है मे बतलाया गया है कि शौच का स्थान एव विधान ब्राम्हण को दाहिने कान पर यज्ञोपवीत चढाकर दिन मे उत्तर मुख करके एव रात्रि मे दक्षिण मुख होकर मलमूत्र का त्याग करना चाहिए [423]। भूमि को लकडी, पत्ता, तिनका से ढककर तथा शिर को आहत कर मलमूत्र का त्याग करना बतलाया गया है[424]। गोबर पर, जुती भूमि पर, बडे वृक्ष के नीचे, हरी घास और पर्वत की चोटी पर खडे या नग्न अवस्था मे मलमूत्र का त्याग करना चाहिए [425]।

शौच हेतु वर्जित स्थान

छाया, कूप नदी, गोशाला, चैत्य, जल, रास्ते, भस्म, अग्नि एव श्मशान मे मलमूत्र का त्याग नही करना चाहिए[426]। जीर्ण मन्दिर, दीमक की बिल, जीवयुक्त गड्ढा एव चलते हुए मल मूत्र का त्याग नही करना चाहिए [427]। भूॅसी, राजमार्ग, शुद्ध क्षेत्र, तीर्थ, चौराहा, उद्यान, जन के समीप, ऊसर भूमि एव अत्यन्त अपवित्र स्थान पर मल मूत्र का त्याग वर्जित है। जूता पहने हुए एव स्त्री, गुरू, ब्राह्मण मॉ के सामने मल मूत्र का त्याग नही करना चाहिए। नक्षत्रो को देखते हुए, सन्ध्याभिमुख होने पर सूर्य, अग्नि, चन्द्रमा की ओर मुँह करके मल मूत्र का त्याग नही करना चाहिए [428]।

शौच

मिट्टी लगाकर शुद्ध जल द्वारा शौच करना चाहिए। लेकिन ब्राह्मण को धूल, एव कीचड युक्त स्थान, मार्ग ऊसर भूमि एव दूसरे के शौच शेष मिट्टी मन्दिर कूप ग्राम, एव जल के भीतर से मिट्टी नही लेनी चाहिए [429]।

अशौच की अविध

कूर्म पुराण मे ब्रह्मा का सन्दर्भ देते हुए कहा गया है किसी व्यक्ति की मृत्यु के पश्चात् कई दिनो का अशौच रहता है। अशौच काल मे विहित नित्य, कर्म, स्वाध्याय तथा मागलिक कार्य वर्जित है। विभिन्न वर्णो के अनुसार अशौच की अवधि भी अलग–अलग होती है[430]। इस अवधि मे यज्ञशाला की अग्नि सम्बन्धी कार्य हेतु पवित्र ब्राह्मणो को नियुक्त करना शुष्कान्न अथवा फल द्वारा हवन करना चाहिए [431]।

ब्राह्मण के लिए 10 दिन, क्षत्रिय के लिए 12 दिन, वैश्य के लिए 15 दिन, तथा शूद्रो के लिए 30 दिन तक अशौच रहता है[432]। परन्तु साधारण छ रात्रि, तीन रात्रि, एक रात्रि का अशौच होता है[433]। ऐसा उल्लेख पद्म पुराण के सृष्टि खण्ड मे मिलता है [434]। पदम पुराण के अनुसार पिता की मृत्यु के पश्चात् एक वर्ष तक अशौच रहता है, माता के लिए छ मास, स्त्री के लिए तीन मास तथा भाई और पुत्र के लिए डेढ मास तक अशौच माना जाता है। कूर्म पुराण के अनुसार वेदाध्यायी यज्ञकर्ता एव वेदज्ञ पिता तथा अन्य लोग स्नान करने से

स्पर्श करने योग्य हो जाते है। परन्तु माता दस दिनो के बाद स्पर्श योग्य होती है[435]। क्रियाहीन, मूर्ख, महारोगी एव यथेष्टाचारी व्यक्तियो का अशौच मरणोपर्यन्त कहा गया है[436]।

बालक की मृत्यु पर अशौच उत्पन्न होते ही बालक की मृत्यु पर माता–पिता को अशौच होता है, परन्तु पिता स्पर्श योग्य रहता है [437]।

दो वर्ष से कम अवस्था के बालक की मृत्यु पर माता–पिता को तीन रात्रि का अशौच होता है। सस्कार से पूर्व व्यक्ति की मृत्यु पर ब्राम्हणो का अशौच भी तीन रात्रि का ही होता है। परन्तु शिशु की मृत्यु पर माता–पिता को एक दिन अशौच होता है। यदि माता–पिता निर्गुण हो तो शिशु की मृत्यु पर तीन रात्रि का ही अशौच होता है[438]।

सस्कार के बाद मृत्यु

चूडा सस्कार· के पूर्व एक रात्रि का अशौच होता है एव उपनयन सस्कार के पूर्व तक सपिण्ड के मरने पर तीन रात्रि का अशौच होता है[439]। उपनयन सस्कार के बाद मृत्यु होने पर दस रात्रि का अशौच होता है [440]। विवाह सस्कार के बाद स्त्री की मृत्यु पर पति एव पति कुल के लोगो को ही अशौच होता है[441]।

सद्यःशौच दॉत उत्पन्न होने के पूर्व मृत्यु पर सपिण्डो एव सहोदर भाई की (जन्म से) दस दिन के भीतर मृत्यु पर[442]। दो वर्ष से कम आयु की कन्या की मृत्यु पर दन्तोत्य के पूर्व कन्या की मृत्यु पर भाई सद्य शौच होता है[443]। क्षत्रिय या ब्राह्मण के साथ बिना शस्त्र की लडाई मे मरने वालो तथा विद्युत एव सर्पादि के कारण मृत्यु पर सद्य शौच होता है[444]। यज्ञारम्भ, विवाहारम्भ, देवपूजन का आरम्भ हो जाने पर तथा दुर्भिक्ष एव उपद्रव की स्थिति मे भी सद्य शौच होता है[445]।

बढई, शिल्पी, वैद्य, दासी, दास, दाता, व्रतधारी ब्राह्मण, ब्रह्मचारी, यज्ञकर्ता एव व्रतानुष्ठान कर्ता को सद्य शौच होता है[446]। अपने गृह मे अपने गोत्र के व्यक्ति की मृत्यु पर सद्य शौच होता है[447]। अग्नि मे गिरकर अथवा मरूभूमि मे मरने पर दुर्गम मार्ग मे गमन एव आकस्मिक मृत्य होने पर ब्राह्मण के निमित्त मृत्यु होने पर तथा सन्यासी होने के उपरान्त मृत्यु होने सद्य शौच का विधान है[448]।

विद्धानो के अनुसार नैष्ठिक अर्थात जीवन भर ब्रह्मचर्य का व्रत धारण करने वाले, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ धर्मावलम्बी, यति एव ब्रह्मचारी की मृत्यु पर तथा पतितावस्था मे मृत्यु होने पर अशौच नही होता है[449]। पतित मनुष्यो का दाह, अन्तेष्ठि अस्थि सचय, अश्रुपात, पिण्ड दान, एव श्राद्धद्विक कार्य कभी नही करना चाहिए [450]। यदि किसी प्रमाद वश कोई व्यक्ति अग्नि एव विषाद द्वारा मर जाये तो उसके निमित्त अशौच एव जल दानादि की क्रिया नही करनी चाहिए[451]। छ माह से पूर्व स्त्रियो का गर्भस्राव होने पर जितने महीने का (गर्भ होता) उसी के तुल्य दिनो तक अशौच कहा गया है। तदुपरान्त गर्भस्राव होने पर स्त्रियो के लिए बारह रात्रियो का तथा सपिण्डो को सद्य शौच का विधान है[452]। गर्भस्राव तथा अत्यन्त निगुर्ण सपिण्ड की मृत्यु मे एक अहोरात्र का एव यथेष्टचारी ज्ञाति बान्धव के (गर्भस्राव मे) तीन रात्रि का शौच होता है[453]।

अशौची व्यक्ति के गृह से ग्राह्य वस्तु

अशौची व्यक्ति के गृह से नित्य फल, पुष्प, शाक, लवण, काष्ठ तक्र, दधि, घृत, तैल, औषधि, दुग्ध, शुष्कान, ग्रहण किया जा सकता है[454]।

पुत्र जन्म पर दान

पुत्र का जन्म होने पर उस दिन हिरण्य, धान्य, गाय, वस्त्र, तिल, अन्न, गुड एव धृत इन वस्तुओ का इच्छापूर्वक दान करना चाहिए[455]।

एक रात्रि का अशौच

योनि सम्बन्ध वाले अर्थात भाञ्जा इत्यादि सम्बन्ध वाले व्यक्तियो एव बान्धवो की मृत्यु पर एक रात्रि का शौच होता है। गुरू एव एक ही गुरू के शिष्य की मृत्यु पर एक रात्रि का शौच होता है[456]। मनुष्य जिस राजा के राज्य मे रहता है उस राजा की मृत्यु पर सूर्योदय से सूर्यास्त तक अशौच होता है [457]।

तीन रात्रि का अशौच का विधान

सस्कार से पूर्व मृत्यु पर तीन रात्रि का अशौच होता है। देशान्तर मे रहते हुए यदि एक वर्ष के भीतर सपिण्डो को मृत्यु की सूचना प्राप्त हो तो उन्हे तीन रात्रि का अशौच होता

है, यदि एक वर्ष के बाद मृत्यु की सूचना मिले तो स्नान से शुद्धि होता है[458]। असस्कृत अविवाहित स्त्रियो की मृत्यु पर सपिण्डो को तीन रात्रि का शौच होता है[459]। कन्यादान के समय तक स्त्री की मृत्यु होने पर तीन रात्रि का शौच होता है। मातामह के मरने पर अपनी लडकी के पुत्र (दैहित्र को) तीन रात्रि का शौच होता है। विवाहित कन्या की मृत्यु यदि अपने पिता के घर होती है तो पिता को तीन रात्रि का अशौच होता। पूर्व मे अन्य की भार्या रहने वाली स्त्री, उसके पुत्र तथा दत्तक पुत्र की मृत्यु पर तथा पुरूषगामिनी अपनी भार्या की मृत्यु पर तीन रात्रि का अशौच होता है[460]। अपने घर मे रहने वाले सपिण्ड व्यक्ति के मृत्यु पर तीन रात्रि का अशौच होता है। सास, ससुर की मृत्यु पर भी तीन रात्रि का अशौच होता है। मृत व्यक्ति का अन्न खाने वालो की शुद्धि तीन रात्रि मे होती है। अन्न न खाने वाले की उसी दिन शुद्धि होती है। किन्तु मृतक के गृह मे रहना वर्जित है[461]।

देशान्तर शौच विधान

यदि व्यक्ति कही बाहर रहे तो जननाशौच या मरणशौच सम्बन्धी समाचार के उपरान्त उतने समय तक सयम करना चाहिए जब तक शेष दिन व्यतीत न हो जाय[462]।

शूद्र सपिण्ड की जन्म मृत्यु पर वैश्य, क्षत्रिय, ब्राह्मण को क्रमश छ रात्रि, तीन रात्रि, एव एक रात्रि का अशौच होता है[463]।

वैश्य सपिण्ड की जन्म मृत्यु पर शूद्र, क्षत्रिय एव ब्राह्मण को क्रमश 15 दिन छ रात्रि, तीन रात्रि का अशौच होता है[464]।

क्षत्रिय सपिण्ड के जन्म मृत्यु पर क्रमश ब्राह्मण को छ दिन, एव वैश्य और शूद्र को दस दिन का अशौच होता है[465]।

ब्राम्हण सपिण्ड की मृत्यु पर शूद्र, वैश्य एव क्षत्रिय की शुद्धि दस रात्रि मे होती है। असपिण्ड द्विज के मृत्यु होने पर बन्धुवत उसके प्रेत कर्म मे सम्मिलित होकर भोजन एव निवास करने वाला ब्राम्हण दस रात्रि मे शुद्ध होता है[466]।

शव वहन करने वाले व्यक्ति की शुद्धि

समानोदक एव माता के श्रेष्ठ वान्धवों के मरण मे शववहन करने वाला सपिण्ड व्यक्ति दस दिनो मे शुद्ध होता है। यदि कोई व्यक्ति लालच वश शव को ढोता है तो ब्राम्हण दस दिन, क्षत्रिय बारह दिन, वैश्य पन्द्रह दिन एव शूद्र एक माह मे शुद्ध होता है। अथवा सभी वर्णो के व्यक्ति छ रात्रि या तीन रात्रि मे शुद्ध होते है[467]। धन रहित अनाथ ब्राम्हण के शव वहन कर्म करने वाले ब्राम्हणादि स्नानोपरान्त घृत पीने से शुद्ध हो जाते है[468]। यदि स्वेच्छा से ब्राम्हण मृतक द्विज का शव वहन करता है तो वस्त्र सहित स्नान के उपरान्त अग्नि के स्पर्श एव घृत पीने से शुद्ध होता जाता है[469]। द्विज के शव का अनुगमन करने पर क्षत्रिय की शुद्धि एक दिन मे, वैश्य की दो दिन मे तथा शूद्र की तीन दिन मे होती है। किन्तु इसके अतिरिक्त सभी की शुद्धि सौ बार प्राणायाम करने से होती है [470]।

अस्थि संचय काल मे शौच का विधान

यदि ब्राम्हण शूद्र का अस्थि सचय होने के पूर्व उसके घर जाकर विलाप करता है तो उसे तीन रात्रि का अशौच होता है। अत्यन्त विलाप करने पर एक रात्रि का अशौच होता है[471]। ब्राह्मण के अस्थि सचय के पूर्व विलाप करने से क्षत्रिय एव वैश्य को स्नान से शुद्धि होती है[472]।

प्रायश्चित

कृषि कार्य सबन्धी प्रायश्चित– कूर्म पुराण के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, एव वैश्य, शूद्र आदि सभी वर्णो के लिए कार्यो का विभाजन किया गया था परन्तु निर्धारित कार्य से जीवन यापन न हो पाने की दशा मे उसके अतिरिक्त कार्यो को कर जीवन यापन करने की व्यवस्था हुई थी। लेकिन विहित कार्यो के अतिरिक्त कार्य करने पर प्रायश्चित करना पडता था। ब्राह्मणो के सम्बन्ध ऐसा प्रतीत होता है कि विहित कर्मो से जीवन यापन न हो पाने की दशा मे कृषि कार्य को करने लगे होगे अनेक परवर्ती शास्त्रकारो ने कृषि को सभी वर्णो के लिए उचित मान लिया था। वर्तमान मे ब्राह्मण स्वय हल भी चला रहे है जबकि यह इनके लिए पूर्णतया वर्जित था[473] मनु ने कहा है कि कालातर मे आपत्ति काल मे विहित कृषि कार्य, कलियुग मे ब्राह्मणो की सामान्य वृत्ति बन गयी थी[474]। क्योकि इससे जीवो की हिसा होती थी। कृषि स्वरूप वैश्यावृत्ति के अवलम्बन से प्राप्त आय मे से पितृगण देवता एव ब्राह्मणो की पूजा का उल्लेख मिलता है[475] तथा कृषि से प्राप्त लाभ का बीसवा भाग अर्थात 5 प्रतिशत एव ब्राह्मणो को तीसवॉ भाग देने पर कृषि कर्म करने वाला दोष का भागी नही होता[476]। वाणिज्य करने पर कृषिजन्य लाभ का दूना एव सूदी व्यवहारी करने पर कृषिजन्य का लाभ तीन गुना क्रमश 15 प्रतिशत 10 प्रतिशत दान करना चाहिए। ऐसा करने पर निसन्देह दोष नही लगता[477]। महाभारत[501] मे वैश्यसम ब्राह्मण का उल्लेख मिलता है[478]। बौधायन ने उल्लेखन किया है कि ब्राह्मणो को प्रातकाल के भोजन के पूर्व कृषि कार्य करना चाहिए[479]। पराशर स्मृति मे यह उल्लेख मिलता है कि कृषि कार्य करने वाला ब्राह्मण, राजा को षठाश देकर, देवताओ का इक्कीसवा भाग देकर तथा ब्राह्मणो को तीसवॉ भाग देकर कृषि कार्य के पाप से मुक्त हो जाता है। लक्ष्मीधर ने यह भी उल्लेख किया है कि सकट काल मे ब्राह्मण कृषि कार्य करने से पाप मुक्त नही होता परन्तु इसके लिए राजा छठे भाग, देवो के बारहवॉ भाग तथा ब्राह्मणो के लिए तीसवॉ भाग प्रदान कर देना चाहिए। सामान्य रूप से ब्राह्मणो के

लिए कृषि पर भूमिगत कीटाणुओ की हत्या होती है[480]। ब्राह्मणो की भॉति क्षत्रिय भी सकट काल मे वैश्य धर्म कृषि पशुपालन वाणिज्य, व्यापार स्वीकार कर जीविका स्वीकार करने पर क्षत्रिय की हीनता भी द्योतित होती थी[481]। महाभारत मे यह उल्लेख मिलता है कि क्षत्रिय को वैश्य या शूद्र का कार्य नही करना चाहिए। बौधायन तथा मनु ने ऋण दान को क्षत्रियो के लिए वर्जित किया है[482]। मनु ने क्षत्रियो के लिए कृषि कार्य निषिद्व किया है परन्तु पराशर के अनुसार क्षत्रिय कृषि कार्य करते हुए ब्राह्मणो और देवो की पूजा करके पाप मुक्त हो सकता है। क्षत्रिय के लिए यज्ञ कराना वेद पढना किसी प्रकार विहित नही था। ऐसा करने पर उसे प्रायश्चित करना पडता था[483]। वैश्यो के लिए भी यह आवश्यक था कि सकट काल समाप्त होते ही वह अपने धर्म मे वापस लौट आये। शूद्र वृत्ति अपनाते समय उनके लिए यह विहित था कि पैर धोना या अन्य सेवा कार्य तो कर सकता है परन्तु उच्छिष्ट भोजन उसके लिए वर्जित था[484]। मेधा तिथि वर्णो के आषद्वर्म मे यह नियम था कि सकट काल समाप्त होते ही वे आपद्वर्म छोडकर स्वधर्म का पालन प्रारम्भ कर दे। आपद्वर्म की वर्णो सामान्य धर्म को कभी नही स्वीकार किया गया। आपद्वर्म अपनाने के लिए उन्हे प्रायश्चित करना पडता था। ब्राह्मणो को विहित कर्मो के न करने पर दोष होता है प्रायश्चित से दोष दूर होता है। ब्राह्मणो को कभी भी बिना प्रायश्चित किये नही रहना चाहिए। विद्वान जो कहे उसे करना चाहिए[485]। वेदार्थ पारगामी धर्मा मित्राकी तीन ब्राह्मणो का कथन ही श्रेष्ठ धर्म होता है– अनेक धर्मशास्त्रो के ज्ञाता तर्कशास्त्र मे कुशल एव वेदाध्ययनशील 7 ब्राह्मणो का कथन धर्म ने प्रमाण माना जाता है[486]। कूर्मपुराण मे ब्रह्मघाती, मधप, चोर एव गुरू पत्नी गामी ये सभी एव इनके साथ रहने वाले लोग माहपापी होते है[487]।

कूर्म पुराण के अनुसार ब्रह्मघाती को आत्म शुद्धि हेतु कुती ब्रह्महत्या पर सावधि प्रायश्चित बनाकर वर्षो तक वन मे निवास करना चाहिए एव मृतक की खोपडी को लेकर डन्डे मे टॉगे हुए उसे भिक्षा मॉगनी चाहिए[488], तथा उस ब्राह्मण का स्मरण करते हुए ब्राह्मणो के निवास एव सभी देव स्थानो को छोड देना चाहिए[489]। पहले से न सोचे हुए, योग्य, धूमरहित, शान्त, अग्निशून्य एव लोगो के भोजन कर लेने के उपरान्त नित्य सात घरो मे भिक्षा मॉगनी चाहिए अथवा फल मूल द्वारा निर्वाह करना चाहिए[490]। ब्रह्मचर्य पूर्वक रहते हुए

12 वर्ष के बाद ब्रह्महत्या गौहत्या करने वालो स्वय अनशन, कर अथवा उच्च स्थान गिर कर जल मे प्रवेश कर अथवा, प्रज्वलित अग्नि मे जलकर मर जाय। आपस्तम्ब[491], वशिष्ठ[492], गौतम[493], मनु[494], तथा याज्ञवल्क्य ने जान बूझकर ब्रह्महत्या करने वालो के लिए यह व्यवस्था दी है कि हत्या करने वाला व्यक्ति कुल्हाडी से अपने बाल, चर्म, रक्त, मास, वसा अस्थि, तथा मज्जा को काट–काट कर अग्नि मे आहुति दे और अन्त मे स्वय अग्नि मे जलकर मर जाय। कूर्मपुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि लम्बे समय से बीमार व्यक्ति को रोग मुक्त तथा दुर्भिक्ष के समय अन्न का दान करने से ब्रह्महत्या दूर हो जाती है[495]। यदि ब्रह्म हत्यारा क्षत्रिय है तो यह स्वय मृत्यु–वरण की इच्छा से युद्व करने चला जाय, ऐसी स्थिति मे उसके साथ युद्व करने वाले लोग उसे ब्राह्मण घातक समझ कर मार डालते थे। यदि क्षत्रिय हत्यारा ऐसी स्थिति मे मर जाय या घायल होकर बच जाता था, तो भी महापातक से मुक्त हो जाता था। आपस्तम्बधर्म सूत्र[496], मनु[497], याज्ञवल्क्य[498] एव गौतम[499] मिताक्षरा के अनुसार हत्यारे के लिए 12 वर्षो का प्रायश्चित विधान था। अनुग्राहक को नौ वर्ष प्रायोजक को छ वर्ष तथा अनुमन्ता को साढे चार वर्ष और निमित्ति को तीन वर्ष के प्रायश्चित का विधान था। ब्रह्महत्या के लिए यह प्रायश्चित का विधान केवल एक बार ही की गयी ब्रह्महत्या के लिए था। यदि दो बार हत्या की जाय तो प्रायश्चित की अवधि 24 वर्ष, तीन बार करने पर छत्तीस वर्ष तथा चार बार हत्या पर मृत्युदण्ड की व्यवस्था थी। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रायश्चित अवधि का यह निर्धारण कालान्तर मे कुछ शिथिल हो गया था[500] पर मिताक्षरा मनु के अनुसार इस प्रकार ब्राह्मणो एव गायो की सेवा करते हुए बह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए मनुष्य द्वारा निर्धारित अवधि तक प्रायश्चित करे तो ब्रह्महत्या के महापातक से छुटकारा पाया जा सकता है[501]।

तीर्थ एवं दान

ब्रह्महत्या के पाप से बचने के लिए पुराणो एव धर्मशास्त्रो ने तीर्थ एव दान को भी प्रायश्चित विधान के रूप मे विहित किया है[502] तथा ब्रह्मचर्य पूर्व ब्राह्मण रामेश्वर तीर्थ की यात्रा कर समुद्र मे स्नान करने के उपरान्त शकर का दर्शन कर पाप मुक्त हो जाता है। महादेव के कपाल मोचन नामक तीर्थ मे जाकर स्नानोपरान्त पितरो की पूजा करने से

ब्रह्महत्या दूर हो जाती है[503]। मनु एव याज्ञवल्क्य [504] के अनुसार ब्रह्महत्यारा नीवार या जगली धान्य, दूध अथवा घी के सहारे जीवन–यापन करता हुआ सरस्वती नदी की शाखाओ की यात्रा के रूप मे प्रायश्चित कर सकता था। कुल्लूक ने कहा कि ऐसा प्रायश्चित या व्रत उस व्यक्ति के लिए है जिसने किसी साधारण ऐसे ब्राह्मण की हत्या की हो जो वेदज्ञ नही है। पराशर[505] ने यह उल्लेख किया है कि ब्रह्म हत्यारे को प्रायश्चित के रूप मे समुद्र एव रामसेतु की यात्रा करनी चाहिए तथा यात्रा के समय उसे जोर–जोर आवाज करते हुए भिक्षा मॉगनी चाहिए। अश्वमेघ यज्ञ की समाप्ति के उपरान्त होने वाले अवभुक्त स्नान मे शामिल होकर अथवा वेदज्ञ ब्राह्मण को अपना सर्वस्व दान करके ब्रह्महत्या से शुद्ध हो जाता है[506]। मिताक्षरा ने कहा है यदि ब्राह्मण की हत्या करने वाला सन्तान हीन हो तो वह सम्पूर्ण सम्पत्ति दान दे सकता है परन्तु यदि हत्यारे के सन्तान होती थी तो वह केवल एक सुसज्जित घर देकर ही ब्रह्महत्या से छुटकारा पा सकता था।

सुरापान

कर्म पुराण मे सुरापान करने वाले को महापापी कहा गया है[507]। सुरापान निस्सदेह हिन्दू समाज मे निन्दनीय पाप माना जाता था। यही कारण है कि इसे महापातको की श्रेणी मे रखा गया है जिसके लिए कठोर प्रायश्चित का विधान किया गया था। सुरा से तात्पर्य गुड या सीरे से बने, जौ के आटे से बने या मधुक या महुडना से बने पेय से है। कूर्मपुराण मे यह उल्लेख व मिलता है कि ब्रह्मा के यज्ञ मे सुत्या अर्थात सोमरस प्रस्तुत करने के दिन (पुराण सहिता कहने के लिए अपने अश से उत्पन्न (साक्षात) पुरूषोत्तम हरि है[508]। जिस सोमरस को देवो को ऋषिगण अर्पित करते थे तथा निरन्तर पान करते थे। कालान्तर मे सुरा के अन्तर्गत विविध प्रकार के मेघो को भी शामिल कर लिया गया है जो खजूर, पनसफल, नारियल, ईख, आदि से बनती थी। मनु[509] शतपथ[510] वैदिक सोमरस सुरा स्पष्टत पृथक का शतपथ ब्राह्यण मे सोम और सुरा मे अन्तर स्पष्ट करते हुए सोम को सत्य एव सुख तथा सुरा को असत्य एव दु.ख का कारण कहा है)।

विष्णु स्मृति मे सुरापान के सन्दर्भ मे प्रायश्चितो का निर्धारण करते समय ब्राह्मण क्षत्रिय एव वैश्यो का उल्लेख किया गया है। शूद्रो के लिए प्रायश्चित की कोई व्यवस्था नही

दी गयी है। इससे स्पष्ट होता है कि शूद्रो के द्वारा सुरापान पातक नही माना जाता था[511]। कृत्य कल्पतरू के लेखक लक्ष्मीधर ने यह उल्लेख किया है कि उपनयन सस्कार के पहले लडको को भोजन, बातचीत तथा व्यवहार मे पूरी छूट थी और यदि अविवाहित लडकियॉ सुरापान कर लेती थी तो उन्हे पाप नही लगता था[512]। गौतम[513], आपस्तम्ब[514], बौधायन[515], तथा मनु[516] एव याज्ञवल्क्य[517] मे सुरापान से सम्बन्धित प्रायश्चित का उल्लेख करते हुए यह कहा है कि यदि कोई ब्राह्मण अन्न से बनी सुरा को जान बूझकर पीता है तो उसका प्रायश्चित केवल मृत्यु ही है। सुरापान करने वाले व्यक्ति को उबलती हुई सुरा या खौलते हुए गौमूत्र मे तथा खूब गरम दूध जल या गीले गोबर का पान करना पडता था। और जब वह इस प्रकार जलते हुए मर जाता था तो वह पाप से मुक्त हो जाता था। हरदत्त के अनुसार यह प्रायश्चित केवल जानबूझ कर सुरापान करने वाले के लिए था। गौतम धर्मसूत्र[518], आपस्तम्ब[519], बौधायन धर्मसूत्र[520], मनुस्मृति[521]। पराशर ने मराणान्तक प्रायश्चित का उल्लेख किया है। सुरापान का पातकी व्यक्ति किसी नदी जो समुद्र से मिलती है, के तट पर चान्द्रायण व्रत करके ब्राह्मणो को भोजन कराने तथा एक गाय एव बैल का दान करने से पापमुक्त हो जाता था[522]। वशिष्ठ ने कहा है कि कृच्छ और अतिकृच्छ पुन उपनयन सस्कार करने पर ही शुद्वि मिल सकती थी[523]।

चोर

कूर्मपुराण मे चोर एव चोर व्यक्ति के साथ रहने वाले को भी महापापी कहा गया है[524], परन्तु अन्य स्मृति, एव धर्मशास्त्रो मे सामान्य चोरी से पृथक मान कर सोने की चोरी को महापातक माना गया था। ब्रह्महत्या, एव सुरापान के अतिरिक्त चोरी करना या स्तेय एक गम्भीर अपराध था और उसके लिए प्रायश्चित के साथ–साथ दण्ड व्यवस्था का भी विधान विहित था और उसके लिए गुरूतर प्रायश्चित की व्यवस्था की गयी थी। प्रायश्चितो के निर्धारण मे सोने के वनज और मूल्य को भी ध्यान मे रखा गया था। विश्वरूप एव भवदेव तथा शूलपाणि ने कहा है कि चोरी गया हुआ सोना यदि सोलह माशा से कम होता था तो उसे महापातक की अपेक्षा साधारण पातक की कोटि मे रखना चाहिए। यह स्थिति केवल ब्राह्मणो के लिए थी। यह उल्लेखनीय है कि केवल ब्राह्मण के सोने की चोरी को ही

महापातक माना गया था। अन्य वर्णो के सदस्यो के सोने की चोरी महापातक नही था चाहे सोने की चोरी की मात्रा कितनी **ही क्यो न हो**

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के सोने की चोरी साधारण पातक के रूप मे ही थी और उसी अनुपात मे उनका प्रायश्चित भी हल्का था। शूलपाणि और भवदेव के अनुसार ब्राह्मण के अतिरिक्त किसी अन्य वर्ण के यहॉ सोना चाहे जितनी मात्रा मे चोरी गया हो, प्रायश्चित साधारण पातक का ही था[525]। महाभारत[526] तथा तैत्तिरीय आरण्यक[527] तैत्तिरीय सहिता[528] आदि मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि वर्ण व्यवस्था मे ब्राह्मण सर्वोच्च शिखर पर मान्य था। धार्मिक कृत्यो या अनुष्ठानो के सम्पादन के लिए समाज को शिक्षित करने मे ब्राह्मण विशेष रूप से उत्तरदायी एव सक्रिय था। उसकी आय का प्रमुख साधन शासक वर्ग या धनी व्यक्तियो और साधारण लोगो द्वारा दी गयी दान–दक्षिणा थी। ऐतरेय ब्राह्मण[529] शतपथ ब्राह्मण[530] वशिष्ठ धर्म सूत्र[531]। इस प्रकार उनका धन अत्यन्त पवित्र था और स्रोत भी पवित्रत माना गया। ऐसी स्थिति मे दान दक्षिणा से अर्जित पवित्र धन की चोरी नि सदेह गम्भीर पातक या अपराध था। गौतम धर्मसूत्र[532] वशिष्ठ धर्म शास्त्र[533]।

गुरूपत्नी गामी

कूर्मपुराण[534] मे गुरूपत्नी गामी अर्थात गुर्वड नागमन व्यक्ति को या इस कार्य मे सहयोग करने वाले को महापापी कहा गया है। इसकी सम्पुष्टि अन्य धर्मसूत्रो से भी होती है। प्राचीन धर्म शास्त्रकारो ने गुरू शब्द को विविध अर्थो मे परिभाषित किया है। गौतम धर्म सूत्र के अनुसार प्राचीन समय मे गुरू के रूप मे वेदाध्ययन करने वाले आचार्य तथा पिता दोनो को स्वीकार किया गया था और उनकी पत्नी के साथ व्यभिचार महापातक था[535]। विष्णुधर्मसूत्र मे पिता माता और आचार्य तीनो को 'गुरू' माना गया है[536]। कूर्मपुराण मे पुरूष एव स्त्री गुरूओ की एक लम्बी श्रृखला का उल्लेख मिलता है जैसे अध्यापक, पिता, ज्येष्ठ भ्राता, महीपति मामा, श्वसुर, रक्षक चाचा, माता मातामही, गुरूपत्नी, पिता एव माता की बहन, सास, पितामही एव ज्येष्ठ दायी ये सभी गुरू कहे गये है [537]। लेकिन विशेष गुरू के रूप पिता, माता एव विद्या का उपदेश देने वाला गुरू, तथा ज्येष्ठ भ्राता एव भरण–पोषण करने वाले ये गुरू कहे गये है। परन्तु याज्ञवल्क्य ने 'गुरू' का अर्थ 'पिता' से लिया है तथा अन्यत्र

कूर्म पुराण के अतिरिक्त अन्य को भी गुरू श्रेणी मे रखते हुए मित्र की पत्नी, कुमारी लडकी पुत्र की स्त्री, भाई की पत्नी, आचार्य की पुत्री एव स्त्री के साथ व्याभिचार माता के साथ किये गये व्यभिचार की भॉति महापातक माना है[538]। प्रायश्चित मयूख मे पिता तथा वेद पढाने वाले आचार्य दोनो को गुरू के अर्थ मे दोनो ही परम्पराये प्राप्त होती है गुरूपत्नी गामी परिवार तथा समाज मे अनैतिकता एव उच्छृखलता का वातावरण उत्पन्न कर सकता था। इसके कारण परिवार की रक्त शुद्धि नही रह सकती थी तथा सपिण्ड एव सगोत्र विवाह निषेध के नियम बाधित होते इसलिए धर्मशास्त्रकारो ने इसे महापातक स्वीकार करते हुए इसके लिए प्रायश्चित की व्यवस्था की थी। जानबूझकर किये गये व्यभिचार या गुर्वड नागमन के लिए मरणान्तक प्रायश्चित का विधान किया गया था[539]।

क्षत्रिय हत्या

जान बूझकर क्षत्रिय की हत्या करने पर ब्राह्मण को 8 वर्ष तक ब्रह्महत्या सम्बन्धी व्रत करने का विधान है यदि अनजाने मे क्षत्रिय की हत्या हो जाय तो उसे छ मास पर्यन्त पॉच सौ गायो का दान करना चाहिए[540]।

व्रत

वन मे रहते हुए एक वर्ष तक एकाग्रता पूर्वक प्रजापत्य, सान्तपन अथवा तत्तकृच्छ्रव्रत का पालन करना चाहिए[541]।

वैश्य की हत्या अज्ञानता वश वैश्य की हत्या करने पर भी 6 वर्ष तक ब्रह्महत्या सम्बन्धी व्रत करने का विधान है। अथवा दो वर्ष तक 125 गायो का दान करना चाहिए। या कृच्छ्र एव अतिकृच्छ्र व्रत या चान्द्रायण व्रत का अनुष्ठान करना चाहिए[542]।

शूद्र की हत्या प्रमादवश शूद्र की हत्या करने पर तीन वर्ष तक ब्रह्महत्या सम्बन्धी व्रत करना चाहिए। तथा पाप की शान्ति हेतु एक वर्ष तक लगातार व्रत एव 1/25 गायो का दान करना चाहिए[543]।

ब्राह्मणों की हत्या ब्राह्मणी की हत्या पर ब्रह्मण को आठ वर्ष तक ब्रह्म हत्या सम्बन्धी व्रत द्वारा प्रायश्चित करना चाहिए।

क्षत्राणी की हत्या पर छ वर्ष तक ब्रह्महत्या सम्बन्धी व्रत द्वारा प्रायश्चित करना चाहिए

वैश्या की हत्या पर तीन वर्ष तक **ब्रह्महत्या सम्बन्धी** व्रत के द्वारा प्रायश्चित करना चाहिए।

शूद्रा की हत्या पर एक वर्ष तक ब्रह्महत्या सम्बन्धी व्रत के द्वारा प्रायश्चित का विधान है। जिससे ब्राह्मण शुद्व हो जाता है[544] । प्रमोद वश वैश्य स्त्री की हत्या करने पर द्विज को कुछ दान करे एव अन्तयजो की हत्या पर चान्द्रायण व्रत का विधान है। अथवा आलोचित पुराण मे भगवान अज को मुख से यह बात का कहलवायी गयी है कि पराक नामक व्रत से शुद्धि होती है[545] ।

वैश्यस्त्री की हत्या पर प्रमाद वश वैश्य स्त्री की हत्या करने पर वधकर्ता द्विज को कुछ दान करे[546] ।

अन्त्यजों की हत्या पर अन्त्यजो की हत्या होने पर चान्द्रायण व्रत करना चाहिए। अथवा भगवान अजे ने कहा है कि पराक नामक व्रत से शुद्धि होती है [547] ।

महाव्रत मेढक, नकुल,काक, विषैले (सर्पादि) प्राणी, चूहे एव कुत्ते की हत्या पर द्विज को महाव्रत के सोलहवे अश का पालन करना चाहिए[548] ।

कुत्ते की हत्या पर- आलस्य रहित तीन रात्रि जल पीने से शुद्धि होती है [549] ।

बिल्ली अथवा नेवले- की हत्या पर चार कोस पैदल चलना चाहिए[550] ।

घोडे की हत्या पर-ब्राह्मण को बारह रात्रि लगातार कृद्रव्रत करना चाहिए[551] ।

सर्प की हत्या पर- ब्राह्मण को काले लोहे की सर्प प्रतिमा का दान करना चाहिए[552] ।

नपुसंक की हत्या करने पर- 8000 तोला पुआल अर्थात पैरा एव एक मासा सीसा दान करना चाहिए[553] ।

वराह की हत्या करने पर- एक घडा घृत का दान करना चाहिए[554] ।

तित्तिर की हत्या करने पर-32 सेर तिल का दान करना चाहिए[555] ।

शुक की हत्या करने पर- दो वर्ष का बछडा दान करना चाहिए[556] ।

क्रोञ्च पक्षी का वध करने पर-तीन वर्ष का बछडा दान देना चाहिए[557]।

गौ का दान-हस, बलाका बक, मोर वानर, बाज, एव गिद्ध की हत्या करने पर ब्राह्मण के निमित्त गौर का दान करना चाहिए[558]।

मास भक्षी पशुओ की हत्या पर-दूध देने वाली गाय का दान करना चाहिए[559]।

हाथी की हत्या पर-तत्कृच्छ्र व्रत करने से शुद्धि होती है[560]।

गाय की हत्या पर-प्रमाद वश गाय की हत्या करने पर चान्द्रायण व्रत अथवा पराक व्रत करना चाहिए। लेकिन ज्ञान पूर्वक जानबूझकर हत्या करने पर उसका प्रायश्चित नही है[561]।

काकयोनि

जो ब्राह्मण अपने भोक्षदायक विहित दैनिक कार्य को आलस्य वश नही करता अर्थात (नास्तिक) होता है उसे कौवे की योनि मे जन्म लेना पडता है[562]।

कुत्ते की योनि

जो व्यक्ति श्रद्धाहीन अधार्मिक व्यक्ति को इस कूर्म पुराण का श्रृवण कराता है उसे मृत्यु के बाद नरको का भोग–भोगना पडता है तथा मृत्युलोक मे कुत्ते की योनि मे जन्म लेना पडता है[563]। इसी पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि जो गृहस्थ धनोपार्जन के उपरान्त विधि पूर्वक देवो एव पितरो से सम्बन्धित कार्य नही करता उसे भी कुत्ते की योनि मे जन्म लेना पडता है [564]।

शूकर योनि

जो व्यक्ति मोह अथवा आलस्य वश देवार्चन किये बगैर भोजन ग्रहण करता है उसे नरक का भोग भोगना पडता है तदुपरान्त शूकर योनि मे जन्म लेना पडता है[565]। आलोचित पुराण के अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि किसी श्राद्ध कर्ता द्वारा निमत्रित ब्राह्मण यदि अन्य व्यक्ति के यहॉ निमत्रण स्वीकार करता है तो वह घोर नरक मे जाता है एव उसे शूकर योनि मे जन्म लेना पडता है[566]।

शूद्रयोनि

जो ब्राह्मण अग्न्या धानादि कर्म नही करता वह दुर्मति तामिस्र, अन्धतामिस्र, महारौख, रौख, कुम्भी पाक, वैतरणी, असिपन्तवन एव अन्य नरको का भोग करना पडता है, तथा अन्यन्त निम्न कुल एव शूद्रयोनि मे जन्म लेना पडता है[567]।

पतित कर्म निरूपण

जो ब्राह्मण पतितो के साथ एक वर्ष तक जानकर भी उसके साथ नित्य यात्रा करे चारपाई, एव आसन पर बैठे तो इस प्रकार वह व्यक्ति पतित होता है[568] तथा जानबूझकर पतितो को यज्ञ करना, विवाहादि के बाद सहवास करना, अध्यापन करने तथा साथ भोजन करने से द्विज शीघ्र पतित होता जाता है[569]। इतना ही नही यदि अज्ञानता मे मोहवश अध्यापन अथवा एक साथ अध्ययन करे तो द्विज एक वर्ष मे पतित हो जाता है[570]।

स्नान से शुद्धि

वेदाध्यायी, योगकर्ता एव वेदज्ञ पिता तथा अन्य जन स्नान करने के उपरान्त शुद्धि होती है[571] ।

जल से शुद्धि

कपास, रेशम और ऊन दो खुर एव एक खुर वाले पशु, पक्षी, गध, औषधियो एव रस्सी की चोरी करने वाले को तीन दिनो तक जल पीना चाहिए [572]। तृण, काष्ठ, वृक्ष, शुष्क, अन्न, गुड वस्त्र चर्म एव मास की चोरी करने पर तीन रात्रि लगातार भोजन नही करना चाहिए[573]।

प्रमादवश यदि जूँठे मुँह द्विज बिना आचमन किये चाण्डालादि का स्पर्श करने पर स्नान करना तथा 8000 गायत्री का जाप करना चाहिए। अथवा ब्रह्मचारी को तीन रात्रि पर्यन्त उपवास करना एव 100 बार द्रुपदा मत्र का जप करना चाहिए। उसके बाद पञ्चगब्य पीने से शुद्धि होती है[574] अथवा प्राजापत्य व्रत करना चाहिए। चाण्डाल, अशौचयुक्त, व्यक्ति, शव, रजस्वला स्त्री, उनसे स्पृष्ट व्यक्ति, तथा पतित का स्पर्श करने पर स्नान करना चाहिए [575]।

प्रमादवश चाण्डाल, अशौचयुक्त व्यक्ति एव शव द्वारा स्पृष्ट व्यक्ति का स्पर्श करने पर स्नानोपरान्त आचमन कर जप करना चाहिए [576]। आलोचित पुराण मे एक अन्य स्थान पर कहा गया है कि चाण्डालादि का स्पर्श किये हुए व्यक्तित्व का स्पर्श करने पर ब्राह्मणो को शुद्धि हेतु आचमन करना चाहिए[577]। चाण्डाल एव अन्त्यज के शव को छूने पर कृच्छ्रव्रत करना चाहिए। अभ्यक्त अवस्था मे अर्थात तैलादि लगाकर स्पर्श न करने योग्य का स्पर्श करने पर अहोरात्र के उपवास से शुद्धि होती है[578]।

श्राद्धादि प्रयोजन के अतिरिक्त यदि हलुवा, खीर एव मालपुआ की तरह कोई खाद्य पदार्थ खाने पर तीन रात्रि का व्रत करने से शुद्धि होती है[579]। कुत्ते के जूठे भोजन को खाने से ब्राह्मण तीन रात्रि उपवास करने से ही शुद्ध होता है। यदि इच्छा पूर्वक ऐसा किया गया है तो उसे गोमूत्र मे सिद्ध यावन्न का आहार एव गायो के पीने से बचे जल को पीना चाहिए[580] गुरू के क्रोध को उत्पन्न करने वाले कार्य एव असत्य कथन करने पर पाप की शुद्धि हेतु एक रात्रि अथवा तीन रात्रि का उपवास करना चाहिए[581]।

बच्चा देने के उपरान्त दस दिन तक गाय, भैस, बकरी का दूध 10 दिन व्यतीत हुए बिना अथवा गर्भिणी एव बिना बच्चे वाली गौ, भैस, बकरी का दूध पीने पर इनके विकार अर्थात धृत या दधि इत्यादि को मोहवश खाने पर मनुष्य सात रात्रि तक गोमूत्र मे पके यव का भोजन करने पर शुद्ध हो जाता है [582]। मणि, मुक्ता, मूँगा, ताम्र, चॉदी एव लोहा तथा कासा की चोरी करने पर बारह दिन लगातार चावल का कण को खाना चाहिए[583]।

भक्ष्य एव भोज्य पदार्थ, यान शय्या, आसन, पुष्प, मूल तथा फलो की चोरी करने पर पञ्चगब्य से शुद्धि होती है। चाण्डाल से स्पष्ट जल पीने पर ब्राह्मण को तीन रात लगातार पञ्चगब्य पीने से शुद्धि होती है[585]। कोयल, मत्स्य, मेढक, एव सर्प का मास खाने पर एक मांस लगातार गोमूत्र मे पका हुआ यावन्न खाने से शुद्धि होती है[585]।

आरोग्यावस्था मे मल मूत्र का त्याग करने के उपरान्त जलशौच न करने अथवा जल के अन्दर प्रवेश कर मल मूत्र का त्याग करने पर वस्त्र सहित स्नान कर गौ का स्पर्श करने से शुद्धि होती है[586]। जानबूझकर ऐसा करने पर सूर्योदय के समय जल मे प्रवेश कर आठ हजार गायत्री का जप एव तीन दिन लगातार उपवास करना चाहिए[587]। अज्ञानता वश

मलमूत्र का भक्षण करने एव शराब को छूने पर तीन वर्ण वाले द्विजातियो का पुन सस्कार होना चाहिए [588]। एक अन्य स्थान पर शराब के छूने पर द्विज को तीन प्राणायम करने का विधान है [589]।

कुत्ते के काटने पर ब्राह्मण को तीन दिन सायकाल जल पीना चाहिए। यदि कुत्ता नाभि पर काटा हो तो उसके दुगुने अर्थात छ दिन जल पीना चाहिए[590] तथा बाहु मे कुत्ते के काटने पर उसके तिगुने अर्थात नव दिन एव मस्तक मे काटने पर उसके चौगुने 12 दिन सायकाल जल पीना चाहिए। अथवा कुत्ते के काटने पर ब्राह्मण को स्नानोपरान्त गायत्री का जप करना चाहिए [591]। मिथ्याध्ययन करने पर एक वर्ष तक भिक्षा द्वारा जीवन यापन करने का विधान है। कृतध्न को ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर ब्राह्मण के घर मे पॉच वर्ष तक रहना चाहिए[592]।

ब्राह्मण की "हुकार" एव गुरू को 'त्वकार" कहने पर स्नानोपरान्त दिन भर उपवास रहकर उन्हे प्रणाम कर प्रसन्न करना चाहिए [593]। यदि इन पर तृण द्वारा भी प्रहार किया गया हो अथवा विवाद मे उनको पराजित किया गया हो या उनके कष्ट को किसी वस्त्र द्वारा भी बॉधा गया हो तो उन्हे प्रणाम कर प्रसन्न करना चाहिए [594]। ब्राह्मण को धमकाने पर कृच्द्व्रत करना चाहिए) जमीन पर पटक देने पर अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए। एव ब्राह्मण का रक्त बहाने पर कृच्छ्र एव अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए[595]।

देवता एव ऋषियो के सम्मुख थूकने एव आक्रोश प्रकट करने पर उल्का (अग्नि) द्वारा अपनी जीभ को जलाना चाहिए एव स्वर्ण का दान करना चाहिए [596]। यदि द्विज एक बार भी देवोधान मे या मोहवश देव मन्दिर में मलमूत्र का त्याग करे तो उसे पाप की शुद्धि हेतु लिगच्छेदन एव चान्द्रायण व्रत करना चाहिए[597]। देवता ऋषि एव देव तुल्य व्यक्तियो की निन्दा करने पर ब्राह्मण को भलीभॉति प्राजापत्य व्रत करना चाहिए। उक्त प्रकार के व्यक्तियो से सम्भाषण करने पर स्नान कर देवता की पूजा का विधान है। उन्हे देखने पर सूर्य का दर्शन करना चाहिए एव उनका स्मरण करने के उपरान्त विश्वेश्वर का स्मरण करना चाहिए। इस प्रकार जो भी व्यक्ति विश्वेश की निन्दा करता है वह सौ वर्षो मे भी उसके पाप की शुद्धि नही हो सकती [598]। परन्तु ऐसी स्थिति मे पहले चान्द्रायण व्रत कर कृच्छ्र एव

अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए तत्पश्चात विश्वेश्वर देव के शरणागत होने पर उस पाप से मुक्ति बतलायी गयी है[599]। विधि पूर्वक सर्वस्व दान, तथा चान्द्रायण व्रत एव कृच्छ्र एव अतिकृच्छ्र व्रत करने से सभी पापो की शुद्धि होती है। पाप मुक्ति तिथि महात्म्य कूर्म पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि व्यक्ति से जाने–अनजाने पाप होते रहते है उन पापो से मुक्ति के लिए इस पुराण मे कुछ उल्लेख मिलता है।

आलोचित पुराण के अनुसार अमावास्या की तिथि आने पर जो शिव की आराधना कर ब्राह्मणो को भोजन कराता है वह सभी पापो से मुक्त हो जाता है[600]। कृष्णाष्टमी एव कृष्ण चतुर्दशी को महादेवी दुर्गा की पूजा करने के उपरान्त ब्राह्मणो को भोजन कराने पर मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है। त्रयोदशी की रात्रि के पहले पहर मे उपहार सहित शिव का दर्शन करने से मनुष्य सभी पापो मुक्त हो जाता है। कृष्ण पक्ष को चतुर्दशी को पूर्वाह्न मे नदी मे स्नान कर उपवास करने से समस्त पापो के क्षय हेतु यम धर्म राज मृत्यु, अन्तक वैवस्वत, काल एव सर्वभूत विनाशक के निमित्त सात जलाञ्जलि प्रदान करना चाहिए ऐसा करने वाला व्यक्ति सभी पापो से मुक्त हो जाता है[601]। अमावस्या तिथि मे ब्रह्मा के उद्देश्य से तीन ब्राह्मणो की पूजा करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [602]।

शुक्ल पक्ष षष्ठी तिथि मे उपवास कर सप्तमी को सूर्य की पूजा करने से शनिवार को भरणी नक्षत्र एव चतुर्थी को जो मनुष्य यम की पूजा करता है वह सात जन्मो के पाप से मुक्त हो जाता है। जो शुक्ल पक्ष की एकादशी को निराहार रहकर द्वादशी को जर्नादन की अर्चना करता है वह भी महापापों से मुक्त हो जाता है [603]।

ग्रहणादि के समय जप, तप तीर्थ सेवा तथा देवता एव ब्राह्मण का पूजन करने से महापातको का शोधन होता है। समस्त पापो से मुक्त होने पर जो मनुष्य पुण्य तीर्थो मे नियम पूर्वक प्राणो का त्याग करता है वह समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [604]।

पति के साथ अग्नि मे प्रवेश करने वाली स्त्री अर्थात सती होती है वह ब्रह्मध्यान, कृतध्न अथवा महापातकी पति का उद्धार कर देती है। इस प्रकार विद्वानो ने स्त्री के लिए यही श्रेष्ठ प्रायश्चित बतलाया है। जो स्त्री पतिव्रता एव पतिसेवा परायण होती है उसे इस लोक एव परलोक मे कोई पाप नहीं लगता है [605]।

सूरापान

कूर्म पुराण मे ब्रह्म की यज्ञ मे सुत्या अर्थात सोमरस प्रस्तुत करने का उल्लेख मिलता है[606]। वेदो मे भी सोम तथा सुरापान का उल्लेख मिलता है वैदिक आर्य सुरापान करते थे। गौतम[607] तथा आपस्तम्ब धर्मसूत्र[608] मे सुरा तथा सभी प्रकार की नशीली वस्तुओ का पीना ब्राह्मण के लिए वर्जित किया है।

आलोचित पुराण मे मद्य को दान देना, पीना छूना एव देखना ब्राह्मणो के लिए वर्जित है तथा सभी प्रकार के मद्य का नित्य त्याग करना चाहिए क्योकि मद्य के पीने से द्विज अपने कर्म से पतित हो जाता है एव बात करने योग्य नही रहता है इस प्रकार शराब का प्रयोग पूर्णतय वर्जित है[609]।

इसी मे एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि जिसके पास भृत्यो के पालन–पोषण हेतु तीन वर्ष के लिए पर्याप्त अथवा उससे अधिक समय तक के लिए आहार सामग्री हो तो वह सोम पान कर सकता है इससे ऐसा प्रतीत होता है कि इसके सेवन से अकर्मण्यता होती थी एव अधिक धन की आवश्यकता होती थी इसलिए इसे सामर्थ्यवान के लिए ही पीना बताया गया है [610]।

मनु के अनुसार मधुपर्क, सोम, ताम्बूल फल मूल, एव ईख का भक्षण करने पर कोई दोष नही होता [611]।

प्रायश्चित विधानों के माध्यम से पर्यावरण संतुलन पर बल

विभिन्न जीवों की हत्या पर बताये गये प्रायश्चित विधानो से यह बात स्पष्ट होती है कि कूर्म पुराण के रचनाकारो के मानस मे न केवल हिसा को पाप समझा गया है न उस पर रोक लगाने की चेष्टा की गयी है बल्कि पर्यावरण सतुलन एव अनुरक्षण पर समान दृष्टि रखी गयी है। इस प्रकार पुराणो मे वैदिक वाङमय मे वर्णित पर्यावरण अनुरक्षण की मनोवृत्ति को प्रशय दिया गया है।

आर्थिक स्थिति

कूर्म पुराण मे प्राप्त विवरण के आधार पर पूर्व मे समाज की आर्थिक स्थिति का सकेत मिलता है । धार्मिक कार्यो मे गृहस्थ छाता, जूता इत्यादि दान मे दिया करते थे[612]। आलोचित पुराण मे गृहस्थो के जीवकोपार्जन के लिए जीविका का साधन, अध्यापन, याजन, एव दान इसकी अतिरिक्त वे अपने द्वारा न किया हुआ सूदी व्यवहार, कृषि एव वाणिज्य था[613]। इसी पुराण मे अन्य स्थान पर भी ब्रह्मा द्वारा आजीविका के सम्बन्ध उल्लेख किया गया है कि कृषि पशुपालन रुपी जीविका का उपाय तथा कर्मसाध्य शिल्प कौशल यही प्राणियो की आजीविका का साधन बतलाया गया है[614]। गृहस्थ के रुप रहते हुए अन्यान्य वर्णो के अनुसार कर्म द्वारा जीविका के क्षेत्र का विभाजन भी किया गया था। जिसमे ब्राह्मण के लिए यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना, अध्यापन एव अध्ययन ब्राह्मणो के मे छ कर्म थे जिनके द्वारा ही उन्हे अपना भरण पोषण करना होता था[615]। परन्तु इसके अतिरिक्त अपने द्वारा न किया हुआ अन्य वृत्ति द्वारा भी जीवन निर्वाह किया जा सकता था जैसे– कृषि, वाणिज्य, एव कुसीद, कृषि के अभाव मे वाणिज्य, वाणिज्य के अभाव मे कुसीद का अवलम्बन कर सकते था। विशेष परिस्थितियो गृहस्थ ब्राह्मण उपरोक्त कार्य कर सकते थे परन्तु कुसीद को अत्यन्त कष्टकारक पापपूर्ण वृत्ति कहा गया है[616]। क्षत्रिय, एव वैश्यो के लिए भी आजीविका का साधन मे कुछ कार्य तो ब्राह्मणो जैसा ही था परन्तु कुछ अलग जैसे क्षत्रिय को दण्ड एव युद्ध तथा वैश्य के लिए कृषि प्रशस्त कार्य था शूद्रो की आजीविका शिल्प कौशल कहा गया है[617]। इस प्रकार गृहस्थ जीवन को महत्वपूर्ण माना जाता है, कि अपना भरण पोषण करते हुए धार्मिक कार्यो मे भी सहभागिता होती थी क्योकि भूमि, अन्न, स्वर्ण, मधु, धृत, वस्तुए दान मे दिया जाता था। दान की वस्तुओ के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज मे गृहस्थ आर्थिक रूप से सम्पन्न थे। गुरु दक्षिणा मे दान भी तत्कालीन विकसित अर्थव्यवस्था का भी उल्लेख मिलता है[618]। तत्कालीन अर्थव्यवस्था की महत्ता को प्रतिपादित करने के दृष्टि से उल्लेख प्रस्तुत किया जा सकता है कि लोगो मे यह धार्मिक आस्था थी कि लक्ष्मी की पूजा करने से लक्ष्मी (विपुल सम्पत्ति) पुष्टि मेधा, यश एव

बल की प्राप्ति होती है[619]।

कृषिकर्म

कूर्मपुराण मे कृषि कर्म वैश्य वृत्ति के रूप मे जाना जाता है[620]। परन्तु आवश्यकतानुसार सभी इस कार्य को करते थे । आलोचित पुराण इस कार्य के करने की विधि का उल्लेख तो नही है परन्तु सम्पन्न कृषि के रुप मे कहा जा सकता है क्योकि ब्राह्मण्डो को निदिष्ट किया गया है कि कृषि से प्राप्त लाभ पर पितृगण, देवता एव ब्राह्मणो की पूजा का विधान बताया गया है जिसमे से पितरो को लाभ का बीसवॉ भाग 5% एव ब्राह्मण्डो को तीसवॉ भाग 3½ देना चाहिए[621]। इसे वर्तमान समय का आयकर भी कहा जा सकता है। उच्च आय वर्ग के लोगो को यह कर देना होता है। कालीदास ने कृषि–कर्म तथा पशुपालन को राष्ट्रीय आय का प्रमुख स्रोत स्वीकार किया है[622]। भविष्य पुराण[623] मे तत्कालीन कृषि व्यवस्था के सकेत मिलते है । कृषि कर्म के लिए जुताई भविष्य पुराण एव खुदाई जैसे शब्दो का उल्लेख प्राप्त होता है ।

पशुपालन

कृषि फर्म के साथ ही पशुपालन भी महत्वपूर्ण आजीविका का साधन कहा गया है। आलोचित पुराण मे गौओ को घास दान मे दिये जाने का उल्लेख है[624] तथा गाय बैल का भी दान किया जाता था[625]। इससे प्रतीत होता है पशुपालन व्यवस्था का काफी विकास हो चुका था । भविष्य पुराण[626] के अनुसार कृषि कर्म के उपरान्त पशुपालन को द्वितीय स्थान प्राप्त था इसमे गोचर भूमि भविष्य पुराण पूर्वकाल, गोप, गोष्ठ, आदि शब्द पशुपालन की प्रथा को अभिव्यक्त करते है। गाय, भैस, बकरी, भेड के दूध से बने घी का भी उल्लेख मिलता है।

व्यापार

आलोचित पुराण[627] मे कृषि एव वाणिज्य कर्म वैश्य के लिए कहा गया है। वामन पुराण[628] के अनुसार वाणिज्य वैश्यो के लिए विहित तथा पवित्र कर्म है। भविष्य पुराण[629] मे व्यापारी के लिए वाणिक भविष्य पुराण प्रतिसर्ग तथा वैश्य भविष्य पुराण आदि शब्दो का प्रयोग किया गया है। वाणिज्य तथा ब्याज लेकर कर्ज देना वैश्यो का कर्म कहा गया। भविष्य पुराण

ब्रह्मपर्व, वायु पुराण मे क्रय–विक्रय वैश्य की जीविका मानी गयी लैब एव इस कर्म मे साधारणतया अन्य वर्णो मे ब्राह्मण के लिए पादपूर्ण कर्म माना जाता था[630]। आलोचित पुराण व्यापार करने पर विशेशकर ब्राह्मण के लिए कहा गया है कि व्यापार से लाभ होने पर 10% सूदी व्यवहार 15% का दान करने का विधान था। यह भी व्यवस्था वर्तमान आयकर के ही भॉति प्रतीत होती है[631]।

शिल्प

कूर्म पुराण[632] मे अनेक शिल्पकारो का उल्लेख मिलता है जैसे कुम्भकार चित्रकार, बढई, आदि परन्तु इनके व्यवसाय के सम्बन्ध कोई उल्लेख नही है। तैत्तिरीय सहिता[633] मे इन उद्योगो से सम्बद्ध व्यवसायिक वर्गो के लिए पृथव पृथक सज्ञा व्यवहृद है। भविष्य पुराण[634] शिल्पी शब्द हस्त कला एव हस्तनिर्मित उद्योगो की ओर सकेत करता है। आलोचित पुराण[635] मे एक स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि अपना कार्य कराने के बाद शिल्पियो को (उनके पारिश्रमिक से) वञ्चित नही करना चाहिए। वाजसनेयी सहिता[636] मे कॅरू के स्थान 'करि' शब्द का प्रयोग शिल्पी का अर्थबोधक माना जाता है। आलोचित पुराण[637] मे कारु शब्द का प्रयोग शिल्प के सम्बन्ध मे किया गया है। मनुस्मृति मे कारुकर्मी ब्राह्मण को शूद्र वर्ग मे परिगणित किया गया है। भविष्य पुराण[638] के अनुसार ऐसे ब्राह्मणो के शूद्रवत व्यवहार करना चाहिए। इस बात की पुष्टि स्कन्द के एक उल्लेख से भी होती है [639]। वायु एव ब्राह्मडों पुराणो मे कारु कर्मकत्त्र ब्राह्मणो को श्राद्ध मे अपत्रिय तथा हथकव्य मे अभोजनीय तथा वर्जनीय माना गया है।

वस्त्र निर्माण

कूर्म पुराण[640] से ज्ञात होता है कि पूर्व मे सूती, रेशमी, वस्त्रो का भी निर्माण होता था। क्योकि उपनयन सस्कार मे कपास रेशम के बने वस्त्रो को धारण करने का उल्लेख है। साथ ही मृग चर्म, रुरु मृग चर्म तथा गाय के मृग चर्म के वस्त्रो का उल्लेख मिलता है[641]। परन्तु अन वस्त्रो के निर्माण विधि का उल्लेख नही है। भविष्य पुराण[642] से भी इसकी सम्पुष्टि होती है। इस पुराण मे तो वस्त्रो के निर्माण उद्योग मे उसके नियमो का भी उल्लेख मिलता है[643]।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) कूर्म पुराण 1 2 7-9

(2) कूर्म पुराण 1 2 10

(3) कूर्म पुराण 1 2 11-19

(4) कूर्म पुराण 1 2 21-22

(5) कूर्म पुराण 1 2 23-24

(6) विष्णु पुराण 1 12 63 64

(7) वायु पुराण 9-113

(8) ब्रह्मण्ड पुराण 1 5 108

(9) ऋग्वेद 10 90 12

(10) मत्स्य पुराण 4 28

(11) भविष्य पुराण 4 5 9-13

(12) मध्यम पर्व भ०पु० 1 34-35

(13) वमन पुराण 60.25

(14) कूर्म पुराण 1 2 89

(15) विष्णु पुराण 1.2 63 64

(16) वायु पुराण 9.11.3

(17) वामन पुराण 60 26

(18) पद्म पुराण 3.119-121

(19) गरूण पुराण 1 4 34

(20) कूर्म पुराण 1 2 66-67

(21) पद्म पुराण 147-148

(22) गरूण पुराण 1 4 35

(23) भ० पु० ब्राम्ह पर्व 2 17

(24) शक्ति पर्व 56 22

(25) तैत्तरीय ब्राह्मण 3 73

(26) मनु स्मृति 1 99 100

(27) विधि धर्म सूत्र 19 20 22

(28) मनुस्मृति 11 84

(29) पद्म पुराण आदि 61 47 58

(30) कूर्म पुराण 2 26 36 37

(31) पद्म पुराण आदि 43 106

(32) कूर्म पुराण 2.12 48

(33) कूर्म पुराण 2 12 46

(34) पद्म पुराण आदि 43 103

(35) कूर्म पुराण 2.15 27

(36) पद्म पुराण 54 25

(37) पद्म पुराण सृष्टि 43.135

(38) पद्म पुराण सृष्टि 43.137-140

(39) कूर्म पुराण 1 2 36

(40) मनु स्मृति 1 88

(41) पाताल 9, 40- 41

(42) विष्णु पुराण 3 8 32

(43) वायु पुराण 60 38

(44) वायु पुराण 106 42

(45) मत्स्य पुराण 38, 3

(46) कूर्म पुराण 2 15 38-39

(47) कूर्म पुराण 1 2 37

(48) मनु स्मृति 10 77

(49) मनु स्मृति 10 80

(50) भूमि 43, 70

(51) कूर्म पुराण 1 27 47

(52) गीता 2 31

(53) विष्णु पुराण 3.8.27

(54) कूर्म पुराण 1,2,66

(55) ब्राह्मण्ड पुराण 2,7, 1, 65

(56) कूर्म पुराण 1 2 24, 37

(57) कूर्म पुराण 1 2,34

(58) पद्म पुराण (उत्तर) 2.24 43-44

(59) विष्णु पुराण 3 8.30

(60) वायु (ब्रह्मण पुराण) 8 1 65

(61) ब्राह्मण 2,7,1,62

(62) मनु स्मृति 8,140

(63) मत्स्य 8 140

(64) वामन पुराण 2,7,1,62

(65) मनु स्मृति 175

(66) विष्णु पुराण 3, 8, 32

(67) कूर्म पुराण 1, 2, 24

(68) कूर्म पुराण 1, 2, 25

(69) वामन 1 82

(70) गीता 18, 44

(71) भविष्य पुराण 2, 120

(72) भविष्य पुराण 44, 23

(73) कूर्म पुराण 2, 16, 51, 52

(74) वशिष्ठ धर्मसूत्र 18-23

(75) गौतम धर्म सूत्र 12 1-2

(76) उत्तर 66, 49-60

(77) गौतम धर्मसूत्र 192

(78) बोधायन सूत्र 190-19

(79) गीता 18-44

(80) कूर्म पुराण 2, 12, 50

(81) पद्म पुराण 84-45

(82) भागवत पुराण 1 72-73

(83) कूर्म पुराण 1,2,3 8

(84) सूची जातक 387

उपाहन जातक 231

दूहवच जातक 116

(85) आर०एस० शर्मा शूद्रो का प्राचीन इतिहास पृ० 109

(86) वायु पुराण 8 16

(87) कूर्म पुराण 1 2,8,6

(88) कूर्म पुराण 1 28,7

(89) विष्णु पुराण 208

(90) वायु ब्राह्मण 209

(91) मत्स्य पुराण 144-42

(92) विष्णु पुराण 2 6 18

(93) वायु पुराण 2.6 18

(94) ब्रह्मण पुराण 3,15,56

(95) मनुस्मृति 3 156

(96) मनुस्मृति 3 178

(97) विष्णु स्मृति 82.14

(98) मनु स्मृति 3 3 49

(99) मत्स्य पुराण 227/36

(100) विष्णु पुराण 3.8.34

(101) मत्स्य पुराण 17 71

(102) वायु पुराँण 101-353

(103) ब्राह्मण पुराण 4 2 314

(104) मनुस्मृति 10-12

(105) ब्रह्मपूर्व (भागवत) 184,15,16

(106) कूर्म पुराण 2 16, 2-18

(107) कूर्म पुराण 2 16, 27

(108) कूर्म पुराण 2 16 28-29

(109) विष्णु पुराण 3 16 13

(110) ब्रह्म पर्व 184-14

(111) मनु स्मृति10-12

(112) छान्दोग्य उपनिषद 25 10 7

(113) मनु स्मृति 4.79

(114) विधि धर्म सूत्र 16 11 14

(115) उशनस स्मृति 9 10

(116) लेगी रिकार्ड ऑफ बुद्धिस्ट किगडम्स, पृष्ठ 43

(117) कूर्म पुराण 1 27 48

(118) कूर्म पुराण 1.45 20

(119) कूर्म पुराण 1 2 39

(120) कूर्म पुराण 1 2 77

(121) कूर्म पुराण 1 3 3

(122) कूर्म पुराण 1 3 8

(123) कूर्म पुराण 1 3 2

(124) कूर्म पुराण 1 2 74-75

(125) विष्णु पुराण 3 9 1

(126) विष्णु पुराण 1 6 36

(127) वायु पुराण 8 1 94

(128) ब्रह्माण्ड पुराण 2 7 180

(129) वामन पुराण 293

(130) कूर्म पुराण 2 12 52

(131) कूर्म पुराण 2 12 24

(132) विष्णु पुराण 3 9 5

(133) कूर्म पुराण 2 12.56-60

(134) कूर्म पुराण 2.12.4-5

(135) कूर्म पुराण 2 12 4-5

(136) मत्स्य पुराण 40 2

(137) विष्णु पुराण 3 8 3, 6-3 9 2

(138) द्रष्टव्य पाद टिप्पणी 30

(139) कूर्म पुराण 1 12 4-5

(140) विष्णु पुराण द्रष्टव्य पाद टिप्पणी 26

(141) वायु पुराण 8 1 74

(142) ब्रह्माण्ड पुराण 2 7.175

(143) मत्स्य पुराण 40

(144) कूर्म पुराण 2 12 16

(145) विष्णु पुराण 3 9 2-3

(146) कूर्म पुराण 2 12 17

(147) कूर्म पुराण 2 15 26

(148) कूर्म पुराण 1 2 49-50

(149) विष्णु पुराण 3 9 11

(150) वायु पुराण 8 1 72

(151) ब्रह्माण्ड पुराण 2 7 172-173

(152) मनु स्मृति 3 77-78

(153) कूर्म पुराण 2 15.9-10

(154) विष्णु पुराण 3 9 8

(155) वामन पुराण 14 11

(156) कूर्म पुराण 2 25 2-6

(157) कूर्म पुराण 2 25 10

(158) कूर्म पुराण 2 25.1

(159) कूर्म पुराण 2.25 12

(160) कूर्म पुराण 2.25 1

(161) पद्म पुराण सृष्टि 15 30.1-3

(162) मनु स्मृति 4 7 पर कुल्लूक की टीका देखिए ।

(163) कूर्म पुराण 1 2.40

(164) कूर्म पुराण 1 2 63-65

(165) आपस्तम्ब धर्म सूत्र 2 1 1,2

(166) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 96 127

(167) बौधायन धर्म सूत्र 18 1 17

(168) महाभारत अनुशासन पर्व 141 25

(169) कूर्म पुराण 2 18 3

(170) कूर्म पुराण 2 18 4

(171) कूर्म पुराण 2 18 8

(172) कूर्म पुराण 2 18 9

(173) कूर्म पुराण 2 18 10

(174) कूर्म पुराण 2 18 11

(175) कूर्म पुराण 2 18 12-13

(176) कूर्म पुराण 2 18 14

(177) कूर्म पुराण 2 18.16

(178) कूर्म पुराण 2.18 17

(179) कूर्म पुराण 2.18.25

(180) कूर्म पुराण 2 14 1

(181) कूर्म पुराण 2.19 2

(181) भविष्य पुराण 3 35 37

(182) कूर्म पुराण 2 19 1 3 & 4

(183) कूर्म पुराण 2 19.2

(184) भविष्य पुराण 3 35 37

(185) कूर्म पुराण 2 19 9

(186) कूर्म पुराण 2 19 14

(187) कूर्म पुराण 2 19 15

(188) कूर्म पुराण 2 19 17 &18

(189) कूर्म पुराण 2 19 19-23

(190) कूर्म पुराण 2 19 24

(191) कूर्म पुराण 2 19 28-29

(192) कूर्म पुराण 7 2 78

(193) कूर्म पुराण 1 2 79

(194) कूर्म पुराण 2 27 1 -2

(195) पद्म पुराण आदि 58 6, 8, 32

(196) कूर्म पुराण 2 27.3-5

(197) कूर्म पुराण 2 27 28

(198) कूर्म पुराण 2 27 9-11

(199) कूर्म पुराण 2 27 16

(200) पद्म पुराण 58.15, 16, 17

(201) कूर्म पुराण 2 27 19-20

(202) पद्म पुराण आदि 58.16, 17, 21

(203) पद्म पुराण सृष्टि 15 33 37

(204) कूर्म पुराण 2 27.21 22

(205) कूर्म पुराण 2 27 23

(206) कूर्म पुराण 2 27 24-25

(207) कूर्म पुराण 2 27 27-32

(208) पद्म पुराण आदि 58 31 & 27

(209) कूर्म पुराण 2 28 1

(210) पद्म पुराण आदि 59 1

(211) मनु स्मृति 6 33

(212) कूर्म पुराण 2 28 6-7

(213) पद्म पुराण 59/5 8

(214) महाभारत अनुशासन पर्व 141-89

(215) पदम पुराण उत्तर 111/5

(216) पद्म पुराण आदि 59/15.16

(217) कूर्म पुराण 2 28 10

(218) कूर्म पुराण 2 28.30

(219) मनु स्मृति 6/52

(220) कूर्म पुराण 2 28 13/14, 18, 23

(221) मनु स्मृति 12/10

(222) कूर्म पुराण 2 29 9

(223) मनु स्मृति 6/54

(224) याज्ञवल्क्य स्मृति 3,60

(225) कूर्म पुराण 2.28 15 & 19

(226) कूर्म पुराण 2 29 2-3

(227) कूर्म पुराण 2 29 5

(228) कूर्म पुराण 2 29 6

(229) कूर्म पुराण 2 29 7-8

(230) आपस्तम्ब धर्म सूत्र 2 4 9 13

(231) बौधायन धर्म सूत्र 2 10 68

(232) कूर्म पुराण 2 28 26

(233) कूर्म पुराण 2 28 27-28

(234) कूर्म पुराण 2 28 12-13

(235) कूर्म पुराण 2 28 29

(236) कूर्म पुराण 2 28 18

(237) कूर्म पुराण 2 28 21

(238) विष्णु पुराण 3 9.25

(239) मत्स्य पुराण 40 5

(240) मनु स्मृति 6 60

(241) वायु पुराण 17.4

(242) डॉ० काणे–हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र भाग–2, पार्ट–2 पृष्ठ 930, 975

(243) कूर्म पुराण 11.2.98

(244) कूर्म पुराण 1.2.100

(245) कूर्म पुराण 1.2.101

(246) कूर्म पुराण 1 2.102

(247) कूर्म पुराण 1 2 104 & 107

(248) छान्दोग्य उपनिषद 4 16 1-2

(249) कात्यायन श्रौत 1 8 34

(250) शतपथ ब्राह्मण 1 1 5-10, 3 2, 1 22

(251) पारस्कर गृह सूत्र 2 5 42 43

(252) जैमिनी सूत्र 3 1 3 पर सबर का टीका

(253) पी०वी काणे, धर्म शास्त्र का इतिहास, भाग 1, पृष्ठ 177

(254) राम जी उपाध्याय, भारत की सस्कृति–साधना, पृष्ठ 20

(255) ए०एल० बैशम, द वण्डर दैट वॉज इण्डिया, पृष्ठ 151

(256) राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार, पृष्ठ 19

(257) राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार, पृष्ठ 30-33

(258) ऋग्वेद 10 183, 10 85, 1014

(259) अथर्ववेद18 1-4, 15 1 2

(260) गौतम धर्म सूत्र 8 8

(261) आपस्तम्ब धर्म सूत्र 1 1 1-9

(262) वशिष्ठ धर्म सूत्र 4 11

(263) मनु स्मृति 2.26 27

(264) वेदान्त सूत्र 1.1 4

(265) मनु स्मृति 2.28

(266) मनु स्मृति 2.28

(267) पराशर स्मृति 8 19

(268) डा० राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार प्रस्तावना पृ० 5

(269) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 13

(270) राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार पृ० 33

(271) राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार पृ० 16

(272) गौतम धर्म सूत्र 8 14 24

(273) राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार प्रस्तावना पृष्ठ 7

(274) मनु स्मृति 2 16 26

(275) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 10 11

(276) पारस्कर गृहय सूत्र 1 11

(277) आपस्तम्ब गृह्यसूत्र 8 10.11

(278) वैखानस्य गृहयसूत्र 3 10

(279) वीरमित्रोदय सस्कार प्रकाश मे उद्धृत पूर्व मीमासा 1 42 ''गर्भ सधार्यते येन कर्मणा तद् गर्भाधानमित्यनुगतार्थ कर्मनामधेयम् ।

(280) अथर्ववेद 11 5 3

(281) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 14

(282) कूर्म पुराण 1 1 16-44

(283) विष्णु पुराण 3 10 12,

(284) विष्णु पुराण 3 10 12, 4 3 37, 2 13 39, 2 21 19

(285) राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार पृष्ठ 99-110

(286) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1 1 9

(287) याज्ञवल्क्य स्मृति 3 2 49

(288) अपरार्क 11 71 11 73, दृष्टव्य बौधयन धर्मसूत्र 2 21

(289) कूर्म पुराण 2 12 4

(290) भविष्य पुराण ब्राह्मपर्व 3 15 16

(291) मनुस्मृति 2 39

(292) भविष्य पुराण 3 17-18

(293) कूर्म पुराण 2 12 9

(294) भविष्य पुराण ब्राह्मय पर्व 3 20

(295) कूर्म पुराण 2 12 8

(296) शतपथ ब्राह्मण 3 9 1-12

(297) वाजसनेय सहिता 30 15

(298) ऋग्वेद 1 66 10

(299) राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार पृ० 172

(300) कूर्म पुराण 2 12.14

(301) भविष्य पुराण ब्राह्मपर्व 3 23 24

(302) गौतम गृह्यसूत्र 1 15

(303) बौधायन गृह्यसूत्र 2.5 13

(304) बौधायन गूह्यसूत्र 2 5.13

(305) कूर्म पुराण 2 12.6

(306) कूर्म पुराण 2 12.7

(307) मनु स्मृति 2.44

(308) विष्णु धर्म सूत्र 27 29

(309) पैठीनसि, वीरमित्रोदय सस्कार प्रकाश भाग–1 पृष्ठ 415 (कार्पासञ्चोनीत सर्वेवाम्)

(310) गौतम धर्मसूत्र 1 26

(311) मनुस्मृति 2 47

(312) भविष्य पुराण ब्राह्मपर्व 3 26-27, 3 28-29, 3 29-31

(313) कूर्म पुराण 2 12 53

(314) कूर्म पुराण 2 12 54

(315) कूर्म पुराण 2 12 56

(316) कूर्म पुराण 2 12 55

(317) मनुस्मृति 2 1 89

(318) बौधायन धर्मसूत्र 1 5 56

(319) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 187

(320) आपश्तम्ब धर्मसूत्र 1 1 3 25

(321) गौतम धर्मसूत्र 2 41

(322) पी वी काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास भाग–1 पृष्ठ 226

(323) राजबली पाण्डेय हिन्दू सस्कार, पृष्ठ 179

(324) कूर्म पुराण 2.19 2

(325) कूर्म पुराण 2 19 9-10

(326) कूर्म पुराण 2 19 17

(327) कूर्म पुराण 2.19.8

(328) कूर्म पुराण 2.12 64

(329) कूर्म पुराण 2.13.13

(330) कूर्म पुराण 2 13 13 & 2 1 4-5, 2 33 68

(331) कूर्म पुराण 2 13 8

(332) कूर्म पुराण 2 13 6-7

(333) कूर्म पुराण 2 13 12

(334) कूर्म पुराण 2 13 13

(335) कूर्म पुराण 2 13 15

(336) कूर्म पुराण 2 13 19

(337) कूर्म पुराण 2 13 20

(338) कूर्म पुराण 2 13 21

(339) कूर्म पुराण 2 13 22

(340) कूर्म पुराण 2 13 25

(341) कूर्म पुराण 2 13 26

(342) कूर्म पुराण 2 13 16-18

(343) कूर्म पुराण 2 12 26 27

(344) कूर्म पुराण 2 12 32

(345) कूर्म पुराण 2.12.22

(346) कूर्म पुराण 1 16 11

(347) कूर्म पुराण 2.15 32

(348) कूर्म पुराण 2 15 33

(349) अश्वलायन गृहय सूत्र 3 8 1

(350) बौधायन गृहयसूत्र 2 6 1

(351) गौतम स्मृति 8 16

(352) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 51

(353) मनुस्मृति 3 4

(354) भविष्य पुराण ब्रह्मपर्व 4 2 14

(355) भविष्य पुराण 4 2 15

(356) पारश्कर गृहय सूत्र 1 3 12

(357) कूर्म पुराण 2 15 10 11

(358) हरिदत्त वेदालकार, हिन्दू विवाह का सक्षिप्त इतिहास पृ० 11

(359) एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड इथिक्स 4 4 4-23

(360) वेस्टरमार्क, ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ मैरिज लन्दन 1926 पृ० 11

(361) जिलिन कल्चरल, सोश्योलोजी न्यूयार्क पृ० 3 34

(362) एनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड इथिक्स 4 423 दृष्ट्व्य, हरिदत्त वेदालकार, हिन्दू विवाह का सक्षिप्त इतिहास पृ० 11

(363) वेटरमार्क, ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ मैरिज लन्दन 1926 पृ० 1

(364) ऋग्वेद 10 85 36, 5 3 2, 5 28 3, 3 53 4

(365) शतपथ ब्राह्मण 5 2 1-10

(366) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2 5 11-12

(367) महाभारत शान्तिपर्व 144 6

(368) मनुस्मृति 9 28

(369) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2.11 2

(370) याज्ञवल्क्य स्मृति 6

(371) दृष्टव्य, हरिदत्त वेदालकर, हिन्दू विवाह का सक्षिप्त इतिहास पृष्ठ 9

(372) कूर्म पुराण 2 15 10

(373) भविष्य पुराण 21 68 73

(374) भविष्य पुराण 6 28

(375) मार्कण्डेय पुराण 21 68 73

(376) विष्णु पुराण 3 10 13

(377) ब्राह्मण पुराण 4 14 15

(378) मत्स्य पुराण 54 24

(379) विष्णु पुराण 5 28 38

(380) मत्स्य पुराण 155, 152, 54 24

(381) मार्कण्डेय पुराण अध्याय 98 दृष्ट्व्य हरिदत्त वेदालकार, हिन्दू विवाह का सक्षिप्त इतिहास पृ० 17

(382) भविष्य पुराण ब्राह्म पर्व 6 14

(383) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2 6 13 1

(384) गौतम धर्मसूत्र 1 4 1

(385) मनु स्मृति 3 12

(386) कूर्म पुराण 2 15 9

(387) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 2 13.1-3

(388) मनुस्मृति 3.12

(389) भविष्य पुराण 6 32 33

(390) भविष्य पुराण 6 34

(391) भविष्य पुराण 6 35-38

(392) भविष्य पुराण 7 6

(393) बौधायन धर्मसूत्र 1 82

(394) मनुस्मृति 3 13

(395) विष्णु धर्मसूत्र 24 1 4

(396) पारस्कर गृहयसूत्र 1 4

(397) वशिष्ठ धर्मसूत्र 1 25

(398) पी०वी० काणे, धर्मशास्त्र का इतिहास भाग 1 पृष्ठ 277

(399) संस्कार प्रकाश पृष्ठ 752

(400) बौधायन धर्मसूत्र 2 1 11 दृष्ट्व्य हरिदत्त वेदालकार, हिन्दू विवाह का सक्षिप्त इतिहास पृष्ठ 117

(401) वशिष्ठ धर्मसूत्र 1 26-27

(402) मनु स्मृति 3 15-16

(403) विष्णु धर्मसूत्र 26 6-7

(404) पारस्कर गृह्यसूत्र 1 4 12

(405) याज्ञवल्क्य स्मृति 1.56

(406) कूर्म पुराण 2 15 10

(407) ऋग्वेद 1.162 19

(408) तैत्तिरीय सहिता 4 6 9.3

(409) मनुस्मृति 3 5

(410) गौतम धर्मसूत्र 1.4 3

(411) कूर्म पुराण 2 21 38

(412) विष्णु पुराण 1 15 63

(413) वामन पुराण 49-50

(414) ब्रह्माण्ड पुराण 3 30 25-27

(415) कूर्म पुराण 2 23 92

(416) मनु स्मृति 9 29-30, 5 164-165

(417) भविष्य पुराण 13 36-41

(418) भागवत पुराण 7 2 29

(419) स्कन्द पुराण ब्रह्मखण्ड, धर्मारण्य परिच्छेद अध्याय 7 विशेष दृष्ट्व्य पी० वी० काणे धर्मशास्त्र का इतिहास भाग–2, पृ० 319

(420) कूर्म पुराण 2 33 110

(421) कूर्म पुराण 2 33 111

(422) कूर्म पुराण 2 11 28

(423) कूर्म पुराण 2 13 34

(424) कूर्म पुराण 2 13 35

(425) कूर्म पुराण 2.13 37

(426) कूर्म पुराण 2 13.36

(427) कूर्म पुराण 2.13 38

(428) कूर्म पुराण 2 13.39-42

(429) कूर्म पुराण 2.13 43-45

(430) कूर्म पुराण 2 23 1-2

(431) कूर्म पुराण 2 23 2-23

(432) कूर्म पुराण 2 23 38

(433) कूर्म पुराण 2 23 42

(434) पद्म पुराण सृष्टि खण्ड 10 3

(435) कूर्म पुराण 2 23 6

(436) कूर्म पुराण 2 23 9

(437) कूर्म पुराण 2 23 14

(438) कूर्म पुराण 2 23 10-12

(439) कूर्म पुराण 2 23 13

(440) कूर्म पुराण 2 23 10

(441) कूर्म पुराण 2 23.28

(442) कूर्म पुराण 2 23 15

(443) कूर्म पुराण 2 23 30

(444) कूर्म पुराण 2 23 69

(445) कूर्म पुराण 2 13 68

(446) कूर्म पुराण 2 23 66-67

(447) कूर्म पुराण 2 23 37

(448) कूर्म पुराण 2.23 70

(449) कूर्म पुराण 2 23 71

(450) कूर्म पुराण 2 23 72

(451) कूर्म पुराण 2 23.74

(452) कूर्म पुराण 2 23 19-20

(453) कूर्म पुराण 2 23 21

(454) कूर्म पुराण 2 23 76

(455) कूर्म पुराण 2 23 75

(456) कूर्म पुराण 2 23 32

(457) कूर्म पुराण 2 23 33

(458) कूर्म पुराण 2 23 26

(459) कूर्म पुराण 2 23 28

(460) कूर्म पुराण 2 23 30-35

(461) कूर्म पुराण 2 23 47

(462) कूर्म पुराण 2 23 25

(463) कूर्म पुराण 2 23 42

(464) कूर्म पुराण 2.23 43

(465) कूर्म पुराण 2.23.44

(466) कूर्म पुराण 2.23 45-46

(467) कूर्म पुराण 2 23 48-49

(468) कूर्म पुराण 2 23 5

(469) कूर्म पुराण 2.23.53

(470) कूर्म पुराण 2.23 54

(471) कूर्म पुराण 2 23 55

(472) कूर्म पुराण 2 23.57

(473) कूर्म पुराण 1 2 25

(474) मनु स्मृति 10 84

(475) कूर्म पुराण 2 25 7

(476) कूर्म पुराण 2 25 8

(477) कूर्म पुराण 2 25 9

(478) महाभारत शान्ति पर्व 76 4-8

(479) बौधायन 2 2 82-83

(480) कृत्यकल्प गृहस्थ, पृष्ठ 194-195

(481) काणे धर्मशास्त्र भाग–2 पृ० 1003

(482) मनु 10 117

(483) सचाऊ पूर्वोद्धृत पृ० 136

(484) मनु स्मृति 10 98

(485) कूर्म पुराण 2 30 2-3

(486) कूर्म पुराण 2.30 6

(487) कूर्म पुराण 2 30 8

(488) कूर्म पुराण 2 30 12

(489) कूर्म पुराण 2 30 3

(490) कूर्म पुराण 2.30 14-15

(491) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1 9 25 13

(492) वशिष्ठ 26.25-26

(493) गौतम 22 8

(494) मनुस्मृति 11 74

(495) कूर्म पुराण 2 30 20

(496)आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1 9 25 12

(497) मनुस्मृति 11 72

(498) याज्ञवल्क्य 3 284

(499) गौतम 22 3

(500) याज्ञवल्क्य 3 243

(501) मनुस्मृति 11 78 & 81

(502) कूर्म पुराण 2 23 22

(503) कूर्म पुराण 2 23 23-24

(504) याज्ञवल्क्य 3 249

(505) पराशर 12 65 67

(506) कूर्म पुराण 1.2 30.21-22

(507) कूर्म पुराण 2 30 8

(508) कूर्म पुराण 1 1 1 6

(509) मनुस्मृति 11.93

(510) शतपथ ब्राह्मण्ड 5 1 5.28

(511) प्रायश्चित विवके पृष्ठ 93

(512) काणे धर्मशास्त्र का इतिहास भाग तृतीय पृष्ठ 1

(513) गौतम धर्मसूत्र 23.11

(514) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1 9 25.3

(515) बौधायन धर्मसूत्र 2 21

(516) मनुस्मृति 11 90-91

(517) याज्ञवल्क्य 3 253

(518) गौतम धर्मसूत्र 23 11

(519) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1 9 25 3

(520) बौधायन धर्मसूत्र 2 21

(521) मनुस्मृति 11 90-91

(522) याज्ञवल्क्य 3 254

(523) वशिष्ठ धर्मसूत्र 29/19

(524) कूर्म पुराण 2 30 8

(525) प्रायश्चित प्रकरण पृष्ठ 72 प्रायश्चित विवके पृष्ठ 11

(526) महाभारत 1 28 3

(527) तैत्तिरीय आरण्यक 2 15

(528) तैत्तिरीय सहिता 1 7 11

(529) ऐतरेय्र ब्राह्मण 7 29.2

(530) शतपथ ब्राह्मण 2 3.1 39

(531) वशिष्ठ धर्मसूत्र 3 32-34

(532) गौतम धर्मसूत्र 10.1.2

(533) वशिष्ठ धर्मसूत्र 17 84-87

(534) कूर्म पुराण 2.30.8

(535) गौतम धर्मसूत्र 1.2.56

(536) विष्णुधर्मसूत्र 1 2 56, 32 1 2

(537) कूर्म पुराण 2 12 26 27

(538) याज्ञवल्क्य 2 131

(539) प्रायश्चित मयूख पृ० 73

(540) कूर्म पुराण 2 32 43

(541) कूर्म पुराण 2 32 41

(542) कूर्म पुराण 2 32 45

(543) कूर्म पुराण 2 32 46

(544) कूर्म पुराण 2 32 48

(545) कूर्म पुराण 2 32 49

(546) कूर्म पुराण 2 32 49

(547) कूर्म पुराण 2 32 49

(548) कूर्म पुराण 2 32 50

(549) कूर्म पुराण 2 32 51

(550) कूर्म पुराण 2 32 51

(551) कूर्म पुराण 2 32.51

(552) कूर्म पुराण 2.32 52

(553) कूर्म पुराण 2 32 52

(554) कूर्म पुराण 2 32 53

(555) कूर्म पुराण 2 32.53

(556) कूर्म पुराण 2 32.53

(557) कूर्म पुराण 2 32 54

(558) कूर्म पुराण 2 32 54

(559) कूर्म पुराण 2 32 55

(560) कूर्म पुराण 2 32 59

(561) कूर्म पुराण 2 32 59

(562) कूर्म पुराण 2 19 31

(563) कूर्म पुराण 2 4 138

(564) कूर्म पुराण 2 25 19

(565) कूर्म पुराण 2 18 120

(566) कूर्म पुराण 2 22 7

(567) कूर्म पुराण 2 24 8-9

(568) कूर्म पुराण 2 30 9

(569) कूर्म पुराण 2 30 10

(570) कूर्म पुराण 2.30 11

(571) कूर्म पुराण 2 23.6

(572) कूर्म पुराण 2 33 7

(573) कूर्म पुराण 2 33.5

(574) कूर्म पुराण 2.33.63-65

(575) कूर्म पुराण 2.33.66

(576) कूर्म पुराण 2 33.67

(577) कूर्म पुराण 2.33.68

(578) कूर्म पुराण 2 33 70

(579) कूर्म पुराण 2 33 21

(580) कूर्म पुराण 2 33 35

(581) कूर्म पुराण 2 33 86

(582) कूर्म पुराण 2 33 23-24

(583) कूर्म पुराण 2 33 6

(584) कूर्म पुराण 2 33 4

(585) कूर्म पुराण 2 33 14

(586) कूर्म पुराण 2 33 76

(587) कूर्म पुराण 2 33 77

(588) कूर्म पुराण 2.33 32

(589) कूर्म पुराण 2 33 71

(590) कूर्म पुराण 2 33.72

(591) कूर्म पुराण 2 33 73

(592) कूर्म पुराण 2 33 82

(593) कूर्म पुराण 2 33 83

(594) कूर्म पुराण 2 33 84

(595) कूर्म पुराण 2 33 85

(596) कूर्म पुराण 2 33.87

(597) कूर्म पुराण 2.33.88-89

(598) कूर्म पुराण 2 33 90-92

(599) कूर्म पुराण 2 33 93

(600) कूर्म पुराण 2 33 95-96

(601) कूर्म पुराण 2 33 97-100

(602) कूर्म पुराण 2 33 102

(603) कूर्म पुराण 2 33 105

(604) कूर्म पुराण 2 33 106-107

(605) कूर्म पुराण 2 33 105-111

(606) कूर्म पुराण 1 16

(607) कूर्म पुराण 2 25

(608) कूर्म पुराण 1 5 17-21

(609) कूर्म पुराण 2 17 42-43

(610) कूर्म पुराण 2 24 13

(611) कूर्म पुराण 2 13.29

(612) कूर्म पुराण 2 26 52

(613) गौतम धर्मसूत्र 2.25 2

(614) आपस्तम्ब धर्मसूत्र 1 2 34

(615) कूर्म पुराण 1 2.36

(616) कूर्म पुराण 2 25 3-4

(617) कूर्म पुराण 1.2 37-38

(618) कूर्म पुराण 2 15 2

(619) कूर्म पुराण1.2.20

(620) कूर्म पुराण 1 2 37

(621) कूर्म पुराण 2 25 8

(622) रघुवश 16 2

(623) भविष्य पुराण ब्रह्मपर्व 188 14 भविष्य पुराण 1 10 13

(624) कूर्म पुराण 1 2 2 64 9

(625) कूर्म पुराण 2 26 46

(626) कूर्म पुराण 1 2 43, 1 2 15

(627) कूर्म पुराण 1 2 34

(628) वामन पुराण 13 12

(629) भविष्य पुराण 2 4 41, 2 9 3

(630) भविष्य पुराण 2 12 3

(631) वायु पुराण 2 25 9

(632) कूर्म पुराण 2 17 6

(633) तैत्तिरीय सहिता 4 5 4 2

(634) भविष्य पुराण 191 15

(635) कूर्म पुराण 2 16 82

(636) वाजसनेयी सहिता 20 6

(637) कूर्म पुराण 1.2 38

(638) भविष्य पुराण ब्राह्मपर्व 40 46

(639) स्कन्द पुराण 4 40 113, 7.1 207 33, 17 63

(640) कूर्म पुराण 2 12 5

(641) कूर्म पुराण 2 12 9

(642) भविष्य पुराण 3 21 25

(643) भविष्य पुराण 1 2 33

षष्ठ अध्याय

कूर्म पुराण में वर्णित धार्मिक जीवन

कूर्म पुराण में वर्णित धार्मिक जीवन

कूर्म पुराण मे ऐसा उल्लेख किया गया है कि ब्राम्हणो को नित्य धर्म अर्थ एव लाभ की पूर्ति हेतु नियम पूर्वक लगे रहना चाहिए परन्तु धर्म से रहित काम या अर्थ का मन से विचार नही करना चाहिए[1]। धर्म के कारण कष्ट पाते हुए भी अधर्म का आचरण नही करना चाहिए। देव स्वरूप धर्म ही सभी प्राणियो का भगवान एव गति है[2]। वेदो एव देवो की निन्दा नही करनी चाहिए यदि कही निन्दा हो रही हो तो दूर रहना चाहिए, क्योकि धर्म का अध्ययन एव अध्यापन करने वाले को ब्रह्मलोक मे प्रतिष्ठा प्राप्त होती है[3]। यदि कोई ब्राह्मण (व्यक्ति) इस जप, तप, व्रत इत्यादि दैनिक नित्य विहित कर्मो को नास्तिकता एव आलस्य के कारण नही करता, वह घोर नरको मे जाता है तथा उसे काक योनि मे जन्म लेना पडता है[4]। इस प्रकार ईश्वर की प्रसन्नता के लिए विहित कर्मो को करना चाहिए[5]। आलोचित पुराण मे श्राद्ध के सम्बन्ध मे ऐसा उल्लेख है कि चन्द्र और सूर्य ग्रहण होने एव बान्धवो के मरने पर जो व्यक्ति नैमित्तिक श्राद्ध नही करता वह व्यक्ति नरक मे जाता है[6]। तिथियो एव नक्षत्रो का भी बडा महत्व है उदाहरणार्थ–कृतिका नक्षत्र मे श्राद्ध करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है । रोहिणी मे श्राद्ध करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है । रोहिणी मे श्राद्ध करने से सन्तान, पुष्य नक्षत्र मे श्राद्ध करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है[7]। इसी प्रकार प्रत्येक तिथियो का अलग–अलग फल प्राप्त होता है । इसी प्रकार साप्ताहिक दिनो मे भी श्राद्ध फल का उल्लेख है कि रविवार को आरोग्य, मगल को सर्वत्र विजय इत्यादि[8]। आलोचित पुराण मे तीर्थ श्राद्ध का भी उल्लेख है कि गगा, प्रयाग एव अमरकण्टक मे किया गया श्राद्ध अक्षयफल दायक है। गया तीर्थ का तो विशष महत्व है कि यदि किसी प्रसग वश भी व्यक्ति **गया** जाकर श्राद्ध करे, वह पितरो को तारेगा ही स्वय भी परम गति को प्राप्त करेगा[9]। गृहस्थो के लिए यह श्रेष्ठ धर्म है इससे भिन्न धर्म को अपधर्म कहा गया है[10]। ऐसा भी उल्लेख है कि यह श्राद्ध एवं देव सम्बन्धी पवित्र विचार जो व्यक्ति ब्राह्मणो को सुनाता है वह महेश्वर देव को प्राप्त करता है[11]। आलोचित पुराण मे तीर्थो का भी बडा विस्तृत विवरण एव इनके सेवन से फल की प्राप्ति भी होती है

जैसे कि कावेरी, नामक महानदी पापो को नष्ट करती है उसमे स्नान करने से एव नर्मदा के सगम पर महादेव की अर्चना करने से रूद्र लोक मे आदर की प्राप्ति होती है [12]। कूर्म पुराण मे कर्म की प्रधानता का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि जो कर्म को कर्तव्य समझकर नित्य प्रति करता है वह कर्म मोक्षदायक होता है[13]। निष्काम कर्म से मनुष्य के इस जन्म एव पूर्व जन्म का पाप क्षीण हो जाता है तथा मन की प्रसन्नता के साथ मनुष्य ब्रहाज्ञानी हो जाता है[14]। आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि जो श्राद्ध देवता सम्बन्धी कार्य, रात्रि या दिन मे नदियो के किनारे तथा मन्दिर मे दम्भ एव मात्सर्य, को छोडकर ईश का जप करता है उसे परमगति की प्राप्ति होती है[15]।

त्रिदेव की परिकल्पना

कूर्म पुराण के अनुसार सत्य, रज एव तम के योग से परमात्मा की ब्रह्मा, विष्णु, एव महेश्वर नामक तीन मूर्तियॉ कही गयी है [16]। कार्य के अनुरोध से एक ही प्रभु की तीन मूर्तियॉ है [17]। यदि उस अविनाशी मोक्ष नामक स्थान की इच्छा हो तो इन तीनो देवो का वर्णाश्रम प्रयुक्त धर्म द्वारा पूजन करना चाहिए [18]।

जो व्यक्ति नित्य एक समय, दो समय या तीन समय योग करते है उन्हे महेश्वर स्वरूप जानना चाहिए [19]।

योग के प्रकार

योग दो प्रकार के होते है अभाव योग एव महायोग सभी योगो मे उत्तम महायोग है[20]। जिसमे किसी प्रकार का आभास नही होता शून्यमय स्वरूप का चिन्तन होता है । जिसके द्वारा आत्मा का साक्षात्कार होता है उसे अभाव योग कहते है [21]। जिसमे नित्यानन्द स्वरूप आत्मा एव मुझसे अभेद की प्रतीति होती है उसे परमेश्वर स्वरूप महायोग कहा गया है[22]। योग से ज्ञान की उत्पत्ति एव ज्ञान से योग की प्रवृत्ति होती है इस प्रकार योग एव ज्ञान से युक्त पुरूष को कुछ भी प्राप्त करना शेष नही रहता [23] ।

योग विधान

"श्रद्वायाम" इस मन्त्र से हुतरनुमन्त्रण करना चाहिए तदुपरान्त "ब्रह्मणा" इत्यादि मन्त्र से अपनी आत्मा का अक्षरतत्व से योग करना चाहिए । सभी यागो मे आत्मयाग को श्रेष्ठ कहा गया है ऐसा उल्लेख है कि जो व्यक्ति इस विधि द्वारा (आत्मयाग) करता है वह ब्रह्मधाम से जाता है [24]।

योगी के प्रकार- भौतिक, साख्या, अत्याश्रमी ये तीन प्रकार के होते है [25]।

ध्यान विद्वान लोग 'ॐ' प्रणव द्वारा ईश्वर का ध्यान करते है[26]।

सन्ध्या ब्राह्मसध्य से कसे एकग्रता पूर्वक प्रात काल एव सायकाल सन्ध्या करनी चाहिए [27]।

योग

प्राणायाम, ध्यान, प्रत्याहार, धारणा, समाधि, यम, नियम, आसन एव अन्तर्वृत्तियो के निरोध द्वारा ईश्वर मे चित्त की एकाग्रता ही योग है [28]। अहिसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एव अपिरग्रह को यम कहा गया है । इन्ही यम के द्वारा मनुष्य के चित्त की शुद्धि होती है [29]।

अहिंसा

कर्म, मन एव वाणी से किसी भी प्राणी को कष्ट न पहुँचाना ही अहिसा है [30] । इससे बडा कोई नहीं है कहा जाता है कि विधि पूर्वक हिसा भी अहिसा होती है [31]।

सत्य

सत्य के द्वारा ही सब कुछ की प्राप्ति होती है यर्थाथ ही सत्य है [32]।

स्तेय

चोरी से अथवा बलपूर्वक किसी के द्रव्य का अपहरण ही स्तेय है । इस आचरण को न करना ही धर्म है [33]।

ब्रह्मचर्य

प्रत्येक अवस्था मे कर्म, मन एव वाणी द्वारा मैथुन न करना ही ब्रह्मचर्य है [34]।।

अपरिग्रह

आपत्तिकाल मे भी इच्छापूर्वक द्रव्य ग्रहण न करना अपरिग्रह कहा जाता है [35]।

नियम

तप, स्वाध्याय, सन्तोष, शौच एव ईश्वर को पूजा ही नियम है । इसी से योग की सिद्धि होती है [36]।

तप

वेदान्त, शतरूद्रीय एव प्रणव इत्यादि को सत्वसिद्धिदायक स्वाध्याय कहते है [37]।

स्वाध्याय के भेद

वचिक, उपाशु एव मानस मे भेद से ये तीन प्रकार के होते है इसमे स्वाध्याय को श्रेष्ठ कहा गया है [38]।

वाचिक

दूसरे सुनने वालो को स्पष्ट शब्द का ज्ञान कराने वाले स्वाध्याय के वाचिक कहा जाता है [39]।

उपाशु

ओठो मे केवल स्पन्दन होने के कारण दूसरो को शब्द का ज्ञान न कराने वाले स्वाध्याय को उपाशु कहते है। यह वाचिक जप से सहस्त्र गुना उत्तम कहा गया है [40]।

मानस

बिना किसी प्रकार के स्पन्दन के शब्दो के चिन्तन को मानस स्वाध्याय कहा जाता है[41]।

प्राणायाम

अपने शरीर से उत्पन्न होने वाले वायु को प्राण कहते है एव उसके निरोध को आयाम कहते है[42]। उत्तम, मध्यम एव अधम भेद मे तीन प्रकार के होते है । परन्तु सगर्भ एव अगर्भ भेद से दो प्रकार के है [43]।

पण्वादि का बारह बार जप करने तक के प्राण निरोध को मन्द, चौबीस मात्रा के प्राण निरोध को मध्यम, एव छत्तीस मात्रा के प्राण निरोध को उत्तम कहा गया है [44]। इन तीनो प्रकार के प्राणायाम को क्रमश स्वेद, कम्पन, उत्थान को उत्पन्न करते है और इसके कारण मनुष्यो को आनन्द पूर्वक उत्तमोत्तम (तत्व) का सयोग प्राप्त होता है [45]।

सगर्भ प्राणायाम

प्राण धारण पूर्वक व्याहृति, प्रणव एव शीर्षमन्त्र सहित गायत्री का तीन बार जप करने को (सगर्भ) प्राणायाम कहा जाता है [46]।

मन को नियन्त्रण करने वाले योगियो ने शास्त्रो मे रेचक, पूरक, कुम्भक प्राणायाम को कहा है [47]। वायु को सतत बाहर निकालने को रेचक, उसके निरोध को पूरक एव साम्य भाव से अर्थात निश्वास निकालते या ग्रहण न करने की स्थिति को कुम्भक कहा है [48]।

प्रत्याहार

विषयो मे विचरण करने वाली इन्द्रियो के निग्रह को प्रत्याहार कहते है [49]।

धारणा

हृदयकमल, नाभिप्रदेश, मूर्द्धा, पर्वतशिखर अर्थात सन्धि स्थानो तथा इसी प्रकार के अन्य स्थानो पर चित्त को रोकने को धारणा कहा जाता है [50]।

ध्यान

चित्त की एकाग्रता प्राप्त करने के उपरान्त अन्य किसी प्रत्यय से ससृष्ट न होते हुए चित्त की वृत्ति के सतत प्रवाह को विद्वान लोग ध्यान कहते है [51]।

समाधि

देशालम्बन रहित चित्त की एकाग्रता समाधि होती है[52]। बारह प्राणायाम तक चित्त पर्यन्त ध्यान, एव बारह ध्यान पर्यन्त (चित्त के निरोध को) समाधि कहा गया है [53]।

आसन

स्वस्तिकासन, पद्मासन अर्द्धासन भेद से आसन तीन प्रकार के होते है । सभी साधनो मे इसे उत्तम साधन बताया गया है[54]।

पद्मासन विधान

दोनो जघो के ऊपर दोनो पैरो को रखकर बैठने को पद्मासन कहा जाता है [55]।

अर्धासन

एक पैर को किसी एक जघे पर रखकर बैठने को अर्धासन कहा जाता है [56]।

स्वास्तिकासन

दोनो पैरो जघो के भीतर करके बैठने को स्वास्तिकासन एव पालथी मारकर बैठना कहा जाता है [57]।

सांख्ययोग

(1) योग सख्या (2) विमल सख्या योग सहित साख्य से पुरूषो को विमुक्ति की प्राप्ति होती है। विमल साख्य को मोक्ष का साधन बतलाया गया है [58]।

सांख्य दर्शन

साख्य दर्शन के अनुसार सर्वव्यापी शुद्ध ज्ञान एव आनन्द स्वरूप नित्य निर्मल नित्य अद्वितीय है [59] ।

ज्ञानयोग

ज्ञानयोग के अनुष्ठान से ही महादेव का दर्शन होता है। अन्य कोई सैकडो कल्पो मे भी महादेव का दर्शन नही कर पाता [60]। अथवा जिस विद्या द्वारा साक्षात् महादेव का ज्ञान होता है उसी को ज्ञान कहा गया है[61]।

योग करने के स्थान

भली–भॉति सुरक्षित, सुन्दर, पवित्र स्थान, पर्वत की गुफा, नदी का तट, पवित्र देश, देव मन्दिर सुन्दर पवित्र गृह एव जन्तुओ से रहित स्थान पर आत्मा को योगयुक्त करना चाहिए [62]।

योग के लिए वर्जित स्थान

अग्नि के समीप, जल मे सूखे पत्तो के ढेर के मध्य, जन्तुओ से भरे स्थान श्मशान, टूटे–फूटे घर, चौराहा, शब्द एव भययुक्त स्थान, चैत्य के समीप, दीमको से पूर्ण स्थान, अशुभ स्थान दुर्जनो से आक्रन्त, एव मच्छड इत्यादि से परिपूर्ण स्थानो मे तथा शरीर सम्बन्धी कष्ट होने पर, मन की अस्वस्थता की दशा मे विरूद्व देश और काल मे योगसाधन नही करना चाहिए[63]।

त्रिवर्ग साधन

इस प्रकार मनुष्यो के लिए धर्म अर्थ, काम स्वरूप साधन को सिद्व करते हुए देवो का पूजन नित्य प्रति करना चाहिए [64]। इस प्रकार कहा गया है कि जितेन्द्रिय, यज्ञशील, देशभक्त मनुष्य ब्रह्मलोक मे प्रतिष्ठा पाता है [65]।

शिव प्रमुख देवता

आलोचित पुराण मे शिव ही एक मात्र देवता है जिनकी आज्ञा से सनातम, सर्वात्मा सभी लोको का निर्माण, अद्वितीय रक्षक (शिव) सभी लोको के सहारकर्त्ता है [66]।

विद्या

ईश्वर की पराशक्ति को विद्या कहते है। ईश्वर योगियो के हृदय मे रहने वाली माया रूपी कल्मष को इसी विद्या के द्वारा ही दूर करते है [67]। यही ईश्वर ही सम्पूर्ण शक्तियो के प्रवर्तक और निवर्तक है इन्हे ही सभी का आधार एव अमृत का निधान कहा गया है[68]। आलोचित पुराण के अनुसार जिस बुद्धि से मोहरूपी कल्मष को दूर कर उत्कृष्ट तत्व का साक्षात्कार होता है वह विद्या शिव की अनुगामिनी है [69]। आलोचित पुराण के एक स्थान पर शिव को अद्वितीय कवि, एव रूद्र, प्राण, वृहत, हरि अग्नि, ईश, इन्द्र, मृत्यु, वायु, चेकितान, धाता, आदित्य एव अनेक रूपो की कल्पना की गयी है [70]। सर्वदा, मन, कर्म, वाणी द्वारा शिव की आराधना करने से श्रेष्ठ पद की प्राप्ति होती है [71]। शिव की माया के द्वारा ही सूक्ष्म तमोगुण से नित्य सासरिक जन बार–बार इस घोर ससार सागर मे उत्पन्न होते है [72]। इसलिए अनन्य भक्ति एव सम्यक ज्ञान द्वारा जन्मरूपी बन्धन से मुक्ति के लिए उसे ब्रह्म की खोज करना चाहिए[73]।

कूर्म पुराण मे शकर को शूलधारी के रूप मे अर्थात सृष्टि के सहारक की कल्पना की गयी है[74]। ऋग्वेद के अनुसार रूद्र ऐसे तेज तथा भयानक बाणो को धारण करते है जो आकाश तथा पृथ्वी तक जाते है तथा ये ऐसे अस्त्र–शस्त्रो को रखते हैं जिससे पशुओ तथा मनुष्यो का वध किया जाता है [75]। शतरूद्रीय मे रूद्र का स्वरूप और अधिक विकसित दिखलाई पडता है । उनका शिव स्वरूप उनके रौद्र स्वरूप से पृथक दिखलाया गया है । शिव को पशुओं की रक्षा के कारण पशुप भी कहा गया है [76]। आलोचित पुराण के अनुसार रूद्र मे सदा ही ब्राह्मी, माहेश्वरी एव अक्षर सम्बन्धी तीन प्रकार की भावनाएँ विद्यामान रहती है [77]। पद्म पुराण मे इसी एकता की ओर सकेत करते हुए सती ने कहा कि यदि रूद्र मे देवत्व है । और शिव सर्वव्यापी है तो शकर अवश्य ही इस यज्ञ को नष्ट कर दे [78]। आलोचित पुराण मे भी इस प्रकार की कथा का उल्लेख है कि पूर्व काल मे शम्भु से शापित प्रचेता के पुत्र राजा दक्ष ने पूर्व वैर के कारण शकर की निन्दा कर गगाद्वार मे यज्ञ किया[79]। तत्पश्पात् दधीचि ने बिना शिव के समस्त देवकुल को देख प्रचेता के पुत्र दक्ष से कहा कि ब्रह्म से लेकर पिशाच तक जिसकी आज्ञा का पालन करते है उनकी पूजा नही हो रही है।

तब दक्ष ने कहा कि यज्ञो मे आर्या सहित शकर के भाग एव मत्रो की परिकल्पना नही हुई है[80]। तब देवी पार्वती ने अपने पति महेश्वर से कहा कि मेरे पूर्वजन्म के पिता दक्ष आपकी निन्दा कर यज्ञ कर रहे है देवी के ऐसा कहने पर शिव ने वीरभद्र नामक पुरूष को उत्पन्न किया औ उसे आदेशित किया कि गगा तट मे दक्ष द्वारा किये जा रहे यज्ञ को नष्ट करो शिव के इस आदेश पर वीरभद्र ने अकेले ही दक्ष की यज्ञ को विनष्ट कर दिया[81]।

आलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि महेश्वर स्वय शक्ति का अवलम्बन कर लीला पूर्वक विविध शरीरो की सृष्टि एव सहार करते है इसलिए वेदवादी ब्राह्मण सभी यज्ञो मे शिव की पूजा करते है और रूद्र सम्पूर्ण कामनाओ को पूर्ण करते है। ब्रह्म, विष्णु, अग्नि, वरूण, एव समस्त देवता ऋषिगण एक मात्र रुद्र के ही भेद है[82]। महेश्वर की जिस स्वरूप मे आराधना की जाती है उसी स्वरूप मे धारण कर फल प्रदान करते है । अत महादेव की आराधना करने वाले को परम पद की प्राप्ति होती है [83]। पद्म पुराण[84] के अनुसार शिव की अष्ट मूर्तियो का उल्लेख मिलता है जो निम्नलिखित है (1) पृथ्वी, (2) वायु, (3) आकाश, (4) जल, (5) चन्द्रमा, (6) सूर्य, (7) अग्नि, (8) आत्मा ।

शिव महिमा

कूर्म पुराण के अनुसार शिव ही सर्वात्मा सनातन है, सभी लोको का एक मात्र निर्माणकर्त्ता अद्वितीय रक्षक एव सभी लोको का सहारकर्त्ता है। ईश्वर ही सभी वस्तुओ का अर्न्तयामी पिता है। मध्य अर्थात् सृष्टि के अनन्तर तथा प्रलयकाल मे सभी कुछ उसमे स्थित होता है किन्तु वह सर्वत्र है। वह उसकी माया से दिखलायी पडता है[85]। इस प्रकार सम्पूर्ण जगत के कर्त्ता के रूप मे विभिन्न नामो से जाना जाता है– जैसे हिरण्य गर्भ मर्ताण्ड, (सूर्य), ब्रह्मा, नारायण, रूद्र, वह्निदेव, वैश्वानर अग्नि, वरुण, वायुदेव, सोम, सूर्यदेव, इन्द्रदेव, यम, कुबेर, निर्ऋत्ति देव, ईशान देव, वामदेव, विनायक, कार्तिकेय, प्रजापति, श्री (लक्ष्मी) देवी सरस्वती, सावित्री देवी, पार्वती, अनन्त शेषदेव, सर्वत्तक, अग्नि वडवा, चौदह मनु मै हूँ [86]। इस तरह सब कुछ मै हूँ [87] सभी विद्याओ का नियामक प्राणियो का परमेश्वर ओकारमूर्ति ब्रह्मा हूँ । आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख है ईश्वर की आराधना मे जो पत्र, पुष्प, फल, जल प्रदान करता है वह भक्त प्रिय होता है[88]।

श्री भगवान ने मार्कण्डेय से कहा कि प्राचीन काल मे घोर एकार्णव अर्थात चारो ओर एक समुद्रवत अवस्था मे समस्त चराचर के विलीन हो जाने पर ब्रह्म तथा मुझको प्रवोधित करने के लिए स्वय शिव का प्रार्दुभाव हुआ था [89]।

शिव पूजा विधि

एक अन्य स्थान पर भी कहा गया है कि वर्णो एव आश्रमो के आचार से युक्त व्यक्तियो को ज्ञान एव भक्तियोग द्वारा महेश्वर की पूजा करनी चाहिए किसी अन्य प्रकार से नही [90]। क्रौञ्चदीप के निवासी भी यज्ञ, दान, समाधि व्रत उपवास, होम, स्वाध्याय, तर्पण, द्वारा महादेव की आराधना करते है [91]। पद्म पुराण के अनुसार शिव की पूजा विधि निम्न प्रकार है । पूजा की बेदी कोण, नवकोण, अथवा बारह कोण की बनानी चाहिए [92]। चन्दन की लकडी के पीढे पर कर्पूर का सिहासन स्थापित कर शिव की प्रतिष्ठा करे । जल एव क्षीर से स्नान कराने के बाद केशर, कस्तूरी, कर्पर, आदि से उनकी पूजा करे। कमल, करवीरक, कनैला, सफेद कमल आदि पुष्पो को ऊपर चढावे । सोना, चॉदी अथवा ताबे का आठ दल वाली पत्रिका भी शिव को अर्पित करना चाहिए [93]। शिव को धतूरे के फूल, तुलसी, बेलपत्र, पुष्पादि चढाकर पूजा करने का विधान है। बाघ, हिरण की चर्म के आसन पर पद्मासन या स्वास्तिकासन मुद्रा मे बैठकर पूजा करने का विधान है। शिवभक्त को मस्तक पर त्रिपुण्ड्र धारण करना आवश्यक है । जो व्यक्ति इस प्रकार भस्म को अपने सम्पूर्ण शरीर मे लगाकर ध्यान करता है उसके सभी पाप नष्ट हो जाते है[94] ।

शिव लिंग उत्पत्ति एवं पूजा

कूर्म पुराण के अनुसार कलियुग के देवता भगवान शिव है जिनके लिग की पूजा का विशेष महात्म्य है इस लोक मे लिगार्चन से बढकर कोई पुण्य एव भय का नाशक नहीं है । अत लोगो की भलाई के लिए शिव लिग की पूजा करनी चाहिए [95]। लय होने से लिग कहा जाता है [96]। आलोचित पुराण में लिग शब्द की उत्पत्ति विषयक उल्लेख इस प्रकार है। कि ब्रह्म एव विष्णु मे विवाद के बढने पर परमेष्ठी की मायावश प्रबोधित करने के लिए प्रलयकालीन अग्नि के तुल्य प्रकाशमान ज्वाला के समूह से परिपूर्ण क्षय एव वृद्धि से रहित तथा आदि मध्य और अन्त से रहित शिव स्वरूप श्रेष्ठ लिग उत्पन्न हुआ [97]। विष्णु द्वारा लिग

स्थापना की कक्षा प्राचीन काल मे जब ब्रह्मा यहॉ लिग लाकर स्नान करने चले गये थे उस समय उनके लाये हुए शिव लिग की विष्णु ने स्थापना कर दी तब ब्रह्मा ने विष्णु से कहा कि "आपने मेरे लिये इस लिग की स्थापना क्यो कि" तब विष्णु ने ब्रह्म से कहा– यत रुद्र के प्रति आपसे अधिक मेरी दृढ भक्ति है। किन्तु यह आपके नाम से ही प्रसिद्ध होगा [98]। इस प्रकार शिव लिग स्थापना प्रत्येक तीर्थो मे स्थानो अलग नामो से हुई जिसका बहुत महत्व है।

कृत्तिवासेश्वर लिंग

कूर्म पुराण मे बहुत से शिव लिगो का उल्लेख मिलता है जिसमे वाराणसी मे स्थित कृत्तिवासेश्वर लिग के सम्बन्ध ऐसा कहा जाता है कि प्राचीन काल मे एक दैत्य हाथी का रूप धारण कर शकर समीप नित्य उपासना करने वाले ब्राह्मणो को मारने आया तब शिव उन भक्तो के रक्षार्थ प्रकट हुए और हाथी के आकार वाले उसे राक्षस को मारकर उसके चर्म का वस्त्र धारण किया तभी से कृत्तिवासेश्वर हो गये इस प्रकार घोर कलियुग एव मनुष्यो के अधिक अधर्म युक्त होने पर जो लोग कृत्तिवासेश्वर का त्याग नही करते वे कृतार्थ हो जाते है। ऐसा उल्लेख है कि सहस्त्रो जन्मान्तर से अन्यत्र मोक्ष प्राप्त होता है या नही परन्तु वाराणसी के कृत्तिवास क्षेत्र से एक जन्म मे ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है[99]।

कपर्दीश्वर लिंग

वाराणसी मे कपर्दीश्वर लिग के सम्बन्ध मे ऐसा कहा जाता है कि एक भयकर रुपधारी व्याघ्र एक हरिणी का भक्षण करने के लिए उत्तम कपर्दीश्वर के पास आया, वह भयभीत मृगी प्रदक्षिणा करते–करते दौडती हुई अत्यन्त व्यग्र होने से व्याघ्र के वशीभूत हो गयी तो तीक्ष्ण नखो वाले उस व्याघ्र ने उसे फाडकर वह महा बलवान व्याघ्र मुनियो को देख अन्य एकान्त स्थान को चला गया । कपर्दीश के सम्मुख मरते ही वह मृगी आकाश मे सूर्य समान तीन नेत्रो वाली एव बैल पर सवार शिव स्वरुप पुरूषो से युक्त दिखलाई पडी जिस पर आकाश के देवता उसके सिर पर फूलो की वर्षा कर रहे थे। तभी वह स्वय गणेश्वर होकर तुरन्त अदृश्य हो गयी इस कपर्दीश्वर का लिग का स्मरण करने से सम्पूर्ण पाप शीघ्र दूर हो जाते है [100]।

गोकर्णेश्वर लिंग

गोकर्णेश्वर लिग तीर्थो मे श्रेष्ठ गोकर्ण तीर्थ मे स्थित है। यहॉ दर्शन कर मनुष्य इच्छित पदार्थ पाता है और रुद्र देव के प्रिय हो जाता है [101]।

विजय लिग

विजय लिग यह विजय नामक सुन्दर तीर्थ मे स्थित है [102]। यहॉ पर छ महीने सयत आहार करते हुये, ब्रह्मचर्य पूर्वक रहने पर परम पद की होती है ।

उत्तर गोकर्ण

उत्तरगोकर्ण मे त्रिशूलधारी देव का लिग है। यहॉ पर महादेव की आराधना करने से शिव सायुज्य की प्राप्ति होती है [103]।

जनार्दन लिग

जर्नादन लिग जहॉ स्थित है वहॉ स्नान करने से मनुष्य विष्णुलोक मे सम्मान प्राप्त करता है। इस लिग का महत्व इसलिए है कि नारायण देव ने अपने भक्त मुनियो को अपने पदस्वरुप उस लिग अपने स्वरुप का दर्शन कराया था [104]। इस प्रकार अनेक स्थानो अनेको शिव लिगो की प्राप्ति होती है। सम्पूर्ण लोगो को त्यागकर जो मनुष्य सदा शिव लिग की पूजा करते है शिव उन्हे उसी जन्म मे परम ऐश्वर्य की प्राप्ति कराते है [105]। आलोचित पुराण के अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि महेश्वर देव ही सूर्य के रुप मे भी प्रकाशित होते है [106]।

सूर्य देवता

कूर्म पुराण के अनुसार सूर्य को भी शिव को भॉति सभी के आत्मास्वरुप सभी लोको के नियामक, महादेव, प्रजापति, तीनो लोको के मूलकारण एव उत्कृष्ट देवता के रूप मे कल्पना की गयी है। विष्णु की मूर्ति स्वरुप सूर्य के अश जो बारह आदित्य है वे ही सृष्टि कार्य को सम्पादित करते है[107]। वारह आदित्यो के नाम इस प्रकार हैं। इसी प्रकार देवो, आदित्यो, वसुओ, गन्धर्वो, अप्सराओ, ग्रामणी, सर्पो एव राक्षसो सहित सूर्य देव रथ पर

अधिष्ठित है। वारह आदित्य उन्हे आध्यापित करते है। ऋषिगण वैदिक मत्रो द्वारा जिनकी पूजा करते है। वारह रश्मियॉ सूर्य रश्मि का सग्रह करती है, बारह राक्षस, सूर्य देव के आगे चलते है। बारह नाग क्रमश सूर्य को ढोते है। बारह गन्धर्व सूर्य के समीप विभिन्न स्वरो मे गान करते है। बारह अप्सराये क्रमश वसन्तादि ऋतुओ मे विभिन्न नृत्यो द्वारा इन अविनाशी महादेव सूर्य को सन्तुष्ट करती है[108]। इसी प्रकार क्रमश दो–दो महीनो मे देवगण सूर्य मे रहते है और अपने तेज से सूर्य को तृप्त करते है। सूर्य इन्ही देवो के वीर्य, तप, योग से सत्य के अनुसार ताप देते है [109]। ऐसा प्रतीत होता है कि सूर्य का स्वत अपना कोई तेज नही है । आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि वालखिल्य मुनिगण सूर्य को घेरकर उदयाचल मे अस्ताचल तक ले जाते है। ये ही बारह आदित्य तपते, बरसते, प्रकाश करते बहते एव सृष्टि करते है तथा जो भी मनुष्य इनकी पूजा अर्चना करता है उसके सभी अशुभ कर्मो को नष्ट करते है [110]। सूर्य दिन और रात्रि की व्यवस्था के कारण है। सूर्य सदा पितरो, देवो एव मनुष्यो को पुष्ट करते है[111]। आलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि मे उपवास कर सप्तमी को सूर्य की पूजा से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [112]।

आलोचित पुराण मे एक स्थान पर ऐसा उल्लेख है कि शाकद्वीप के लोग भी व्रत, उपवास द्वारा सभी लोको के एक मात्र साक्षी के रूप मे सूर्य की नित्य आराधना करते है[113]। पद्म पुराण के अनुसार सूर्य की पूजा अर्ध के द्वारा की जाती है अर्ध को निम्नलिखित वस्तुओ के द्वारा देने का विधान पाया जाता है (1) जल (2) दूध (3) कुश (4) चावल (5) हवि (6) अक्षत (7) पुष्प (8) सफेद तिल (9) दूब (10) कुकुम (11) रोचना (12) मधु। साधारणतया जल, अक्षत, कुश, तिल, आदि को हाथ मे लेकर सूर्य को देखते हुए अजुली से अर्घ दिया जाता है परन्तु पात्र मे भी अर्घ की वस्तु को डाल कर भी अर्घ दिया जाता है[114]।

ब्रह्मा की पूजा

कूर्म पुराण मे ब्रह्म को सृष्टिकर्त्ता के रूप जाना जाता है[115]। सत्व के योग से सर्वोच्च परमात्मा की मूर्ति है [116]। इस प्रकार ब्रह्मा कार्य की दृष्टि से पूजनीय है और समस्त प्राणियो को वर्णाश्रम के धर्म द्वारा ब्रह्मा की पूजा करनी चाहिए [117]।

पद्म पुराण के अनुसार ब्रह्मा की पूजा का उल्लेख इस प्रकार मिलता है कि कार्तिक पूर्णिमा को ब्रह्मा की चर्तुमखी मूर्ति को रथ पर बिठाकर उनको सारे नगर मे घुमाना चाहिए। नगर मे उनकी रथ यात्रा के बाद उनकी पूजा–अर्चना करके ब्रह्मणो को भोजन कराना चाहिए। ब्रह्मा के रथ को जो लोग खीचते है उन्हे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है[118]। सी पुराण के एक अन्य सीान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि केवल पुष्कर क्षेत्र मे ही ब्रह्मा एक मन्दिर है जिसमे इनकी पूजा–अर्चना होती है ऐसा ज्ञात होता है कि विष्णु तथा शिव की पूजा के समक्ष ब्रह्मा की पूजा का विशेष स्थान प्राप्त न हो सका और कालक्रम से इसकी लोकप्रियता नष्ट हो गयी[119]। आलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि सुमेरू पर्वत के ऊपर ब्रह्मा की चौदह सहस्र योजन की महापुरी है वहा ब्रह्मा निवास करते है और योगी मुनि विष्णु एव शकर उनकी उपासना करते है [120]।

विष्णु की पूजा

कूर्म पुराण मे कूर्म रूपी विष्णु को सृष्टि पालक के रूप जाना जाता है[121]। रज के योग से सर्वोच्च परमात्मा की मूर्ति है [122]। इस तरह सृष्टि के पालन कर्ता की दृष्टि से विश्लेश्वर विष्णु को भी एक ही परमात्मा की मूर्ति कहा गया है इसलिए समस्त प्राणियो को अपने–अपने धर्मानुसार इनकी पूजा करनी चाहिए [123]। आलोचित पुराण के अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि विष्णु के नाभि से विमल कमल की उत्पत्ति हुई जिससे ब्रह्मा की उत्पत्ति होती जिसके कारण विष्णु को सम्पूर्ण ससार के प्राणियो के श्रेष्ठ नियामक के रूप जाना जाता है [124]। आलोचित पुराण के अनुसार शाकद्वीप को आवृत कर क्षीर सागर स्थित है और उसके मध्य मे श्वेतद्वीप है वहॉ के लोग नारायण परायण है वे लोग श्वेत वर्ण के एव नित्य विष्णु की आराधना करने वाले होते है [125]। अन्य कुछ लोग महेश्वर के भक्त होते है। वे मस्तक पर त्रिपुण्ड धारण करते है और अपने योग से उत्पन्न तेज के कारण गरूण पर सवारी करने वाले होते है[126]।

जर्नादन

कूर्म पुराण मे जर्नादन की पूजा का उल्लेख है कि जो मनुष्य शुक्ल पक्ष की एकादशी को निराहार रहकर द्वादशी को जर्नादन की अर्चना करता है वह महापापो से मुक्त हो जाता है[127]।

दुर्गा की पूजा

कूर्म पुराण मे दुर्गा पूजा का उल्लेख करते हुए यह कहा गया है कि कृष्णाष्टमी एव कृष्ण चर्तुदशी को महादेवी दुर्गा की पूजा करने के उपरान्त ब्राह्मण को भोजन कराने से (मनुष्य) समस्त पापो से मुक्त हो जाता है[128]। पद्म पुराण के अध्ययन से पता चलता है कि उस समय शक्ति पूजा का भी प्रचार था। इन्हे कई नामो से जाना जाता है—अम्बिका, दुर्गा, चडी, चडिका आदि अनेको नामो से अभिहित किया गया है[129]। परन्तु इनका लोकप्रिय प्रचलित नाम दुर्गा ही है। मत्स्य, वायु विष्णु तथा ब्रह्माण्ड पुराणो मे शक्ति के शताधिक नामो का उल्लेख है[130]।

लक्ष्मी की पूजा

कूर्म पुराण के अनुसार कमल सदृश बडे नेत्रो वाली सुन्दर शान्त मुख वाली प्राणियो को मोहित करने लक्ष्मी उत्पन्न हुई [131]। जिन्होने नारायण की प्रेरणा से प्राणियो को मोहित करने का कार्य किया। इस प्रकार लक्ष्मी की पूजा करनी चाहिए [132]। लक्ष्मी की पूजा करने से विपुल सम्पत्ति, पुष्टि, मेघा, यश एव बल की प्राप्ति होती है। अत लक्ष्मी की पूजा सभी प्राणियो को करनी चाहिए[133] । आलोचित पुराण के अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि लक्ष्मी की कामना करने वाले व्यक्ति को विधि पूर्वक पार्वती की पूजा करनी चाहिए तदुपरान्त शिव का पूजन कर एक वर्ष तक नित्य प्रति सहस्र नाम का जप करने से महादेव की कृपा से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है[134]।

देवी सती एवं पार्वती

कूर्म पुराण मे उत्पत्ति देवी पार्वती के उत्पत्ति के सम्बन्ध मे इस प्रकार का उल्लेख मिलता है कि ब्रह्मा ने मानस पुत्र मरीचि आदि की सृष्टि करने के उपरान्त स्वय ब्रह्मा मानस

पुत्रो के साथ तप करने लगे तभी उनके मुख से कालाग्नि सदृश भगवान शकर आधे शरीर मे नारी एव आधे भाग मे नर की आकृति मे रूद्र प्रकट हुए। 'अपना विभाग करो' ऐसा कहकर ब्रह्मा भय से अन्तर्हित हो गये। ब्रह्मा के इस प्रकार कहे जाने पर रूद्र ने स्त्री और पुरूष से दो भाग कर दिया। पुन पुरूष भाग को दस कर दिया एव एक को अर्थात ग्यारह भागो मे विभक्त कर दिया[135] मे एकादश रूद्र ही त्रिभुनेश्वर कहे जाते है कपालीश इत्यादि नामवाले ये एकादश रूद्र देवकार्य मे नियोजित है। रूद्र ने स्त्री भाग को श्वेत एव कृष्ण, सौम्य और असौम्य, शान्त एव अशान्त रूपो से कई भागो मे विभक्त किया वे ही विभूतिया पृथ्वी पर लक्ष्मी आदि शक्तियो के रूप मे प्रसिद्व है। शकर की शक्ति ईश्वराणी उन्ही के द्वारा विश्व मे व्याप्त है ईशानी ने अपने ही शकर से अलग कर लिया एव शकर के आदेश से ब्रह्मा के पास उपस्थित हुई तब ब्रह्मा ने कहा कि "दक्ष की पुत्री बनो" उनकी आज्ञा से वह दक्ष के यहॉ उत्पन्न हुई[136]। ब्रह्मा की आज्ञा से दक्ष ने वह देवी' 'सती' को रूद्र को दिया [137]। आलोचित पुराण के अनुसार सती ने दक्ष की निन्दा कर अपना शरीर त्याग दिया और पुन हिमवान से मेना की पुत्री बनी हिमवान ने भी रूद्र को पार्वती प्रदान किया। महेश्वर की वह देवी शिवा, सती एव हैमवती के रूप मे सुरो एव असुरो से पूजित है [138]। पार्वती ने हिमवान से कहा कि मैं ध्यान, कर्मयोग, भक्ति, एव ज्ञान द्वारा ही प्राप्त होती हूँ। दूसरे प्रकार अन्य करोडो कर्मो से नही[139]। जो व्यक्ति देवी के स्तोत्र को ब्राह्मणो के समीप पढता है वह सभी पापो से मुक्त हो जाता है[140]।

हैमवती

हैमवती वही है जो व्योम सज्ञा वाली श्रेष्ठ ज्ञान रूपा एव उत्कृष्ट इच्छा स्वरूपा महेश्वर की शक्ति मानी जाती है[141]। अनेक उपाधियो के सयोगवश उत्तम एव अधम रूप से शिव के समीप क्रीडा करती है[142]। वही यह सम्पूर्ण कार्य करती है यह जगत उसी का कार्य है। ईश्वर का कोई कार्य या करण अर्थात साधन नहीं होता[143]। आश्रय भेद से देवी की चार शक्तियॉ है[144]।

(1) शान्ति (2) विद्या (3) प्रतिष्ठा (4) निवृत्ति नाम से अभिहित किया गया है। इसीलिए परमेश्वर देव को चतुर्मूह कहा जाता है[145]। शिव इस परा (शक्ति) द्वारा स्वात्मानन्द

का उपभोग करते है। चारो ही वेदो मे चतुर्मूर्ति महेश्वर का वर्णन मिलता है[146]। यह सम्पूर्ण जगत उसी मे ओतप्रोत है। वेदवादी लोग उन्हे ही कालाग्नि, हर, रूद्र कहते है। इस प्रकार काल भूतो की उत्पत्ति एव प्रजाओ का सहार करता है। सभी काल के वशीभूत है। काल किसी के वश मे नही है [147]। महेश्वर की पतिव्रता, विश्वेश्वरी देवी को भोग्या एव शिव को भोक्ता कहा गया है[148]। अत विमुक्ति की इच्छा करने वाले को पार्वती का आश्रय ग्रहण करना चाहिए [149]। आलोचित पुराण मे हिमवान द्वारा की गयी स्तुति मे पार्वती के एक सहस्र आठ भागो का उल्लेख मिलता है[150]।

यम की पूजा

कूर्म पुराण के अनुसार यम की पूजा का भी महत्व है शनिवार के दिन भरणी नक्षत्र एव चतुर्थी तिथि होने पर जो मनुष्य यम की पूजा करता है वह सात जन्मो मे उत्पन्न पापो से मुक्त हो जाता है[151]।

ब्राह्मण पूजा

कूर्म पुराण मे ब्राह्मणो की पूजा का भी बडा महत्व है। अमावस्या तिथि मे ब्रह्मा के उद्देश्य से तीन ब्राह्मणो की पूजा करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [152]।

यज्ञ

यज्ञ की महत्ता

यज्ञ वैदिक धर्म का मेरूदण्ड है। विभिन्न देवताओ के नामो का स्मरण कर अग्नि मे आहुति देना ही यज्ञ के नाम से अभिहित किया जाता है। योग (यज्ञ) के तीन प्रधान अंग है। (1) पदार्थ या सामग्री (2) देवता, जिसके निमित्त यज्ञ किया जाता है (3) त्याग। यांग का अर्थ है देवता के निमित्त उस हवन सामग्री को देना होम का तात्पर्य है देवता के लिए पदार्थ को अग्नि मे हवन करना। यह होम दो प्रकार का होता है हव्य–कव्य। देवताओ को दिये गये होम को 'हव्य' कहते है तथा पितरो के लिए दी गयी हवि को 'कव्य' कहा जाता है।

कूर्म पुराण मे गृहस्थो के मुख्य कार्य के रूप बतलाया गया है प्रत्येक गृहस्थ को अग्निहोत्र होम करना चाहिए सायकाल प्रात काल एव पक्ष के अन्त मे अमावस्या और पूर्णमासी

को हवन करना चाहिए [153]। प्रत्येक पर्व को नियमपूर्वक सावित्री होम का विधान है–[154] प्रोफेसर बलदेव उपाध्याय ने वैदिक कर्मो (यज्ञ यज्ञादि) को तीन भागो मे विभक्त किया है और इन्ही के अर्न्तगत समस्त २१ प्रकार स्मार्त तथा श्रोत कर्मो को अर्न्तमुक्त दिखलाया है[155]।

(1) पाक यज्ञ–औपासन होम, वैश्वदेव, पार्वण, अष्टका– मासिक श्राद्ध, श्रावण और शूलगव।

(2) हर्वियज्ञ– अग्निहोत्र, पर्वकालीन यज्ञ, पौर्ण मास यज्ञ।

(3) सोम यज्ञ– अग्निष्टोम, अत्यग्नि सोम, उलथ्य षोडशी।

अग्नि

कूर्म पुराण मे अग्नियो के सम्बन्ध मे जो उल्लेख है वह इस प्रकार है। श्रोताग्नि प्राय दो प्रकार की होती है। (1) समार्ताग्नि, तथा (2) श्रोताग्नि इसमे समाताग्नि का स्थापन प्रत्येक विवाहित व्यक्ति को करना चाहिए। स्मार्त अग्नि को ही गृह्य अग्नि भी कहा जाता है। गृहयाग्नि मे जिन यज्ञो का विधान किया जाता है उन्हे 'पाकयज्ञ' कहते है। हर्वियज्ञ और सोमयज्ञ का सम्बन्ध श्रोताग्नि से है। उम्र सम्बन्धी उल्लेख तो इस पुराण मे नही मिलता है परन्तु पद्म पुराण के अनुसार अग्न्याधान (अग्नि को जलाकर नियमित रूप से उसमे यज्ञ करने वाला व्यक्ति ही इन यज्ञो का अधिकारी होता है। उसकी आयु पच्चीस) वर्ष से लेकर चालीस वर्ष के भीतर होनी चाहिए। ऐसे व्यक्ति के लिए रूपत्नीक होना अनिवार्य है। एक बार यदि अग्नि की स्थापना कर दिया जाय तो आहिताग्नि के लिए यावत् जीवन अग्नि की उपासना करते रहना आवश्यक होता है। इस गृह्य अग्नि के अतिरिक्त दो प्रकार की अन्य अग्नि भी होती है। (1) लौकिक और (2) सभ्य। भोजन पकाने वाली आग को लौकिक अग्नि कहा जाता है और गृह के विभिन्न कक्षो को गर्म रखने के लिए जलाई गई आग 'सभ्याग्नि' कही जाती है।

श्रोताग्नि तीन प्रकार की होती है–

(1) गार्हपत्य (2) दक्षिर्णाग्न (3) आहवनीय तीन होने के कारण इन्हे 'त्रेता' भी कहते है[156]। गार्हपत्य अग्नि का स्थान पृथ्वी के आकार के सदृश गोल अर्थात वृत्ताकार होता है। दक्षिणाग्नि का स्थान चन्द्र के अर्धप्रभा मण्डल के समान अर्थात अर्ध वृत्ताकार होता है आहवनीय अग्नि आयताकार होती है[157]।

अग्नि होत्र

प्रतिदिन अग्निहोत्र करना वैदिक काल की प्रधान परम्परा थी। इसे सपत्नीक किया जाता था। अग्निहोत्र होम करना चाहिए द्विज को नये अन्न को खाने से पूर्व पहले होम करना आवश्य बतलाया गया है क्योकि ऐसा न करने वाला व्यक्ति वह अपने प्राणो को ही खाता है [158]। इस प्रकार अग्निहोत्र गृहस्थ ब्राह्मण का यह अनिवार्य कर्म का। अतएव विशेषरूप से ब्राह्मणो को प्रयत्न पूर्वक अग्नि का आधान कर शुद्ध चित्त से परमेश्वर की आराधना करनी चाहिए [159]। आलोचित पुराण के अनुसार अग्न्याधानादि कार्य न करने वाला व्यक्ति दुर्गति ताभिस्र, अन्धतामिस्र, महारोख, रौख, कुम्भीपाक वैतरणी, असिपत्रवन एव अन्य घोर नरको मे जाता है। तथा अन्त्यजो के कुल एव शूद्रायोनि मे जन्म लेता है [160]।

सोमयज्ञ

कूर्म पुराण मे सोमयज्ञ को सभी यज्ञो मे श्रेष्ठ बतलाते हुए कहा गया है यह यज्ञ महेश्वर देव की आराधना हेतु करना चाहिए इसके समान अन्य कोई यज्ञ नही है[161]। कूर्म मे यज्ञो के क्रम का उल्लेख तो नही है न ही यज्ञो के बारे मे कोई विस्तृत विधि विधानो का उल्लेख है। परन्तु विभिन्न यज्ञो का उल्लेख अवश्य है ब्राह्मणो के लिए कहा गया है कि अनाज के कह जाने के बाद नवशस्येष्टि एव ऋतु के अन्त मे यज्ञ तथा छ मास पर पशु याग एव वर्ष के अन्त मे सौमिक (सोमरस सम्बन्धी) यज्ञ करना चाहिए [162]। दीर्घायु की इच्छा रखने वाले द्विज को नवशस्येष्टि या बिना पशुयाग किये नया अन्न या मास नही खाना चाहिए [163]।

पौर्णमास यज्ञ

शिलोञ्छ द्वारा जीवन निर्वाह करने वाले ब्राह्मण को सदा देवता अग्निहोत्र पर्वकालीन यज्ञ एव अयनान्त का अर्थात पौर्णमास यज्ञ करना चाहिए [164]।

अश्वमेघ यज्ञ

आलोचित पुराण मे अश्वमेघ यज्ञ का भी उल्लेख मिलता है परन्तु विस्तृत विवरण उपलब्ध नही है। एक स्थान पर ऐसा उल्लेख है कि वसुमना राजा को सूर्य की आराधना से शत्रुओ का दमन करने वाला त्रिन्धावा नामक पुत्र हुआ तो राजा ने शत्रुओ को जीतकर अश्वमेघ यज्ञ किया। उस यज्ञ मे वशिष्ठ एव कश्यप आदि ऋषिगण तथा इन्द्र इत्यादि देवता भी यज्ञशाला मे आये [165]। आलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर देवरात नामक राजा द्वारा अश्वमेघ यज्ञ का उल्लेख मिलता है [166]। शतपथ ब्राह्मण तथा तैत्तिरीय ब्राह्मण[167] मे इस यज्ञ के विधान का बडा विस्तृत वर्णन मिलता है। चक्रचर्ती राजा अपने एकाधिपत्य करने के लिए इस यज्ञ को किया करते थे। जो राजा सार्वभौम नही थे उनके लिए इसका विधान निषिद्व था। इन्द्रिय विजय के लिए यज्ञ किया जाता था। फाल्गुन मास की अष्टमी या नवमी को अथवा ज्येष्ठ या आषाढ मास की इन्ही तिथियो को इस यज्ञ का प्रारम्भ करना चाहिए। घोडे के रग, रूप, गुण तथा आकृति के सम्बन्ध मे भी विचार किया गया है। यज्ञीय अश्व बिल्कुल सफेद तथा उसके शरीर पर वृत्ताकार काले धब्बे होने चाहिए। इस यज्ञ मे घोडे को सुसज्जित करके, उसे अग्नि की तीन बार परिक्रमा कराया जाता है। इसके पश्चात वह घोडा समस्त देश की परिक्रमा करने के लिए छोड दिया जाता है। इसकी रक्षा के लिए चार सौ रक्षको का होना आवश्यक है जिसमे सौर राजकुमार हो। अश्व के सुरक्षित लौट आने पर उसकी बलि देकर 'ऊखा' नामक पात्र मे उसके मास को पका कर अग्नि मे हवन किया जाता है। अश्वमेघ यज्ञ के क्रिया कलाप बडे ही जटिल है। इसके साथ ही यह व्यय साध्य तथा समय साध्य भी है[168]। पद्म पुराण मे सीतापति श्री रामचन्द्र जी के द्वारा किये गये अश्वमेघ यज्ञ का विस्तृत विवरण उपलब्ध होता है। अश्व के रूप रंग के सम्बन्ध मे अगस्त्य भी कहते है कि यह अश्व सफेद रग, श्यामवर्ण लाल मुख वाला तथा पीली पूँछ से युक्त होना चाहिए। यह मन के समान तीव्र वेग वाला, उच्चैश्रवा के समान प्रभा वाला तथा शुीा

लक्षणो से युक्त हो [169]। इस अश्व को वैसाख की पूर्णिमा के दिन विधि पूर्वक पूजा करके रक्षको के साथ छोडना चाहिए। यज्ञकर्ता अर्थात राजा ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए गरीबो को अन्न, धन तथा धान्य दे। रामचन्द्र ने इस अवसर पर कन्यादान, भूमिदान, गजदान, अश्वदान, स्वर्णदान, तिलदान, अन्नदान, पयोदान तथा अभयदान दिया था[170]। राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा के लिए अगद, सुग्रीव, नल, नील आदि वीर गये थे। इनके साथ ही भरत के पुत्र पुष्कल भी इस कार्य के लिए नियुक्त किये गये थे। भवभूति ने इस अश्व के साथ रक्षक के रूप मे लक्ष्मण के पुत्र चन्द्रकेतु के जाने का उल्लेख किया है। मार्ग मे अश्व के रक्षार्थ चित्राग नामक राजा से पुष्कल का घनघोर युद्ध हुआ जिसमे पुष्कल के द्वारा यह राजा मारा गया[171]। इस प्रकार वीर पुष्कल ने इस अश्व की रक्षा की।

इस प्रकार यज्ञ, तप होम का मनुष्य के जीवन मे बडा महत्व है इसे प्रत्येक व्यक्ति को प्रयत्न पूर्वक करना चाहिए। कोष्ट्रुवश के नवरथ द्वारा सरस्वती देवी की यज्ञ किया[172]। त्रेता युग मे स्वय प्रभु ने पशु हिसा रहित यज्ञ प्रवर्तित किया[173]। विरोचन के स्वय बलि ने यज्ञ द्वारा यज्ञेश्वर विष्णु की अर्चना किया[174]।

गायत्री

कूर्म पुराण मे वेदमाता गायत्री का भी उल्लेख मिलता है कि गार्हपत्याग्नि मे समिधा न डालने पर स्नानोपरान्त पवित्रता पूर्वक पाप की शुद्धि हेतु आठ सहस्र गायत्री का जप करना चाहिए [175]। प्रमोद वश यदि ब्राह्मण जूठे मुँह बिना आचमन किये चाण्डालादि का स्पर्श करे तो उसे भी आठ सहस्र गायत्री का जप करने का विधान है[176]। कुत्ते के काटने पर भी गायत्री का जप करना चाहिए [177]। वसुमना राजा ने सौ वर्ष तक मन से वेदमाता सावित्री देवी का जप किया [178]। प्रत्येक ब्राह्मण को नित्य स्नान कर गायत्री का जप करना चाहिए नित्य सध्या करने वाला, एव गायत्री का जप करने वाला गृहस्थ परलोक मे वृद्धि प्राप्त करता है [179]। नित्य कर्म की विधि का पालन करने वाले व्यक्ति को गायत्री मन्त्र का सहस्र बार जप करना श्रेष्ठ, सौ बार जप करना मध्यम एव दस बार का जप निम्न कोटि का होता है व्यक्ति को किसी भी गायत्री का जप नित्य करना चाहिए यही जप यज्ञ है। गायत्री का जप पश्चिम मुँह कर करना चाहिए [181]। गायत्री जप नदी के किनारे तीर्थो मे नित्य क्रोध का त्याग

कर करने से पाप से मुक्त हो जाता है[181]। विद्वान व्यक्ति को तीन बार द्रुपदा या व्याहृति अथवा प्रणवयुक्त गायत्री और अघमर्षण मत्र का जप करना चाहिए। तदुपरान्त 'आपो हिष्ठा मयोभुव' इत्यादि मन्त्र, ईदभाव प्रवहत' इत्यादि मन्त्र तथा व्याहृतियो द्वारा मार्जन करना चाहिए। "आपोहिष्ठा" इत्यादि मन्त्रो से उस जल को अभिमन्त्रित करने के उपरान्त जल के भीतर डुबकी लगाकर तीन बार अधमर्षण मत्र का जप करना चाहिए। या "त्रिपदा"गायत्री मन्त्र" तद्विष्णो परम पद" इत्यादि मन्त्र या प्रणव का जप करे। इस प्रकार जल के भीतर यर्जुवेद मे प्रतिष्ठित "द्रुपदादिव" इत्यादि मन्त्र की तीन बार आवृत्ति करने से समस्त पापो से छुटकारा पा जाता है [182]। मार्जन करने के उपरान्त हाथ मे जल लेकर मन्त्र जाप पूर्वक उस जल को मस्तक पर रखने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है[183]। जैसे यज्ञो मे अश्वमेघ यज्ञ राजा के सभी पापो को दूर करता है उसी प्रकार अघमर्षण सूक्त को समस्त पापो को दूर करने वाला कहा गया है[184]।

अलोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि ईश्वर ने स्वय गायत्री और चारो वेदो को तराजू से तौला तो दोनो को एक समान पाया[185]। इस प्रकार ब्राह्मणो को प्रतिदिन गायत्री माता का जप करना चाहिए।

व्रत

पुराणो के मुख्यत तीन विषय है—व्रत, दान और तीर्थयात्रा। सभी पुराणो मे इन तीनो विषयो का वर्णन न्यूनाधिक रूप मे उपलब्ध होता है। व्रतो के प्रचार तथा इन्हे लोक प्रिय बनाने मे पुराणो का ही योगदान विशेष रूप से है। व्रतो के महात्मय तथा इनके फल का अतिश्योचित पूर्ण भाषा मे वर्णन आकृष्ट किया। व्रतो का सम्यक रीति से पालन करना धर्म का प्रधान अग माना जाता है। वैदिक काल मे व्रतो का वर्णन प्राप्त नही होता परन्तु पौराणिक काल मे इनकी प्रधानता दिखाई पडती है। कूर्म पुराण मे व्रतो का उल्लेख प्रायश्चित के रूप तो मिलता है परन्तु इनके विधि विधान का उल्लेख नही है।

चान्द्रायण व्रत

कूर्म पुराण के अनुसार यदि व्यक्ति किसी प्रकार की कोई गलती करता है तो उसे उसका प्रायश्चित करना पडता है। और यदि व्यक्ति उसे (व्रतो को) प्रायश्चित रूप मे न कर ईश्वर के प्रति आस्था पूर्ण भाव से सदयो करता है तो उसे ईश्वर कह सापुज्य की प्राप्ति होती है। आलोचित पुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि धन (मनुष्यो का) वाहरी प्राण होता है। जो किसी का धन रहता है वह उसके प्राण को ही हरता है[186]। ऐसा करने वाला व्यक्ति भ्रष्ट एव व्रत हीन हो जाता है। तब उसे शास्त्रानुकूल विधि से एक वर्ष तक चान्द्रायण व्रत करना चाहिए [187]। व्याभिचारिणी स्त्री के साथ समागम, एव पुल्कसी के साथ समागम पर या नटी, नर्तकी, धोबिन, बॉस के द्वारा जीविका निर्वाह करने वाली एव चर्म द्वारा जीविका निर्वाह करने वाली स्त्री के साथ प्रसग करने पर चान्द्रायण व्रत द्वारा शुद्धि होती है[188]। इसी प्रकार प्रमाद वश वैश्य स्त्री की हत्या, अन्त्यजो की हत्या, प्रमोद वश गाय की हत्या करने पर चान्द्रायण व्रत द्वारा ही शुद्धि होता है[189]। परन्तु ज्ञान पूर्वक गयी की हत्या करने पर उसका प्रायश्चित नही बतलाया गया है। मनुष्य, स्त्री, गृह, वापी, कूप, एव जलाशयो का अपहरण करने पर चान्द्रायण व्रत से शुद्धि होती है[190]। मनुष्य का मास खाने पर भी चान्द्रायण करना चाहिए [191]। नवश्राद्ध, जननाशौच एव मरणाशौच मे भोजन करने पर ब्राह्मण चान्द्रायण व्रत से शुद्ध होता है[192]। अन्न का अग्रासन न देने वाले व्यक्ति का अन्न खाने पर ब्राह्मण की शुद्धि चान्द्रायण व्रत से ही होती है[193]। चाण्डाल का अन्न खाने पर ब्राह्मण को चान्द्रायण व्रत करना चाहिए [194]। ग्राम शूकर गदहा, ऊँट श्रृगाल, बन्दर एव काक के मलमूत्र का भक्षण करने पर ब्राह्मण को चान्द्रायण व्रत करना चाहिए [195]। शूद्र का उच्छिष्ट खाने पर चान्द्रायण व्रत से शुद्धि होती है[196]। सुरा के पात्र मे जल पीने पर चान्द्रायण व्रत करना चाहिए [197]। सस्कार हीन व्यक्ति चान्द्रायण व्रत करने एव गोदान से शुद्धि होती है [198]। चाण्डालो को वेद धर्म शास्त्र एव पुराणो का उपदेश करने पर चान्द्रायण व्रत द्वारा ही बतलायी गयी है परन्तु इसके अतिरिक्त पाप मुक्ति का अन्य कोई उपाय नही है[199]। उद्‌वन्धादि जल मे डूबकर अथवा फॉसी लगाकर मरे व्यक्ति का स्पर्श होने पर चान्द्रायण व्रत द्वारा ही शुद्धि होती है[200]। ब्राह्मण यदि एक बार भी देवोद्यान या मोहवशदेवर्मन्दि मे मलमूत्र का त्याग करने पर लिगछेदन एव

चान्द्रायण व्रत करना चाहिए [201]। इस प्रकार व्रतो मे चान्द्रायण व्रत के महत्व का उल्लेख किया गया है साथ ही यह भी कहा गया है कि चान्द्रायण व्रत करने के बाद कृच्छ्र व्रत करना चाहिए। ऐसा करने के बाद ईश्वर के शरणागत होने से पाप से मुक्ति मिलती है [202]।

कृच्छ्र एवं अतिकृच्छ्र व्रत

व्रतो मे चान्द्रायण व्रत के बाद कृच्छ्र एव अतिकृच्छ्र चान्द्रायण व्रतो के महात्म्य का उल्लेख इस प्रकार है कि प्रमादशव दस या बारह दिनो तक (गार्हपत्याग्नि का) त्याग करने पर उस पाप की शान्ति हेतु कृच्छ्र चान्द्रायण व्रत का विधान है [203]। अनाशक अर्थात प्रायोवेशन व्रत से भ्रष्ट तथा प्रवज्या अर्थात सन्यासाश्रम से च्युत व्यक्ति को तीन कृच्छ्र एव तीन चान्द्रायण व्रत करने से शुद्धि होती है[204]। हाथी का वध करने पर तत्कृच्छ्र व्रत करने से शुद्धि होती है[205]। घोडे की हत्या पर बारह रात्रि लगातार कृच्छ्रव्रत करना चाहिए[206]। दूसरो के घर से द्रव्यो की चोरी एव अपनी जाति वाले व्यक्ति के घर से इच्छापूर्वक धन, धान्य एव अन्न की चोरी करने पर कृच्छ्रवत से शुद्धि होती है[207]। काक, कुत्ता, हाथी, वराह अथवा मुर्गा का मास खाने पर तप्तकृच्छ्र व्रत करना चाहिए [208]। जगली पशु, ऊँट एव गधे का भक्षण करने पर तप्त कृच्छ्र व्रत से शुद्धि होती है [209] विधान है। इच्छापूर्वक उदुम्बर को खाने पर तप्तकृच्छ्र व्रत करना चाहिए [210]। गृध्र, मेढक, कुरर पक्षी विष्किर (नख से बिखेर कर खाने वाले पक्षी) को खाने पर अथवा इनके वि०मूत्र को खाने पर कृच्छ्रव्रत करना चाहिए [211]। क्षत्रिय का उच्छिष्ट खाने पर तप्तकृच्छ्र एव वैश्य का उच्छिष्ट खाने पर अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए[212]। रोगादि से पीडित न होने पर जो ब्राह्मण महायज्ञो को किये बिना भोजन करते है उनकी शुद्धि कृच्छ्रव्रत के अर्द्धाश के अनुष्ठान से होती है [213]। साथ ही यदि सग्निक ब्राह्मण अमावास्या एव पूर्णिमादि तिथियो मे देवताओ की पूजा न करे अथवा ऋतुकाल मे भार्या के साथ सहवास न करे तो उसे भी कृच्छ्रव्रत के अर्द्धाश का अनुष्ठान करना चाहिए [214]। ब्राह्मण को धमकाने पर कृच्छ्रव्रत एव पतक देने पर अतिकृच्छ्र व्रत करना चाहिए[215]। देवद्रोह एव गुरूद्रोह करने पर तप्तकृच्छ्र व्रत करना चाहिए[216]। चाण्डाल एव अन्त्पज के शव का स्पर्श करने पर कृच्छ्रव्रत करना चाहिए[217]।

कृच्छ्र सान्तपन व्रत

ब्राह्मण यदि जानबूझकर चाण्डाल के कूप या पात्र मे जलपान कर ले तो उसे कृच्छ्र सान्तपन व्रत करना चाहिए [218]।

महासान्तपन व्रत

मोहवश मासभक्षी पशुओ एव पक्षियो के मलमूत्र का भक्षण करने पर ब्राह्मण को महासान्तपन व्रत करना चाहिए [219]।

सान्तपन व्रत

कामवश स्त्री प्रसग करने पर प्राणायाम करके सान्तपन व्रत करना चाहिए [220]। यदि मलमूत्रादि से दूषित जलपान कर ले तो कठिन सान्तपन व्रत करने से शुद्धि होती है [221]।

प्राजापत्य व्रत

एक ही व्यक्ति का अन्न खाने मधु एव मास खाने, नवश्राद्ध सम्बन्धी अन्न तथा प्रत्यक्ष लवण खाने पर प्राजापत्य व्रत से पाप की शुद्धि का विधान किया गया है[222]। वृन्ताक (बैगन), भूस्तृण, शिग्रु, (सहिजन), खुखुण्ड, करक, शख एव कुम्भीक नालिका शाक एव चौराई एव ककुभ के अण्ड को खाने पर प्राजापत्य व्रत से शुद्धि होती है[223]। अखाद्य अन्न खाने तथा मलमूत्र, एव वीर्य को खाने पर प्राजापत्य व्रत करना चाहिए[224]। ब्राह्मण का जूठा खाने पर प्राजापत्य व्रत से शुद्धि होती है[225]। ब्राह्मणादि द्वारा भारे गये पुरूषो का दाह सस्कार करने के बाद गोमूत्र मे पके यवान्न का आहार करने एव प्राजापत्य व्रत से शुद्धि होती है [226]। यदि ब्राह्मण इच्छापूर्वक जूठे मुँह चाण्डाल एव पतित इत्यादि का स्पर्श करता है तो प्राजापत्य व्रत करना चाहिए [227]। देवता, ऋषि तथा देव तुल्य व्यक्तियो की निन्दा करने पर ब्राह्मण को प्राजापत्य व्रत करना चाहिए ।

उपवास

व्रतो जैसा ही महत्व उपवास का भी है यदि किसी की शुद्धि व्रतो से होती है तो कुछ स्थितियो मे उपवास के द्वारा भी शुद्धि का विधान है।

यदि व्यक्ति व्याभिचारिणी स्त्री के साथ समागम करने पर ब्राह्मण को तीन रात्रि उपवास करने का विधान बतलाया गया है।

ब्रह्मचर्य व्रत

कृतध्न को ब्रह्मचर्य व्रत कर ब्राह्मण के घर मे पॉच वर्ष तक रहना चाहिए [228]। ब्रह्मचर्य पूर्वक निराहार रहकर सम्पूर्ण शरीर मे भस्म को लगाकर मरण पर्यनत रूद्र का जप करने से पुरूष परम पद को प्राप्त करता है[229]। तपस्वियो ने उपवास, पराक एव कृच्छ्रचान्द्रायणादि (व्रतो) द्वारा शरीर के शोषण को उत्तम तप कहा है[230]।

दान

कूर्म पुराण मे दान की प्रशसा अनेक स्थानो मे की गयी है और इसे कलियुग का एक मात्र श्रेष्ठ दान ही बतलाया गया है[231]। वेदो के अध्ययन करने वाले प्रशस्त पात्र को श्रद्धापूर्वक प्रतिपादन को दान कहा गया है। यह भुक्ति और मुक्ति को देने वाला होता है [232]। श्रद्धापूर्वक विशिष्ट सदाचार सम्पन्न व्यक्तियो को जो दान दिया जाता है वही धन है। इसके अतिरिक्त शेष धन (का सग्रह करने वाला व्यक्ति) किसी अन्य (के ही धन की) की रक्षा करता है [233]।

दान के भेद

नित्य, नैमित्तिक एव काम्य भेद से दान तीन प्रकार के होते है चतुर्थ दान विमल दान कहा गया है जो सभी दानो मे श्रेष्ठ है [234]।

नित्य दान

प्रतिदिन बिना किसी उद्‌देश्य के जो दान अनुपकारी ब्राह्मण को दिया जाता है वह नित्य दान कहलाता है [235]।

नैमित्तिक दान

पाप की शान्ति के लिए विद्वानो के हाथ मे दिया गया दान नैमित्तिक दान कहलाता है[236]।

काम्य दान

सन्तान, विजय, ऐश्वर्य एव स्वर्ग की इच्छा से जो दान दिया जाता है उस दान को धर्म चिन्तक तथा ऋषियो ने उसे काम्य दान कहा है [237]।

विमल दान

धर्मयुक्त मन से ईश्वर की प्रशन्नता हेतु जो दान ब्रह्म वेत्ताओ को दिया जाता है वह कल्याणकारी दान विमल दान कहलाता है [238]। कूर्म पुराण के अनुसार श्रोत्रिय कुलीन विनीत, तपस्वी, सदाचारी एव दरिद्र (ब्राह्मण) के निमित्त भक्ति पूर्वक दान करना चाहिए [239]।

भूमि दान

जो व्यक्ति भक्ति पूर्वक आहिताग्नि ब्राह्मण को भूमि का दान करता है वह श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करता है जहॉ शोक नही करना पडता [240]। जो व्यक्ति ईख, यव एव गेहूँ से युक्त भूमि वेदाज्ञ ब्राह्मण को दान करता है उसे पुन जन्म नही लेना पडता[241]। इतना ही नही यदि गोचर्म भूमि भी दरिद्र ब्राह्मण को दान दिया जाता है तो वह समस्त पापो से मुक्त हो जाता है[242]। इस ससार मे भूमि के दान से बडा उत्तम कोई दान नही है। उसके तुल्य ही अन्नदान होता है। किन्तु विद्या दान उससे अधिक होता है [243]।

अन्न दान

प्रतिदिन ब्रह्मचारी के निमित्त श्रद्धापूर्वक अन्नदान करना चाहिए यह अन्नदान भी भूमि दान के ही तुल्य कहा गया है। ऐसा करने वाला व्यक्ति सभी पापो से मुक्त होकर ब्रह्मलोक प्राप्त करता है[244]। परन्तु गृहस्थ को अन्न का दान करने से मनुष्य को फल की प्राप्ति होती है। गृहस्थ को बिना पका हुआ अन्न ही दान करना चाहिए। अपक्व अन्न का दान करने से मनुष्य परम गति प्राप्त करता है[245]। वैशाख मास की पूर्णिमा को उपवास कर सात या पॉच ब्राह्मणो की विधि पूर्वक काले तिलो, एव विशेषकर मधु तथा गन्धादि के द्वारा पूजन कर उन ब्राह्मणो से "द्रीयता धर्मराज इति अर्थात धर्मराज प्रशन्न हो" मन में जो सकल्प हो वह कहलाये या स्वय कहे, इस प्रकार सम्पूर्ण जीवन मे किया पाप उसी समय नष्ट हो जाता है[246]। कृष्ण मृग के चर्म मे तिल, स्वर्ण, मधु एव धृत रखकर जो ब्राह्मण को देता है वह सभी पापो से मुक्त हो जाता है[247]। विशेषरूप से वैशाख मास की पूर्णिमा को धर्मराज के निमित्त ब्राह्मण को सत्तू इत्यादि एव जलपूर्ण घडा दान देने से भय से मुक्ति होती है[248]। सुवर्ण एव तिल युक्त जल के पात्रो के दान से सात या पॉच ब्राह्मणो को सन्तुष्ट करने वाला ब्रह्महत्या

से मुक्त हो जाता है [249]। माघ मास की कृष्ण द्वादशी को उपवास करते हुए सफेद वस्त्र धारण कर एव काले तिलो से अग्नि मे हवन कर ब्राह्मणो को तिल का ही दान करे तो ऐसा करने से ब्राह्मण जन्म काल से किये हुए पापो से मुक्त हो जाता है [250]। अमावस्या आने पर शकर जी के उद्देश्य से "प्रीयतामीश्वर सोमो महादेव सनात अर्थात सनातन ईश्वर सोम महादेव प्रशन्न हो" कहकर तपस्वी ब्राह्मण को जो कुछ भी दान किया जाता है उससे तत्काल सात जन्मो का किया पाप नष्ट हो जाता है [251]। कृष्ण चतुर्दशी को स्नान पर जो व्यक्ति ब्राह्मण को भोजन कराकर शकर देव की आराधना करता है। उसका पुर्नजन्म नही होता है [252]। विशेषरूप से कृष्णाष्टमी को "प्रीयता मे महादेवो महादेव मुझ पर प्रशन्न हो" यह कहते हुए विधिपूर्वक पाद प्रक्षालनादि द्वारा ब्राह्मण की पूजा कर उसे अपना धन प्रदान करने वाला मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है और परमगति को प्राप्त करता है [253]। ब्राह्मणो की कृष्ण चर्तुदशी, विशेषकर कृष्णाष्टमी एव अमावस्या को शिव की पूजा करनी चाहिए [254]। जो व्यक्ति एकादशी को निराहार रहकर द्वादशी के दिन ब्राह्मण को भोजन कराकर पुरुषोत्तम की पूजा करता है उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है [255]। शुक्ल पक्ष की द्वादशी तिथि वैष्णवी तिथि होती है। उस तिथि को प्रयत्नपूर्वक जर्नादन देव की आराधना करनी चाहिए [256]। शकर, विष्णु, को उद्देश्य कर ब्राह्मण को जो कुछ भी दान दिया जाता है वह अनन्त फल प्रदान करता है [257]।

दान वस्तु का फल

जल का दान करने वाले को तृप्ति की प्राप्ति होती है। अन्न दान करने वाले को अक्षय सुख प्राप्त होता है। तिल दाता को इच्छित सन्तान तथा दीप का दान करने वाले को उत्तम नेत्र की प्राप्ति होती है [258]। भूमिदाता को सभी पदार्थो की प्राप्ति होती है। सुवर्ण दान करने वाले को दीर्घायु प्राप्त होता है। गृह का दान करने वाले को अट्टालिका प्राप्त होती है एव रूप्य अर्थात चॉदी का दान करने से उत्तम रूप की प्राप्ति होती है [259]। जो व्यक्ति वस्त्र का दान करता है वह चन्द्रलोक मे निवास करने वाला होता है एव अश्व का दान करने से अश्वनीकुमारो के लोक मे निवास स्थान प्राप्त करता है। बैल का दान करने से पुष्ट लक्ष्मी तथा गाय का दान करने वाले को ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है [260]। सवारी और शैय्या का

दान करने वाले को ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है। धान्य का दान करने वाले को शाश्वत सौख्य एव वेद का दान करने वाले को ब्रह्मस्वरूपत्व की प्राप्ति होती है [261]। यथाशक्ति वेद पाठी ब्राह्मणो को धान्य प्रदान करने से मरणोपरान्त स्वर्ग की प्राप्ति होती है[262]। ब्राह्मणो को फल, मूल शाक एव विविध प्रकार के भोज्य पदार्थो को दान देने से मनुष्य सदा आनन्द युक्त होता है[263]। गौओ को घास प्रदान करने से समस्त पापो से मुक्ति होती है। ईधन का दान करने वाला व्यक्ति प्रदीप्त अग्नि के तुल्य हो जाता है [264]। रोग की शान्ति हेतु रोगी को औषध, स्नेह तेल या घृत एव आहार का दान करने वाला रोगरहित, सुखी एव दीर्घायु होता है [265]। छाता एव जूता का दान करने वाला मनुष्य तीव्र ताप एव छूरे की धार से पूर्ण असिपत्रवन अर्थात जीव के परलोक गमन के समय प्राप्त होने वाले कठिन मार्ग को पार कर लेता है [266]। इस प्रकार अक्षयता चाहने वाले व्यक्ति को ससार की अभीष्ट वस्तुओ एव घर मे जो अत्यन्त प्रिय वस्तु हो उसका दान गुणवान ब्राह्मण को करना चाहिए [267]। उत्तरायण और दक्षिणायन मेष और तुला सक्रान्ति, चन्द्र और सूर्य के ग्रहण और सक्रान्ति के कालो मे दिया हुआ दान अक्षय होता है [268]।

प्रतिग्रह (दान)

पुत्र जन्म पर किया गया दान प्रतिग्रह दान कहलाता है पुत्र के जन्म के उपरान्त व्यक्ति को उस दिन हिरण्य, धान्य, गाय, वस्त्र, तिल, अन्न, गुड एव घृत इन सभी प्रकार कील वस्तुओ का इच्छापूर्वक दान प्रतिग्रह करना चाहिए [269]। अन्य दानो की भॉति व्यक्ति को अपने परिश्रम से प्राप्त आय से भी उसे नियम पूर्वक दान करने का विधान है–जैसे कृषि कर्म करने वाले द्विजो को अपनी आय का तीसवॉ भाग अर्थात 5 प्रतिशत देवो एव पितरो को एव तीसवॉ भाग 3 13 प्रतिशत ब्राह्मणो को दान करना चाहिए [270]। इसी प्रकार वाणिज्य से प्राप्त लाभ का चालीसवॉ भाग 10 प्रतिशत देवो एव पितरो को एव 6 23 प्रतिशत ब्राह्मणो को दान करने का विधान था[271]। इसी तरह सूदी व्यवहारी को प्राप्त लाभ का 15 प्रतिशत देवो एव पितरो पर एव 10 प्रतिशत ब्राह्मणो को दान करना चाहिए [272]। आलोचित पुराण मे एक स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि कोष्ट्र वश के नवरथ सदैव दान धर्म मे रत तथा भली–भॉति सदाचारी था[273]। आदर पूर्वक दिये हुए दान को लेने वाले एव आदर पूर्वक दान देने दोनो

को स्वर्ग की प्राप्ति होती है [274]। दान देना एक मात्र सभी दोषो को दूर करता है इसलिए व्यक्ति को सर्वदा दानादि कार्य प्रयत्न पूर्वक करना चाहिए [275]। जो व्यक्ति मोहवश गौ, अग्नि एव देवता को निमित्त दिये जा रहे दान को रोकता है वह पशु–पक्षी की योनि मे जन्म पाता है [276]। आलोचित पुराण मे कहा गया है कि जो व्यक्ति धनोपार्जन करने के उपरान्त ब्राह्मणो एव देवो की अर्चना नही करता तो राजा द्वारा उसकी सम्पूर्ण सम्पत्ति को छीनकर उसे राष्ट्र से बाहर निकाल देना चाहिए [277]। ब्राह्मणो के लिए वर्जित दान जो व्यक्ति दुर्भिक्ष के समय ब्राह्मणो को खाने के लिए अन्नादि नही देता वह ब्राह्मण गर्हित होता है[278]। उससे दान नही लेना चाहिए और न ही उसके साथ सम्पर्क करना चाहिए। राजा कभी यह कर्त्तव्य होता है कि वह उसे चिन्हित कर अपने राष्ट्र से बाहर कर निकाल दे[279]। ब्राह्मण को इस प्रकार राजा, शूद्र या पतित व्यक्तियो से दान नही लेना चाहिए। असमर्थ होने पर भी अन्य व्यक्तियो से याचना नही करनी चाहिए। बुद्धिमान व्यक्ति को निन्दितो का त्याग करना चाहिए [280]। ब्राह्मणो को शूद्र से कभी भी दान की इच्छा नही करनी चाहिए [281]।

दान की पात्रता

जो व्यक्ति धर्म के साधन स्वरूप अपने द्रव्य का असज्जनो को दान करता है वह मनुष्य पूर्व से भी पापी होता है एव नरक मे पडता है [282]। सद्यो स्वाध्यायी विद्वान जितेन्द्रीय एव सत्य तथा सयम से युक्त ब्राह्मणो के निमित्त दान करना चाहिए [283]। भली–भॉति भोजन किये हुए होने पर भी धार्मिक ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए। किन्तु मूर्ख, एव आचार–हीन ब्राह्मण को दह चाहे दस दिनो का भूखा क्यो न हो उसे भोजन नही करना चाहिए [284]। जो व्यक्ति समीप के श्रोत्रिय को दान न देकर अन्य ब्राह्मण को दान देता है वह अपने उस पाप के कारण सातवी पीढी तक को दग्ध करता है [285]। परन्तु यदि कोई ब्राह्मण शील एव विद्यादि के कारण अधिक गुण सम्पन्न हो तो निकट के ब्राह्मण को दान न देकर के उसे ही दान देना चाहिए [286]।

दान हेतु वर्जित व्यक्ति

दान देने वाले व्यक्ति को सदयो दान लेने वाले व्यक्ति पात्रता का ध्यान रखना चाहिए क्योकि ऐसे व्यक्ति को दान नही देना चाहिए जो उसके योग्य न हो इसलिए प्रयत्न

पूर्वक नास्तिक, कुतर्की, सभी पाखण्डियो एव वेद ज्ञान रहित व्यक्ति के निमित्त जल का भी दान नही करना चाहिए [287]। अविद्वान व्यक्ति पुआ स्वर्ण, गौ, अश्व, पृथ्वी, एव तिल का दान ग्रहण करता है तो वह अविद्वान व्यक्ति काष्ठ के तुल्य भस्म हो जाता है [288]।

ग्राह्य दान

ब्राह्मणो को ऐसे व्यक्ति से दान लेना चाहिए जो गुरूओ एव भृत्यो का उद्वार करने की इच्छा रखता हो तथा देवता एव अतिथियो की आराधना करता हो उस व्यक्ति से दान ग्रहण करना चाहिए किन्तु उस दान से अपनी तृप्ति नही करनी चाहिए [289]। श्रेष्ठ ब्राह्मण को द्विजातियो से धन लेने की इच्छा करनी चाहिए अथवा अपनी जाति वालो से ही धन लेना चाहिए [290]। ब्राह्मण को धन की अभिलाषा नही करनी चाहिए उसे धन बढाने की इच्छा नही करनी चाहिए क्योकि धन के लोभ से व्यक्ति ब्राह्मणत्व से हीन हो जाता है [291]। व्यक्ति को समस्त वेदो का अध्ययन करने अथवा समस्त यज्ञो को करने से भी वह गति नही प्राप्त होती है [292]। इस प्रकार दान ग्रहण करने की इच्छा नही करनी चाहिए। जीवन निर्वाह मात्र के लिए धन ग्रहण करना चाहिए। आवश्यकता से अधिक धन सचय करने वाला ब्राह्मण अधोगति को प्राप्त करता है [293]। जो व्यक्ति नित्य याचना करता है वह स्वर्ग का भागी नही होता। वह मनुष्यो को उद्विग्न करता है एव वह चोर के ही समान कहा गया है[294]। इस प्रकार सयतचित होकर जो व्यक्ति देवता एव अतिथियो की पूजा करता है वह योग युक्त गृहस्थ परम पद प्राप्त करता है [295]।

तीर्थ तथा माहात्म्य

तीर्थ

कूर्म पुराण मे तीर्थो का बडा विस्तृत वर्णन उपलब्ध होता है । पुराणो के वर्ण्य विषयो मे तीर्थ, दान, तथा व्रत मे से प्रस्तुत पुराण मे तीर्थो का वर्णन विशेषतय किया गया है – (1) नगर तीर्थ (2) नदी तीर्थ। नगर तीर्थो मे काशी, प्रयाग, गया, पुष्कर, आदि तीर्थो मे स्नान दान आदि वर्णन माध्यम से उनके महात्म्य को बतलाया गया है तथा नदी मे गगा, यमुना, नर्मदा आदि नदियो का उल्लेख हुआ है । इन नदियो मे स्नान आदि की महिमा का वर्णन अतिशयोक्ति पूर्ण शब्दो मे किया गया है । कूर्म पुराण मे मनुष्यो के हाथ की अॅगुलियो मे भी तीर्थो का उल्लेख किया गया है [296]। आलोचित पुराण मे शताधिक तीर्थ स्थानो–नगरो तथा नदियो का उल्लेख किया गया है।

तीर्थो का माहात्म

कूर्म पुराण मे तीर्थो की बडी महिमा का वर्णन किया गया है । कलियुग मे तीर्थो का बडा महत्व है क्योकि समस्त प्रायश्चितो का निवारण इन्ही तीर्थो मे जाने पर वहॉ स्नान, दानादि क्रिया को करने से ही होती है । इस प्रकार प्रयत्न पूर्वक अग्नि अथवा पत्नी के साथ तीर्थ मे जाना चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है और उत्तम गति को प्राप्त करता है, [297]। प्रयाश्चिती, विधुर, पापाचारी मनुष्य, गृहस्थ एव अन्य उसी प्रकार के पुरूषो को तीर्थो का सेवन करना चाहिए [298]। परन्तु जो लोग अपने धर्मो का त्याग कर तीर्थो का सेवन करते है उसके लिए तीर्थ इस लोक एव परलोक दोनो मे फलप्रद नही होते [299]। मनुष्यो को अपने पापो को नष्ट करने के लिए उल्लिखित तीर्थो मे जाकर सैकडो जन्मो मे किये गये पापो को नष्ट करना चाहिए[300]। इस प्रकार ब्राहम्ण पुरूष पृथ्वी के समस्त पुण्य तीर्थो मे स्नान कर सचित पापो से मुक्त हो जाता है [301]।

तीर्थो की संख्या

तीर्थो की सख्या के सम्बन्ध मे बडा मतभेद पाया जाता है। कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि प्रयाग मे दस सहस्त्र मुख्य तीर्थ एव तीस करोड अन्य अप्रधान तीर्थ अवस्थित है[302]। वायु पुराण के अनुसार द्युलोक, भूलो, एव अन्तरिक्ष मे तीन करोड पचास लाख तीर्थ है। जान्हवी उन सभी तीर्थो से युक्त कही गयी है [303]। मत्स्य पुराण मे लिखा है कि तीर्थो की सख्या साठ करोड दस हजार है [304]। वराह पुराण के अनुसार इनकी सख्या साठ हजार साठ सौ करोड है[305]। पद्म पुराण के अनुसार तीर्थो की सख्या तीन करोड पचास लाख बतलाई गयी है [306]। ब्रह्मपुराण से ज्ञात होता है कि तीर्थो की सख्या इतनी अधिक है कि सौ वर्षो मे भी उनको कोई नही गिन सकता [307]।

तीर्थो की स्थिति

कूर्मपुराण के अनुसार तीर्थ केवल पृथ्वी पर ही नही बल्कि स्वर्ग तथा आकाश मे भी है[308]। मत्स्य पुराण[309], पद्म पुराण पाताल[310] से भी इनकी सम्पुष्टि होती है । परन्तु कूर्म पुराण मे केवल पृथ्वी पर स्थित तीर्थो का वर्णन किया गया है ।

तीर्थो का श्रेणी विभाजन

कूर्म पुराण मे जिन तीर्थो का वर्णन किया गया उनका कोई स्पष्ट श्रेणी विभाजन नही है । ब्रम्ह पुराण मे तीर्थो को चार श्रेणियो मे विभक्त किया गया है [311]। (1) देव (2) असुर (3) आरूण (4) मानुष । देवताओ के द्वारा निर्मित तीर्थो को देव तीर्थ कहते है । आसुर तीर्थ वह है जिसका सम्बन्ध किसी असुर जैसे– गय– से हो। ऋषियो के द्वारा प्रतिष्ठापित तीर्थ को आर्ष कहा जाता है जैसे– नैमिषणारण्य। मानुष तीर्थ वह तीर्थ है जिसकी प्रतिष्ठा किसी राजा जैसे मनु, कुरू, ने की हो । इन श्रेणियो मे बाद की अपेक्षा पूर्व वर्णित विभाजन श्रेष्ठ है[312]। ब्रम्हपुराण के अनुसार देव, असुर, आर्य तथा मानुष तीर्थ क्रमश सतयुग, द्वापर, त्रेता तथा कलियुग के लिए उपर्युक्त है[313] ।

तीर्थयात्रा के अधिकारी

कूर्म पुराण के अनुसार अग्नि अथवा पत्नी के साथ ही पुरूष को तीर्थ यात्रा मे जाना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है [314]। भूमिखड मे एव कृकल नामक वैश्य की कथा का उल्लेख इस प्रकार किया गया है कि उसने अपनी पत्नी के बिना ही तीर्थ यात्रा की थी । अत उसको इसका फल प्राप्त नही हुआ[315]। मत्स्य पुराण के अनुसार श्रविमुक्त क्षेत्र (वाराणसी) सभी जातियो के लागो एव चाडालो के लिए दवा का कार्य करती है[316]। कूर्म पुराण मे वाराणसी को पापनाशिनी नगरी कहा गया है [317]। वामन पुराण के अनुसार ब्रम्हचारी गृहस्थ वानप्रस्थ तथा सन्यासी तीर्थ स्थानो मे स्नान करने से अपने कुल की सात पीढियो को तारता है । इसके अतिरिक्त चारो वर्णो के लोग तथा स्त्रियॉ भी तीर्थ यात्रा करके परमपद को प्राप्त कर सकती है [318]। ब्रम्हपुराण मे उल्लिखित है कि ब्रम्हचारी तीर्थ यात्रा कर सकता है, लेकिन जिसने गुरू के आज्ञा प्राप्त की हो। गृहस्थ को अपनी धर्मपत्नी के बिना तीर्थो मे नही जाना चाहिए अन्यथा उसे तीर्थ का फल प्राप्त नही होता । स्त्रियो तथा शूद्रो को भी तीर्थ यात्रा का अधिकार प्राप्त है। इससे स्पष्ट होता है कि चारो वर्णो चारो आश्रमो तथा स्त्री, शूद्र, चाडाल आदि सभी को तीर्थ यात्रा का अधिकार प्राप्त है ।

तीर्थयात्रा का महत्व

तीर्थ यात्रा का सबसे बडा महत्व सास्कृतिक एकता की स्थापना है । प्राचीन आचार्यो ने इस महान् देश के चारो दिशाओ मे चार तीर्थ स्थानो की स्थापना की है। काशी, रामेश्वरम् समस्त हिन्दुओ के लिए चाहे वह उत्तर भारत के निवासी हो या दक्षिण भारत के समान रूप से पवित्र है । इसी तरह मथुरा और मदूरा दोनो की महिमा समान है । गगा और गोदावरी, यमुना और कावेरी सभी भारतीयो की पावन नदियॉ है । इनका जल पापो को नष्ट करता है । इस प्रकार से कन्या कुमारी और द्वारिकापुरी से परशुराम कुड (आसाम) तक समस्त भारत एक ही सास्कृतिक सूत्र से बध हुआ है । इस प्रकार देश मे सास्कृतिक एकता को उत्पन्न करने का श्रेय तीर्थो को ही जाता है ।

तीर्थो के शान्तिमय वातावरण का प्रभाव मनुष्य के मन पर पडता है तथा वहॉ का स्वस्थ और पवित्र वातावरण यात्रियो के शारीरिक स्वास्थ्य पर कुछ प्रभाव डालता है । तीर्थो

मे जाने से वहा पर उच्च कोटि के साधु महात्माओ का दर्शन एव ज्ञान युक्त उपदेश को सुनकर तथा उनके आदर्श चरित्र का अवलोकन कर मनुष्य के आध्यात्मिक चरित्र का विकास होता है। इस प्रकार तीर्थयात्रा करने से आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक विकास तथा उन्नति होती है। कूर्म पुराण मे उल्लिखित प्रसिद्ध तीर्थो और नदियो का विवरण निम्नलिखित है –

वाराणसी

कूर्मपुराण मे वाराणसी का बडा महत्व है । वरूणा और असी नामक नदियो के मध्य बसी होने के कारण इसे वाराणसी कहते है [319]। वही अविमुक्त नामक नित्य तत्व स्थित है । वाराणसी मे प्रविष्ट त्रिपथगामिनी अर्थात स्वर्ग, पाताल, एव भूलोक मे प्रवाहित होने वाली गगा विशेष रूप से सैकडो जन्मो मे किये गये पापो को नष्ट करती है [320]। गगा, श्राद्ध, दान, तप, जप, एव व्रत अन्यत्र भी सुलभ होते है किन्तु वाराणसी मे ये सभी अत्यन्त दुर्लभ है [321]। वाराणसी मे स्थित मनुष्य वायु का भक्षण करते हुए निरन्तर यज्ञ, हवन, दान, एव देवो की पूजा करता है[322]। यदि मनुष्य पापी, शठ, एव अधार्मिक हो तो भी वाराणसी मे पहुँचकर वह सबको पवित्र कर देता है[323]। वाराणसी मे जो महादेव की स्तुति एव आराधना करते है उन्हे सभी पापो से मुक्त गणेश्वर कहा गया है[324]। अन्यत्र, योग, ज्ञान, सन्यास, अथवा, अन्य उपायो से सहस्त्रो जन्मो मे परम पद की प्राप्ति होती है[325]। किन्तु जो शिव भक्त वाराणसी मे रहते है। उन्हे एक ही जन्म मे मोक्ष की प्राप्ति होती है[326]। शिव स्वय उस नगरी को नही छोडते इसलिए वह अविमुक्त क्षेत्र कहलाता है। वही गुह्यो मे अत्यन्त गुह्य तत्व है। इसे जानकर प्राणी मुक्त हो जाता है[327]। वाराणसी से श्रेष्ठ स्थान न तो हुआ है और न होगा क्योकि वहाँ नारायण देव तथा विश्वेश्वर महादेव स्थित है[328]। अत मोक्षार्थी को मरणपर्यनत वाराणसी मे निवास करना चाहिए, क्योकि वहाँ महादेव से ज्ञान प्राप्त कर मनुष्य मुक्त हो जाता है[329]। देवो मे जिस प्रकार पुरूषोत्तम नारायण श्रेष्ठ है एव ईश्वरो मे जैसे महेश्वर श्रेष्ठ है उसी प्रकार सभी स्थानो मे वाराणसी उत्तम है [330]। यहाँ रहने वाले जो पाप करते है उन सभी को काल स्वरूप देव शिव नष्ट कर देते है[331]। वेद के वचन से, माता–पिता के कहने से और गुरू के वचन से भी वाराणसी आने के विचार का त्याग नही करना चाहिए [332]। मोक्ष

की इच्छा से यहाँ आने वाले को मृत्यु के पश्चात् पुन भवसागर मे जन्म नही लेना पडता[333]। वेद व्यास ने पार्थ अर्जुन के ऊपर अनुग्रह कर उपदेश देने के बाद स्वय शकर की आराधना हेतु शकरपुरी (वाराणसी) चले गये[334]। पाण्डुपुत्र अर्जुन भी उनके कहने से शिव की शरण मे गये एव समस्त कार्य त्यागकर शिव भक्ति करने लगे[335]। शिव ने स्वय पार्वती से कहा कि दिव्य भूमि स्थान मे स्थित अन्य पवित्र स्थान तीर्थ एव मन्दिर श्मशान–रूपी काशी मे स्थित है[336]। मेरा गृह स्वरूप वाराणसी भूलोक से सम्बद्ध नही है अपितु यह अन्तरिक्ष मे अवस्थित है योगयुक्त ही इसे देख सकते है [337]। जो व्यक्ति मरण पर्यन्त वाराणसी से निवास करता है उसे भी ईश्वर के अनुग्रह से परमपद प्राप्त होता है[338]। वाराणसी मे प्राण निकलने के समय महेश्वर सभी प्राणियो को श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान करते है जिससे प्राणी बन्धन मुक्त हो जाता है[339]। मत्स्य पुराण के अनुसार जो व्यक्ति अपने प्राणो को त्यागता है उसे शिव का पद प्राप्त होता है[340]। वाराणसी मे जाने से ब्रह्म हत्या सम्बन्धी पाप दूर हो जाता है इसका सम्बन्ध मे एक कथा का उल्लेख है कि एक बार नारायण हरि ने काल रूद्र से कहा कि आप बह्म का शिर क्यो लिए हुए है तो परमेश्वर ने सम्पूर्ण वृतान्त बतलाया तब भगवान मे ब्रह्म के कपाल को स्थापित किया और यह कहा कि "जीवित हो जाय" ऐसा कहकर वह कलेवर विष्णु को दे दिया और कहा कि जो प्राणी मेरे इस कपाल युक्त वेश का स्मरण करेगे उसके इस लोक और परलोक के पाप नष्ट हो जायेगे [341]। आलोचित पुराण मे एक अन्य प्रायश्चित का उल्लेख मिलता है कि राजा दर्जय ने किसी समय कालिन्दी के तट पर उर्वशी को गान करते देखा और उसके पास गये। वहाँ उर्वशी ने राजा को दूसरे कामदेव के रूप मे देखकर उनके साथ चिरकाल तक रमण किया। उसके बाद राजा पुन वापस आये तो उनकी पतिव्रता पत्नी ने उनहे प्रायश्चित करने को कहा तो राजा 12 वर्ष तक कन्द मूल फल खाते रहे । एक दिन कण्व ऋृषि के आश्रम मे गये तो उन्होने उसका उपाय कहा कि तुम वाराणसी जाओ वहाँ गगा मे स्नान कर देवो एव पितरो को तर्पण कर विश्वश्वेर लिग का दर्शन कर पाप से मुक्त हो जाओगे वैसा ही हुआ [342]। इस प्रकार वाराणसी शिव की पापनाशिनी नगरी के नाम से विख्यात है यह सभी तीर्थो मे श्रेष्ठ एव दिव्य है, सहस्त्रो कोटि अधिक फल प्रद है [343]।

प्रयाग

स्कन्द पुराण के अनुसार सृष्टि के आदि मे यहॉ ब्रह्म जी का प्रकृष्ट यज्ञ हुआ था इसी से इसका नाम प्रयाग कहा जाता है । स्कन्द पुराण, कूर्मपुराण मे वाराणसी की ही भॉति प्रयाग का भी तीर्थो मे बडा महत्व है । प्रयाग को तीनो लोको मे प्रसिद्ध प्रजापति क्षेत्र कहा गया है । यहॉ पर स्नान करने वाले व्यक्ति स्वर्ग जाते है एव जो यहॉ पर मरते है उनका पुनर्जन्म नही होता है [344]। प्रयाग की रक्षा स्वय ब्रह्मादिक देवता करते है । वहॉ समस्त पापो को दूर करने वाले अन्य अनेक तीर्थ है। जिनका वर्णन सैकडो वर्षो मे नही हो सकता है [345]। वहॉ भी गगा की रक्षा मे साठ हजार धनुषो का उल्लेख किया गया है, साथ ही यमुना की रक्षा स्वय सात अश्वो वाले सविता देवता करते है [346]। इन्द्र स्वय विशेष रूप से प्रयाग मे रहते है । हरि समस्त देवो से युक्त मण्डल की रक्षा करते है[347]। महेश्वर न्यग्रोध (वटवृक्ष) की नित्य रक्षा करते है। देवगण समस्त पापो को दूर करने वाले पवित्र स्थान की रक्षा करते है[348]। आलोचित पुराण मे इस प्रकार का उल्लेख मिलता है कि जिन व्यक्तियो का अपने कर्म का अत्यन्त अल्प पाप भी शेष होता है तो वह मुक्ति नही पाते परन्तु प्रयाग का स्मरण मात्र करने वाले पुरूष के सभी कर्म एव पाप नष्ट हो जाते है [349]। इस तीर्थ के दर्शन, नाम कीर्तन, अथवा मिट्टी के र्स्पश करने से भी मनुष्य पाप से मुक्त हो जाता है[350]। प्रयाग मे पॉच कुण्ड का उल्लेख है जिसके मध्य मे जान्हवी स्थित है, इसलिए प्रयाग मे प्रवेश करने वाले मनुष्य का पाप उसी क्षण नष्ट हो जाता है[351]। ऐसा कहा गया है कि सहस्त्रो योजनदूर से भी जो मनुष्य गगा का स्मरण करता है, वह दुष्कृत करने वाला होने पर भी परम गति प्राप्त करता है [352]। इसका नाम का कीर्तन करने से उसे कल्याण का साक्षात्कार होता है, गगा जल के आचमन से स्वर्गलोक मे प्रतिष्ठा प्राप्त होती है [353]। मनुष्य व्याधियुक्त दीन अथवा क्रोधी होते हुए भी प्रयत्नपूर्वक गगा और यमुना के सगम पर पहुॅचकर जो मनुष्य प्राण का त्याग करता है वह सूर्य–सदृश दीप्त स्वर्ग के वर्णो वाले विमानो से युक्त होकर इच्छित पदार्थ प्राप्त करता है[354]। इतना ही नही गगा और यमुना सगम मे प्राण त्याग करने वाला व्यक्ति सभी रत्नो से युक्त अनेक प्रकार की ध्वजाओ से परिपूर्ण रमणियो से युक्त विमानो मे आनन्दोपभोग करता है [355]। शयन करने पर वह गीत और वाद्य की ध्वनि से जगाया जाता

है। वह पुरूष जब तक जन्म का स्मरण नही करता तब तक स्वर्ग मे पूजित होता है[356]। ऐसा कहा गया है कि अपने देश, विदेश, अरण्य अथवा गृह मे प्रयाग का स्मरण करते हुए जो प्राणो का त्याग करता है उसे ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है [357]। और वहॉ सिद्ध, गन्धर्व देवता एव दानव स्वर्ग मे उसकी पूजा करते है। तदन्तर स्वर्ग से भ्रष्ट होने पर वह मनुष्य जम्बूद्वीप का पति होता है [358]। तदुपरान्त वारम्बार शुभकर्मो का चिन्तन करते हुए गुणी एव सम्पन्न हो जाता है तथा मन वचन और कर्म से वह सत्य धर्म मे प्रतिष्ठित होता है [359]। पद्म पुराण के उत्तर खण्ड मे भी प्रयाग के महात्म्य का बहुत विस्तृत वर्णन किया गया है । पद्म के अनुसार जैसे ग्रहो मे सूर्य तथा ताराओ मे चन्द्रमा है वैसे ही तीर्थो मे प्रयाग सर्वोत्तम है । 3 जो पुरूष यहॉ के अक्षयवट का दर्शन करता है उसके दर्शन मात्र से ही ब्रह्म हत्या नष्ट हो जाती है । 4 यह अक्षयवट आदिव्रत कहलाता है और कल्पान्त मे भी देखा जाता है। 7 इसके पत्ते पर भगवान् विष्णु शयन करते है, यह वट अव्यय समझा जाता है। वहॉ भगवान माधव नाम से सुखपूर्वक नित्य विराजते है, उनका दर्शन करने से मनुष्य पापो से मुक्त हो जाता है। 8 गोधती, चाण्डाल, शठ, दुष्टचित्त, बालघाती या मूर्ख जो भी यहॉ मरता है, वह चर्तुभुज होकर अनन्त काल तक बैकुण्ठ मे वास करता है ।10 पद्म पुराण के उत्तरखण्ड के 23 वे अध्याय मे पुराणकार ने प्रयाग की महिमा का वर्णन करते हुए प्रत्येक श्लोक के अन्तिम चरण मे "स तीर्थराजो जयति प्रयाग" प्रयुक्त किया है। इसी प्रकार सगम की महिमा का वर्णन करते हुए लिखा है कि जो मनुष्य यहॉ पर स्नान करता है उसे राजसूय और अश्वमेघ यज्ञ का फल प्राप्त होता है [360]।

माघमास में प्रयाग का महत्व

कूर्मपुराण मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि माघ महीने मे साठ सहत्र एव साठ सौ तीर्थ गगा और यमुना के सगम पर आते है [361]। वहॉ तीन दिन स्नान करने का जो फल मिलता है वह फल सौ हजार गायो का भली–भॉति दान करने से नही होता है[362]। गगा और यमुना के सगम पर जो करीषाग्नि का साधन करता है वह पूर्ण शरीर वाला निरोग एव पञ्चेन्द्रिय से युक्त होता है। ऐसी साधना करने वाले के शरीर मे जितने रोमकूप होते है उतने सहस्त्र वर्षो तक वह पुरूष स्वर्ग मे पूजित होता है[363]। जो मनुष्य लोक प्रसिद्ध सगम पर जल मे प्रवेश

करते है, वह राहु ग्रस्त चन्द्रमा के सदृश सभी पापो से मुक्त हो जाता है[364]। पद्मपुराण के अनुसार योग युक्त विद्धान की जो गति होती है उसी गति को गगा और यमुना के सगम मे अपने प्राणो का परित्याग करने वाला मनुष्य प्राप्त करता है [365]। इसी पुराण के उत्तर खण्ड मे कहा गया है कि प्रयाग मे जो माघ स्नान करता है, उसके पुण्य फल की कोई गणना नही होती है [366]।

प्रयाग तीर्थ यात्रा हेतु वर्जित साधन

कूर्मपुराण मे यह उल्लेख किया गया है कि प्रयाग तीर्थ की यात्रा करने वाला कोई मनुष्य यदि बैल पर बैठकर आता है तो वह व्यक्ति दस सहस्त्र कल्पपरिमित वर्ष तक घोर नरक मे वास करता है तदन्तर उसके प्रति गौ का अत्यन्त भयकर क्रोध दूर होता है । उस मनुष्य के पितृगण उसका जल ग्रहण नहीं करते[367]। जो मनुष्य ऐश्वर्य, लोभ या मोहवश यान द्वारा तीर्थ मे जाता है उसकी वह तीर्थ यात्र निष्फल हो जाती है। इसलिए तीर्थ यात्रा मे यान का त्याग करना चाहिए[368]।

गगा का महत्व

कूर्मपुराण मे गगा के माहात्म्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि गगा सभी तीर्थो एव नदियो मे श्रेष्ठ है। यह सभी महापात की प्राणियो को मोक्ष देती है [369]। गगा सर्वत्र सुलभ होने पर भी गगाद्वार, प्रयाग एव गगासागर इन तीन स्थानो पर दुर्लभ होती है[370]। मोक्ष के अभिलाषी पाप से घिरे हुए चित्त वाले सभी प्राणियो के लिए गगा के समान दूसरी गति नही है[371]। गगा समस्त पवित्र पदार्थो से अधिक पवित्र एव कल्याणकारी तत्वो से अधिक कल्याणकारी है । महेश्वर के मस्तक से नीचे आने के कारण सभी पापो को दूर करने वाली एव शुभ है [372]। गगा के पूर्व तट पर स्थित तीनो लोको मे प्रसिद्ध सर्वसमुद्र नामक गह्वर एव प्रतिष्ठान नामक स्थान पर जाकर यदि मनुष्य बह्मचर्य धारण कर एव क्रोध को जीतकर तीन दिन पर्यन्त निवास करता है तो वह सभी पापो से मुक्त होकर अश्वमेघ का फल प्राप्त करता है[373]। प्रतिष्ठान नामक स्थान के उत्तर एव भागीरथी के वामपार्श्व मे तीनो लोको मे प्रसिद्ध हस प्रपतन नामक तीर्थ है [374]। उसके स्मरण मात्र से अश्वमेघ का फल होता है एव यहॉ जाने वाले व्यक्ति सूर्य चन्द्रमा के रहने तक स्वर्गलोक मे पूजित होता है[375]। जो व्यक्ति

रमणीक उर्वशी के हस सदृश श्वेत तट पर प्राणो का परित्याग करता है वह व्यक्ति वर्ष पर्यन्त पितरो के सहित स्वर्गलोक मे निवास करता है [376]। पवित्र मनुष्य ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर सध्यावत के नीचे उपासना कर ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है[377]। जो कोटि तीर्थ मे पहुँचकर प्राणो का त्याग करता है वह कोटि सहस्र वर्ष पर्यन्त स्वर्गलोक मे पूजित होता है[378]। आलोचित पुराण मे कहा गया है कि जहॉ देवी के साथ वटेश्वर महादेव स्थित है वह स्थान तीर्थ एव तपोवल है । इस सत्य को द्विजातियो, साधुओ, अपने पुत्र, मित्रो एव अनुगामी शिष्य के कान मे कहना चाहिए [379]। यह सत्य सभी पापो से मुक्त करने वाला महर्षियो का गोपनीय रहस्य है । यहॉ वेद का अध्ययन कर द्विज निर्मल हो जाता है [380]। जो व्यक्ति नित्य पवित्रता पूर्वक इस पवित्र तीर्थ का वर्णन सुनाता है वह जन्मान्तर की बातो का स्मरण करने वाला हो जाता है तथा र्स्वग लोक मे आनन्द प्राप्त करता है [381]। जहॉ महाभागा गगा होती है वही देश है और वही तपोवन होता है। गगा के तट पर स्थित इस स्थान को सिद्धि क्षेत्र कहा गया है[382]। कलयुग मे अनेक तीर्थ होते है। त्रेता का श्रेष्ठ तीर्थ पुष्कर है । द्वापर का तीर्थ कुरूक्षेत्र है किन्तु कलियुग मे गगा ही की विशिष्टता है[383]। गगा का ही सेवन करना चाहिए एव विशेषरूप से प्रयाग मे गगा की सेवा करनी चाहिए। क्योकि अन्य तीर्थादि कलियुग मे उत्पन्न अत्यन्त कठिन पाप को दूर करने मे समर्थ नही है[384]। गगा पृथ्वी पर मनुष्यो को तारती है, पाताल मे नागो को तारती है एव द्युलोक मे देवो को तारती है इसी से इसको त्रिपथगा कहा जाता है [385]। मनुष्य की हड्डियॉ जब तक गगा मे रहती है उतने सहस्र वर्षो तक वह स्वर्ग लोक मे पूजित होता है [386]। इस प्रकार गगा सभी तीर्थो मे श्रेष्ठ है, गगा की सेवा करनी चाहिए एव विशेषरूप से प्रयाग मे गगा की सेवा करनी चाहिए, अन्य तीर्थादि कलियुग मे उत्पन्न अत्यन्त कठिन पाप को दूर करने मे समर्थ नही है [387]। इच्छा अथवा अनिच्छापूर्वक जो गगा मे मरता है वह मरने पर स्वर्ग मे जाता है, एव नरक का साक्षात्कार नही करता [388]।

यमुना

कूर्म पुराण मे यमुना का भी बडा महत्व बतलाया गया है । कहा जाता है कि जिस मार्ग से गगा गयी है उसी मार्ग से तीनो लोको मे प्रसिद्ध सूर्य की पुत्री यमुना भी गयी है।

सहस्त्रो योजन दूर पर भी कीर्तन करने से यमुना पापो को नष्ट कर देती है [389]। यमुना मे स्नान करने एव वहॉ का जल पीने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है एव अपने कुल की सात पीढियो को पवित्र कर देता है। जो मनुष्य वहॉ प्राणो का त्याग करता है। उसे परम गति होती है[390]। कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को स्नान कर पवित्रापूर्वक धर्मराज का तर्पण करने से पुरूष निसन्देह सभी पापो से मुक्त हो जाता है [391]। यमुना के दक्षिण तट पर कम्बल और अश्वतर नामक दो नाग अवस्थित है। वहॉ स्नान करने एव जल पीने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है[392]। महादेव के इस स्थान पर जाकर मनुष्य अपने को एव दस पूर्व की एव दस पश्चात् की सभी पीढियो को मुक्त कर देता है। वहॉ स्नानकर वह मनुष्य अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करता है एव महाप्रलय पर्यन्त स्वर्ग लोक प्राप्त करता है[393]।

प्रयाग मे दान का महत्व

कूर्मपुराण मे प्रयाग मे दान के महत्व का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि जो व्यक्ति प्रयाग मे कपिल अथवा पातल वर्ण की स्वर्ण गठित श्रृगो, चॉदी से मढे खुरो एव वस्त्राच्छादित कण्ठ वाली, दूध देने वाली गाय का दान करता है वह व्यक्ति रुद्रलोक मे उतने सख्यक सहस्त्र वर्षो तक पूजित होता है, जितने रोम उस गाय के शरीर मे होते है [394]।

आलोचित पुराण मे यह भी कहा गया है कि जो मनुष्य अपने सभी पुत्रो एव बालको को अपने सदृश यहॉ गगा मे स्नान एव जलपान कराता है और ब्राह्मणो को दान दिलवाता है उसे उत्तम गति की प्राप्ति होती है [395]। आलोचित पुराण मे कहा गया है कि गगा और यमुना के मध्य आर्य विवाह द्वारा कन्या का दान करने से व्यक्ति नरक का साक्षात्कार नही करता और उत्तर कुरु मे जाकर अनन्त काल तक आनन्दोपभोग करता है [396]।

प्रयाग में वर्जदान

आलोचित पुराण मे एक स्थान पर यह कहा गया है कि जो व्यक्ति स्वकार्य पितृकार्य या देवता की पूजा के समय गगा और यमुना के मध्य मे ग्राम, स्वर्ण, मुक्ता या अन्य कोई पदार्थ दान स्वरुप ग्रहण करता है उसके तीर्थ का पुण्य उस समय तक निष्फल रहता है जब

तक वह उस पदार्थ का भोग करता रहता है [397]। इस प्रकार मनुष्यों को तीर्थ एव पवित्र मन्दिरो मे दान लेना वर्जित किया गया है[398]।

ऋणप्रमोजन तीर्थ

प्रयाग के दक्षिण मे यमुना के उत्तरी तट पर ऋण प्रमोचन नामक तीर्थ है वहॉ स्नान कर, एक रात्रि पर्यन्त निवास करने से पुरुष ऋण से मुक्त हो जाता है, ऐसा करने वाले पुरूष को सूर्यलोक की प्राप्ति होती है, और सदा ऋण से मुक्त रहता है [399]।

अग्नि एवं अनरक तीर्थ

यमुना के दक्षिणी तट पर प्रसिद्ध अग्नितीर्थ है। यमुना के पश्चिम भाग मे धर्मराज का अनरक नामक तीर्थ है। वहॉ स्नान करने वाले स्वर्ग जाते है एव जो वहॉ मरते है वे मुक्त हो जाते है [400]।

कुरुओं का तीर्थ

कुरु तीर्थ को देवो द्वारा बन्दित ऋषियो के आश्रमो से पूर्ण एव सभी पापो का नाशक कहा गया है[401]। दम्भ और मात्सर्य छोडकर जो व्यक्ति वहॉ स्नानोपरान्त जो भी दान करता है उससे दोनो माता एव पिता का कुल पवित्र हो जाता है [402]।

गया तीर्थ

कूर्म पुराण मे श्राद्धादिक क्रिया की दृष्टि से गया तीर्थ का बडा महत्व है । परम गृहय गया नामक तीर्थ पितरो का अत्यन्त प्रिय है, वहॉ पिण्डदान करने से मनुष्य का पर्नुजन्म नही होता है[403]। जो एक बार भी गया जाकर पिण्डदान करता है उसके द्वारा तारे गये पितृगण परमगति को प्राप्ति कर लेते है[404]। वहॉ लोक कल्याण हेतु रूद्र ने शिलातल पर अपना चरण चिन्ह स्थापित किया वहॉ पर पितरो का पिण्डदान कर प्रसन्न करना चाहिए [405]। आलोचित पुराण मे कहा गया है कि मनुष्य को समर्थ होने पर गया जाकर पिण्डदान करना चाहिए, ऐसा न करने से, पितृगण शोक करते है और उसका परिश्रम व्यर्थ होता है [406]। पितृगण इस आशा मे रहते है कि गया जो जायेगा वही तारेगा[407]। पितरो का यह मानना है कि यदि पापयुक्त एव अपने धर्म के प्रेम से रहित भी मेरे वश का कोई व्यक्ति गया जायेगा

तो वह हमे मुक्त कर देगा[408]। इस प्रकार पुरुष को शील एव गुण सम्पन्न बहुत से पुत्रो की कामना करनी चाहिए कि उनमे से कोई एक भी तो गया जायेगा[409]। पद्म स्वर्ग [410] वायु अग्नि, आदि कई पुराणो के अनुसार भी है कि बहुत से पुत्रो की मनुष्य को इसलिए कामना करनी चाहिए क्योकि उनमे से कोई एक गया तो आये अथवा पिता की सद्गति के लिए नीले रग का सॉड छोड दे। वायु पुराण के अनुसार गया मे ऐसा कोई स्थान नही है जो तीर्थ न हो। वहॉ सभी तीर्थो का सानिध्य है, अत गया तीर्थ सर्वश्रेष्ठ है । ब्रह्मज्ञान, कुरुक्षेत्र के पास तथा गोसाला मे मरने से क्या लेना है, यदि पुत्र गया जाय और वहॉ पिण्डदान कर दे। आलोचित पुराण मे कहा गया है कि ब्राह्मण को विशेष रूप से सभी प्रकार के प्रयत्न कर गया जाकर पिण्डदान करना चाहिए[411]। वे मनुष्य निश्चय ही धन्य है जो गया मे पिण्डदान करके दोनो माता एव पिता के कुल की सात पीढियो का उद्धारकर परम गति को प्राप्त करते है[412]।

प्रभास तीर्थ

प्रभास तीर्थ को सिद्धो का निवास स्थान कहा गया है। वहॉ भगवान शिव स्थित हैं इस दृष्टि से इसका बडा महत्व है । वहॉ स्नान, तप, श्राद्ध एव ब्राह्मणो का पूजनकर व्यक्ति ब्रह्म का अक्षय तथा श्रेष्ठ लोक प्राप्त करता है [413]।

त्रैयम्बक तीर्थ

त्रैयम्बक नामक यह तीर्थ सभी देवो द्वारा नमस्कृत है । वहॉ रुद्र का पूजन करने से ज्योतिष्टोम यज्ञ का फल प्राप्त होता है । इतना ही नही वहॉ पर जटाधारी सुर्वणाक्ष महादेव की आराधना एव ब्राह्मणो का पूजन करने से निश्चय ही गाणपत्य पद की प्राप्ति होती है[414]।

सोमेश्वर तीर्थ

तीर्थो मे रुद्र का श्रेष्ठ सोमेश्वर तीर्थ कहा गया है वह रुद्र का सालोक्य देने वाला सभी व्याधियो को दूर करने वाला एव पवित्र तीर्थ है[415]।

विजय तीर्थ

तीर्थो मे विजय नामक सुन्दर तीर्थ है वहॉ महेश का विजय नामक लिग है । वहॉ पर छ महीने तक सयमित आहार करते हुए ब्रह्मचर्य पूर्वक निवास करते श्रेष्ठ ब्राह्मण परमपद प्राप्त करते है ।

एकाग्र तीर्थ

पूर्व देश मे शकर का गाणापत्य फल देने वाला एकाग्र नामक दूसरा भी सुन्दर श्रेष्ठ तीर्थ कहा गया है[416]। यहॉ पर शिव के भक्तो को थोडी सी भी भूमि दान करने से विषयाभिलाषी व्यक्ति सार्वभौम राजा होता है तथा मोक्षार्थी को मोक्ष प्राप्त होता है[417]।

पुरुषोत्तम तीर्थ

पुरुषोत्तम नामक नारायण का अन्य तीर्थ है वहॉ परम पुरुष नारायण रहते है[418]। यहॉ स्नानकर श्रेष्ठ विष्णु की आराधना एव ब्राह्मणो का पूजनकर द्विज को विष्णुलोक की प्राप्ति होती है [419]।

गोकर्ण तीर्थ

तीर्थो मे श्रेष्ठ गोकर्ण नामक समस्त पापो को दूर करने वाले प्रसिद्व तीर्थ है। वह शम्भु का निवास स्थान है[420]। महादेव के गोकर्णेश्वर नामक श्रेष्ठ लिग का दर्शन कर मनुष्य अभिलाषित पदार्थ प्राप्त कर रुद्रदेव का प्रिय हो जाता है [421]।

उत्तर गोकर्ण

विष्णु का कुब्जाम्र नामक अन्य पवित्र स्थान है। वहॉ विष्णु स्वरुप परम पुरुष का पूजन कर मनुष्य श्वेतद्वीप मे आदर प्राप्त करता है [422]। यहॉ रुद्र ने दक्ष के यज्ञ का विध्वस कर नारायण देव को छोडा था [423]।

कुब्जाम्र

विष्णु का कुब्जाम्र नामक अन्य पवित्र स्थान है । वहॉ विष्णु स्वरुप परम पुरुष का पूजन कर मनुष्य श्वेतद्वीप मे आदर प्राप्त करता है [424]। जहॉ रुद्र ने दक्ष के यज्ञ का विध्वस

कर नारायण देव को छोडा था[425] चतुर्दिक एक योजन क्षेत्र सिद्धो एव ऋषियो के समूह से बन्दित है । वहॉ विष्णु का पवित्र मन्दिर है जिसमे विष्णु स्थित है [426]।

कोका मुख तीर्थ

विष्णु का एक अन्य तीर्थ है जिसे कोकामुख नाम से जाना जाता है। यहॉ मरा हुआ मनुष्य पापो से मुक्त होकर विष्णु स्वरुप प्राप्त करता है [427]।

अश्वतीर्थ

यह अश्वतीर्थ नाम से प्रसिद्व तीर्थ सिद्धो का निवास स्थल है। वहॉ स्वय नारायण हयग्रीव रुप से रहते है[428]।

पुष्कर तीर्थ

ब्रह्मा का तीनो लोको मे प्रसिद्ध यह पुष्कर तीर्थ मनुष्य के सभी पापो को दूर करने वाला एव मृतको को ब्रह्मलोक प्रदान करता है [429]। जो ब्राह्मण मन से पुष्कर तीर्थ का स्मरण करता है वह पातको से मुक्त होकर इन्द्र के पास आनन्द प्राप्त करता है [430]। वहॉ देवता, गन्धर्व, यक्ष, सर्प, राक्षस एव सिद्धो के समूह ब्रह्म की उपासना करते है [431]। इतना ही नही मनुष्य यदि स्नानोपरान्त ब्रह्म एव द्विजो की पूजा करे तो ब्रह्म का साक्षात्कार होता है[432]। और वहॉ इन्द्र का दर्शन करने से मनुष्य सुन्दर रूप वाला हो जाता है एव समस्त अभिलषित पदार्थो को प्राप्त करता है [433]। पद्म पुराण[434] एव महा०वन०[435] के अनुसार पुष्कर मे जाना बडा कठिन है जो भाग्यशाली होते है वही वहॉ जाते है। पुष्कर मे तपस्या दुष्कर है। पुष्कर का दान भी दुष्कर है और वहॉ वास करना तो और भी दुष्कर कहा गया है। पापो के नाशक, देदीप्यमान तीन पुष्कर क्षेत्र है, इनमे सरस्वती बहती है। ये आदि काल से सिद्वतीर्थ है। पुष्कर का तीर्थ होने का लौकिक कारण क्या है परन्तु इतना अवश्य कहा गया है कि जिस प्रकार देवताओ मे मधुसूदन श्रेष्ठ है, वैसे ही तीर्थो मे पुष्कर को आदि तीर्थ कहा गया है। यदि कोई मनुष्य सौ वर्षो तक लगातार अग्निहोत्र की उपासना करे या कार्तिकी पूर्णिमा की एक रात पुष्कर मे वास करे तो दोनो का फल समान कहा गया है[436]। पद्मपुराण मे एक अन्य स्थान पर एक ऐसा उल्लेख मिलता है कि पुष्कर को तीर्थो का गुरु कहा जाता है जैसे

तीर्थो मे प्रयाग। इसलिए लोग इसे पुष्करराज भी कहते है। पुष्कर की गणना पञ्चतीर्थो मे भी है और पञ्च सरोवरो मे भी। पञ्चतीर्थ का क्रम इस प्रकार है । (1) पुष्कर (2) कुरुक्षेत्र (3) गया (4) गगाजी (5) प्रभास ।

पञ्चसरोवरो के नाम इस प्रकार है (1) मान सरोवर (तिब्बतीय क्षेत्र हिमालय पर), (2) पुष्कर (3) बिन्दुसरोवर (सिद्धपुर), (4) नारायण सरोवर (कच्छ), (5) पम्पा सरोवर ।

सप्त सारस्वत तीर्थ

ब्रह्मादि से सेवित सप्तसारस्वत को श्रेष्ठ तीर्थ कहा गया है । यहॉ रुद्र का पूजन करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है [437]। सप्त सारस्वत तीर्थ मे रूद्र के शरणागत एव (नम शिवाय) इस पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करने वाले मकणक ने शिव की आराधना की थी [438]।

रुद्रकोटि तीर्थ

यहॉ रुद्र का रुद्रकोटि नामक तीनो लोको मे प्रसिद्ध एक अन्य अत्यन्त पवित्र तीर्थ है। प्राचीन काल मे अत्यन्त पवित्र समय मे देवदर्शन के हेतु इच्छुक एक करोड इन्द्रियजयी ब्रह्मार्षिगण उस स्थान पर गये [439]।

मधुवर नामक तीर्थ

रुद्र का यह मधुवन नामक एक अन्य श्रेष्ठ तीर्थ है । ऐसा कहा जाता है कि यहॉ जाने वाले को इन्द्र के आधे आसन की प्राप्ति होती है[440]।

पुष्प नगरी

पुष्प नगरी नामक एक अत्यन्त शुभ देश का उल्लेख किया गया है जहॉ पर पितरो का पूजन करने से मनुष्य अपने कुल की सौ पीढियो को तार देता है [441]।

कालञ्जर तीर्थ

कालञ्जर एक महान तीर्थ है । वहॉ महेश्वर रुद्र ने काल को जीर्ण किया था [442]। यहॉ शिव ने शिवभक्त श्वेत नामक राजा की रक्षा की और मृत्यु को मारा था।

महालय तीर्थ

महादेव का महालय नामक यह प्रसिद्व एव अत्यन्त गुह्य श्रेष्ठ स्थान कहा गया है[443]। यहॉ पर रुद्र ने नास्तिको के लिए प्रमाण स्वरुप शिलातल पर पैर का चिन्ह प्रस्थापित किया है[444]। वहॉ स्नानोपरान्त शकर के पद का दर्शन एव सिर द्वारा प्रणाम करने से रुद्र के समीक्ष की प्राप्ति होती है [445]।

केदार तीर्थ

केदार नाम से प्रसिद्व एक अन्य स्थान का उल्लेख किया गया है। वह शुभ स्थान सिद्धो का निवास भूमि है [446]। वहॉ स्नानोपरान्त वृषकेतन नामक महादेव का पूजन एव शुद्ध जल पीने से गाणपत्य की प्राप्ति होती है और श्राद्धदानादिक कार्य करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है । वहॉ पर ब्राह्मण तथा मन को जीतने वाले योगी रहते है [447]।

प्लाक्षावतरण तीर्थ

प्लाक्षावरण नामक इस तीर्थ को सर्वपाप विनाशक कहा गया है । वहॉ श्रीनिवास की पूजा करने से विष्णुलोक मे प्रतिष्ठा प्राप्त होती है । मगधराज का स्वर्ग प्रदान करने वाला एक अन्य तीर्थ है । वहॉ की यात्रा करने से द्विजोत्तम को अक्षय स्वर्ग प्राप्त होता है [448]।

कनरवल तीर्थ

हरिद्वार मे स्थित यह कनरवल नामक पवित्र एव महापातको को नष्ट करने वाला तीर्थ है, जहॉ रुद्र देव ने दक्ष के यज्ञ को नष्ट किया था [449]। वहॉ पवित्रता एव भक्तिपूर्वक गगा मे स्नान कर मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है एव मरने पर ब्रह्मलोक प्राप्त करता है [450]। इस पुराण के अतिरिक्त एक अन्य स्थान पर भी ऐसा उल्लेख मिलता है कि सभी तीर्थो मे भटकने के बाद कनवरल मे स्नान करने के बाद एक कनवरल की मुक्ति हो गयी थी । इसलिए मुनियो ने इसका नाम 'कनरवल' कर दिया ।

महातीर्थ

महातीर्थ नाम से प्रसिद्ध नारायण का प्रिय तीर्थ है । वहॉ हृषीकेष की पूजा करने वाले को श्वेतद्वीप की प्राप्ति होती है [451]।

श्रीपवर्त नामक स्थान

श्री पर्वत नामक एक अन्य श्रेष्ठ तीर्थ है। यहॉ प्राणो का त्याग करने वाला रुद्र का प्रिय हो जाता है [452]। वहॉ महेश्वर देवी सहित स्थित है। वहॉ पर किये जाने वाला स्नान एव पिण्डदानादि कार्य उत्तम कर्म अक्षय होता है तथा पवित्र गोदावरी नदी समस्त पापो का विनाश करती है। विधि पूर्वक उसमे स्नान करके पितरो एव देवो का तर्पण करने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त होकर सहस्त्र गौवो के दान का फल प्राप्त करता है [453]। तीन रात्रि या एक रात्रि का उपवास कर शुद्ध जलवाली कावेरी नदी मे स्नानोपरान्त तर्पणादि उदक क्रिया करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [454]।

स्वामितीर्थ

स्वामितीर्थ तीनो लोको मे प्रसिद्ध महान तीर्थ है । देवो से पूजित स्कन्द (कार्तिकेय) देव वहॉ नित्य निवास करते है [455]। कुमार धारा मे स्नान कर देवादि का तर्पण एव कार्तिकेय की उपासना करने से मनुष्य स्कन्द के साथ आनन्दोपभोग करता है [456]।

चन्द्रतीर्थ

कावेरी के उद्‌गम स्थान पर चन्द्र तीर्थ नामक अक्षय फलदायी तीर्थ है । उस तीर्थ मे रहने वाले और मरने पर निश्चय स्वर्ग की प्राप्ति होती है [457]। जो भक्त विध्यपाद मे देवाधिदेव सदाशिव का दर्शन करते है उन द्विजो को यम का घर नही देखना पडता [458]।

वृष नामक तीर्थ

देविका मे सिद्वो से सेवित वृष नामक तीर्थ है । वहॉ स्नानोपरान्त (तर्पणादि) उदकक्रिया करने से योगसिद्धि प्राप्त होती है [459]।

दशाश्वमेध तीर्थ

दशाश्वमेध नाम का सर्वपाप विनाशक तीर्थ है । वहॉ मनुष्य को दश अश्वमेघ यज्ञ करने का फल प्राप्त होता है [460]।

पुण्डरीक नामक तीर्थ

ब्राह्मणो से सुशोभित पुण्डरीक नामक तीर्थ है। वहॉ की यात्रा करने से सयत चित मनुष्य पुण्डरीक यज्ञ का फल प्राप्त करता है।

ब्रह्म तीर्थ

बह्मतीर्थ को तीर्थो मे श्रेष्ठ कहा गया है यहॉ ब्रह्म का पूजन करने से बह्मलोक मे प्रतिष्ठा होती है। सरस्वती के लुप्त होने के कारण स्थान, सुन्दर प्लक्षप्रस्रवण, श्रेष्ठ व्यास तीर्थ, पर्वतो मे उत्तम मैनाक एव समस्त पापो को नष्ट करने वाला यमुना का उद्‌गम स्थान है (ये सभी तीर्थ प्रसिद्ध है) [461]।

कुबेरतुंग तीर्थ

सिद्धो एव चरणो से सेवित पापनाशक कुबेरतुग नामक तीर्थ है । वहॉ प्राण का त्याग करने से मनुष्य कुबेर का अनुचर होता है [462]।

उमातुग नामक तीर्थ

यह उमातुग नामक प्रसिद्व तीर्थ है, जहॉ पार्वती स्थित है । वहॉ पार्वती की पूजा करने से सहस्त्र गायो के दान का फल प्राप्त होता है [463]।

भृगु तुंग तीर्थ

भृगुतुग तीर्थ मे किया गया तप, श्राद्ध एव दान दोनो कुलो अर्थात मातृकुल एव पितृकुल की सात पीढियो को पवित्र कर देता है [464]।

कालसर्पि तीर्थ

कालसर्पि नामक काश्यप का महान तीर्थ है । पाप क्षय की इच्छा से वहॉ नित्य श्राद्ध एव दान करना चाहिए [465]।

कुरूजागल तीर्थ

कुरूजागल नामक तीर्थ द्विजातियो से सेवित है। वहॉ विधि पूर्वक दान करने से ब्रह्मलोक मे प्रतिष्ठा प्राप्त होती है [466]।

मुञ्जपृष्ठ नामक तीर्थ

मुञ्जपृष्ठ नामक तीर्थ मे महादेव ने प्राणियो के हितार्थ नास्तिको के प्रमाण स्वरूप अपने पद चिन्ह की स्थापना की है[467]।

कनक नन्दा नामक तीर्थ

मुञ्ज पृष्ठ नामक तीर्थ के उत्तर ब्रह्मर्षिगण से सेवित तीनो लोको मे प्रसिद्ध कनकनन्दा नामक तीर्थ का उल्लेख है[468]। वहॉ पर स्नान करने पर ब्राह्मण सशरीर स्वर्ग जाते है एव वहॉ पर दिया गया दान और किया गया बौद्ध अक्षय कहा गया है । वहॉ स्नान करने पर मनुष्य पाप रहित होकर तीनो ऋणो से मुक्त हो जाता है ।

जालेश्वर तीर्थ

यह जालेश्वर नामक तीर्थ सभी पापो को नष्ट करता है। वहॉ जाकर नियम पूर्वक रहने वाला मनुष्य सभी कामनाओ को प्राप्त करता है ।

भद्रेश्वर नामक तीर्थ

नर्मदा के उत्तरी तट पर तीनो लोको मे प्रसिद्ध भद्रेश्वर नामक सभी पापो को दूर करने वाला शुभतीर्थ का उल्लेख किया गया है । नर्मदा मे स्नान करने से मनुष्य देवो के साथ आनन्द करता है [469]।

आभ्रातकेश्वर तीर्थ

इस आभ्रातकेश्वर नामक तीर्थ मे स्नान करने से मनुष्य सहस्त्र गायो के दान करने का फल प्राप्त करता है[470] ।

अगारकेश्वर नामक तीर्थ

ब्रह्मचर्य पूर्वक नियताहार करते हुए अगारकेश्वर नामक तीर्थ मे जाने से समस्त पापो से विशुद्ध होकर रूद्रलोक मे आदर प्राप्त करता है[471]।

केदारनाथ तीर्थ

अगारकेश्वर नामक तीर्थ से केदान नाथ जाने का विधान है। केदारनाथ मे स्नानोपरान्त देवो एव पितरादिको को जल प्रदान करने से मनुष्य समस्त कामनाओ को प्राप्त करता है [472]।

पिप्लेश नामक तीर्थ

पिप्लेश नामक तीर्थ मे जाकर स्नान करने से मनुष्य रूद्रलोक मे पूजित होता है [473]।

विमलेश्वर तीर्थ

विमलेश्वर नामक तीर्थ मे जाकर वहॉ प्राणो का त्याग करने से मनुष्य को रूद्रलोक की प्राप्ति होती है [474]।

शूलभेद नामक तीर्थ

शूलभेदक तीर्थ मे जाकर स्नानोपरान्त देर्वचन करने से सहस्त्रो गायो के दान का फल प्राप्त होता है[475]।

वलि तीर्थ

श्रेष्ठ वलि तीर्थ मे जाकर वहॉ स्नान करने से मनुष्य राजा होता है [476]।

शक्रतीर्थ

वलि तीर्थ से शक्रतीर्थ जाने का विधान है । वहॉ एक रात्रि उपवास कर यथाविधि स्नानोपरान्त नारायण हरि की आराधना करनी चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य को सहस्त्रो गायो का फल प्राप्त कर विष्णुलोक मे जाता है [477]।

ऋषि तीर्थ

शक्र तीर्थ से ऋषि तीर्थ जाने का विधान है । ऋषि तीर्थ मे स्नान मात्र करने से मनुष्य शिव लोक मे पूजित होता है [478]।

परमसुन्दर तीर्थ

परम सुन्दर तीर्थ मे स्नान करने से सहस्र गायो के दान का फल होता है [479]। नारद ने यहॉ पर पूर्व काल मे तप किया था एव महेश्वर ने प्रसन्न होकर उन्हे योग विषयक ज्ञान प्रदान किया था[480]।

ब्रह्मेश्वर लिग

बह्म के द्वारा निर्मित लिग ब्रह्मेश्वर नाम से प्रसिद्ध है। वहॉ स्नान करने से मनुष्य ब्रह्मलोक मे पूजित होता है [481]।

ऋण तीर्थ

बह्मेश्वर तीर्थ से ऋणतीर्थ जाने का विधान है । वहॉ जाने पर निश्चय ही ऋण से मुक्त हो जाता है [482]।

महेश्वर तीर्थ

ऋणतीर्थ से महेश्वर तीर्थ जाना चाहिए ऐसा करने से जन्म का फल प्राप्त होता है[483]।

भीमेश्वर तीर्थ

महेश्वर तीर्थ से भीमेश्वर तीर्थ जाना चाहिए । मनुष्य वहॉ स्नान मात्र से सभी दु खो से मुक्त हो जाता है [484]।

पिगलेश्वर तीर्थ

भीमेश्वर तीर्थ से पिगलेश्वर तीथ्र जाना चाहिए । वहॉ का फल प्राप्त होता है [485]। पिगलेश्वर मे जो व्यक्ति गौ का दान करता है वह उस कपिला के तथा उसके कुल मे उत्पन्न सन्तानो के शरीरो पर जितने रोम होते है उतने ही सहस्त्र वर्ष पर्यन्त रूद्र लोक मे

आदर की प्राप्ति करता है [486]। इतना ही नही जो मनुष्य वहॉ प्राण का त्याग करता है, वह सूर्य एव चन्द्रमा के रहने के समय तक अक्षय आनन्द करता है [487]। जो मनुष्य नर्मदा के तट पर आश्रय कर रहते है वे मरने पर पुण्यवान सज्जनो की भॉति स्वर्ग जाते है [488]।

दीप्तेश्वर तीर्थ

व्यास तीर्थ के तपोवन मे स्थित दीप्तेश्वर की यात्रा करनी चाहिए । ऐसा उल्लेख किया गया है कि प्राचीन काल मे व्यास से भयभीत महानदी वहॉ निवर्तित हुई थी जो व्यास के हुकार से वह वहॉ से दक्षिण की ओर चली गयी [489]। इस तीर्थ मे जो प्रदक्षिणा करता है उसके ऊपर व्यास प्रसन्न होते है, एव वह वाच्छित फल प्राप्त करता है[490]।

स्कन्द तीर्थ

स्कन्द तीर्थ को सभी पापो का नष्ट करने वाला कहा गया है । वहॉ स्नान करने पर जन्मकाल से किया हुआ घोर पाप दूर हो जाता है [491]। वहॉ गधर्वो सहित देवगण श्रेष्ठ शिवपुत्र महात्मा स्कन्ददेव की उपासना करते है [492]।

अंमिरस तीर्थ

अमिरस तीर्थ मे जाकर स्नान करने मात्र से ही मनुष्य सहस्रो गायो के दान करने का फल प्राप्त कर रुद्र लोक को जाता है। वहॉ ब्रह्मा के पुत्र अगिस ने तपस्या द्वारा वृषध्वज की आराधना कर उत्तम योग प्राप्त किया था [493]।

कुशतीर्थ

अगिरस तीर्थ के बाद समस्त पापो को नष्ट करने वाले कुश तीर्थ मे जाने का विधान है वहॉ स्नान करने से अश्वमेध यज्ञ के फल की प्राप्ति होती है [494]।

कोटितीर्थ

यह कोटि तीर्थ सभी पापो को नष्ट करने वाला कहा गया है । यहॉ स्नान करने से मनुष्य को निश्चय ही राज्य प्राप्त होता है। तत्पश्चात् चन्द्रभागा की यात्रा कर उसमे स्नान करना चाहिए, ऐसा करने से मनुष्य सोमलोक मे आदर प्राप्त करता है [495]।

सगमेश्वर तीर्थ

नर्मदा के दक्षिण कूल पर उत्तम सगमेश्वर तीर्थ है । वहॉ स्नान करने से मनुष्य को समस्त यज्ञो के करने का फल प्राप्त होता है [496]।

सुन्दर तीर्थ

नर्मदा के उत्तरी तट पर तीर्थ का उल्लेख किया गया है । वहॉ पर आदित्य का सुन्दर मन्दिर है। वहॉ स्नानोपरान्त यथा शक्ति दान करने से मनुष्य उस तीर्थ के प्रभाव से अक्षय फल प्राप्त करता है जो व्यक्ति दरिद्र व्याधिग्रस्त तथा पाप कर्म करने वाले होते है । वे समस्त पापो से मुक्त होकर सूर्यलोक को जाते है [497]।

मार्गेश्वर तीर्थ

मार्गेश्वर तीर्थ मे जाकर स्नान करने से मनुष्य को स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है [498]।

अहल्या तीर्थ

अहल्या तीर्थ मे भी स्नान मात्र से मनुष्य अक्षयकाल तक अप्सराओ के साथ आनन्द प्राप्त करता है। ऐसा उल्लेख मिलता है कि चैत्रमास की शुक्लपक्ष की त्रयोदशी को कामदेव के दिन जो अहल्या की पूजा करता है वह मनुष्य जहॉ कही उत्पन्न होने पर भी अत्यन्त प्रिय एव वरणीय हो जाता है और वह व्यक्ति दूसरे कामदेव की भॉति स्त्री का प्रिय होता है [499]।

अयोध्या

अयोध्या को इन्द्र का प्रसिद्ध तीर्थ कहा जाता है वहॉ जाकर स्नान मात्र से मनुष्य सहस्त्र गायो का फल प्राप्त करता है [500]। सप्तपुरियो मे प्रथम पुरी अयोध्या है। मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान् श्रीराम के भी पूर्ववर्ती सूर्यवशी राजाओ की यह राजधानी रही है। इक्ष्वाकु से श्रीराम तक सभी चन्द्रवर्ती नरेशो ने अयोध्या के सिहासन भूषित किया है।

सोमतीर्थ

अयोध्या के बाद सोम तीर्थ मे जाकर स्नान करना चाहिए ऐसा करने से मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है। चन्द्रग्रहण के समय वहॉ स्नान करने से पाप का क्षय हो जाता

है। सोमतीर्थ तीनो मे प्रसिद्ध एव महापाल दायक कहा गया है। जो उस तीर्थ मे चान्द्रायण व्रत करता है वह समस्त पापो से शुद्ध होकर सोमलोक को जाता है। इतना ही नही कहा जाता है। जो मनुष्य सोम तीर्थ मे अग्नि प्रवेश, जल प्रवेश अथवा अनशन करता है, वह मनुष्य पुन उत्पन्न नही होता [501]।

स्तम्भ तीर्थ

विष्णु तीर्थ मे योधनीपुर नामक विष्णु के श्रेष्ठ स्थान का उल्लेख मिलता है वहॉ पर वासुदेव ने करोडो असुरो से युद्ध किया था । वहॉ पर तीर्थ की उत्पत्ति हुई वहॉ स्नान करने से मनुष्य विष्णु लोक के तुल्य फल प्राप्त करता है।

विष्णु तीर्थ

विष्णु तीर्थ मे योधनीपुर नामक विष्णु का श्रेष्ठ स्थान है । वहॉ वासदेव ने करोडो असुरो से युद्ध किया था और वहॉ तीर्थ की उत्पत्ति हुई । वहॉ स्नान करने से मनुष्य विष्णु के तुल्य सम्पन्न हो जाता है । वहॉ पर अहोरात्र आवास करने से (मनुष्य) ब्रह्म हत्या को दूर कर देता है [502]।

सुन्दर तीर्थ

नर्मदा के दक्षिण तट पर सुन्दर तीर्थ है । वह स्थान कामतीर्थ नाम से प्रसिद्ध है । वहॉ कामदेव ने शकर की अर्चना की थी । वहॉ पर स्नानोपरान्त उपवास करने वाला मनुष्य कामदेव के रूप से रूद्रलोक मे आदर प्राप्त करता है [503]।

ब्रह्मतीर्थ

सुन्दर तीर्थ से ब्रह्मतीर्थ मे जाना चाहिए । ब्रह्मतीथ्र को उमाहक नाम से भी जाना जाता है। वहॉ पितरो को तर्पण करना चाहिए। यौर्गमासी एव अवावस्या को यथा विधि श्राद्ध करना चाहिए, ऐसा उल्लेख मिलता है कि वहॉ पर जल के भीतर हाथी के आकार की शिला है जिस पर बैशाख मास मे पौर्णमासी को सावधान होकर पिण्डदान करना चाहिए । स्नानोपरान्त दम्भ एव मात्सर्य से रहित होकर पिण्डदान करने वाले मनुष्य के पितृगण तब तक तृप्त रहते है जब तक पृथ्वी रहती है [504]।

सिदेश्वर तीर्थ

ब्रह्मातीर्थ से सिदेश्वर तीर्थ जाकर स्नान मात्र करने से मनुष्य को गाणपत्य पद की प्राप्ति होती है। वहॉ से जनार्दन लिग स्थित समान पर जाकर स्नान मात्र करने से विष्णुलोक नही प्राप्ति होती है। ऐसा कहा जाता है कि वहॉ नारायण ने मुनियो को परमपद स्वरुप उस लिग के रूप से अपने स्वरूप का दर्शन कराया था[505]।

अकोल नामक तीर्थ

अकोल नामक इस तीर्थ मे किया गया स्नान, दान, ब्राह्मण को दिया गया भोजन एव पिण्डदान मरणोपरान्त अनन्तपात्र प्रदान करने वाला होता है । जो व्यक्ति यहॉ पर 'त्रियम्ब' मन्त्र द्वारा जल से चरु पकाकर तथा अकोल के मूल मे यथाविधि पिण्डदान करने से उसके द्वारा तारे गये पितृगण चन्द्रमा और तारो के रहने तक तृप्त रहते है [506]।

तापेश्वर तीर्थ

इस तीर्थ मे जाकर स्नान करने से तपस्या के फल की प्राप्ति होती है[507] ।

शुक्ल तीर्थ

इस तीर्थ के सम्बन्ध मे यह कहा जाता है कि नर्मदा मे इसके समान कोई तीर्थ नही है। शुक्ल तीर्थ दर्शन एव र्स्पश करने तथा स्नान, दान, तप, जप, होम, एव उपवास करने से महान फल प्राप्त होता है। समस्त पापो को नष्ट करने वाला एव गन्धर्व से सेवित प्रसिद्ध शुक्ल तीर्थ का क्षेत्रफल एक योजन का कहा गया है । ऐसा कहा जाता है कि इस तीर्थ मे स्थित वृक्ष के पत्ते को भी देखने से ब्रह्म हत्या दूर हो जाती है । वहॉ भर्ग शकर सदा देवी के साथ रहते है बैशाख के महीने मे कृष्ण पक्ष की चर्तुदशी को देव हर कैलाश से निकल कर वहॉ स्थित होते है। वहॉ देव, दानव गन्धर्व सिद्व, विद्याधर, अप्सराये एव श्रेष्ठ नाग रहते है । इस तीर्थ के सम्बन्ध मे ऐसा कहा जाता है कि जैसे वस्त्र, रजक, के द्वारा जल से शुक्ल हो जाता है उसी प्रकार शुक्ल तीर्थ मे आजन्य का किया हुआ पाप नष्ट हो जाता है । शुक्ल तीर्थ मे किया गया स्नान, दान, तप, एव श्राद्ध अनन्त फलदायक होता है । शुक्ल तीर्थ से श्रेष्ठ तीर्थ न हुआ है न होगा । मनुष्य पूर्व मे पाप कर्म करने से शुक्ल तीर्थ मे उपहोगत्र

उपवास कर उस पाप से मुक्त हो जाता है। कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की चर्तुदशी के उपवास के वाह ध्हत द्वारा परमेश्वर का अभिषेक करने का विधान बतलाया गया है, जो व्यक्ति इस क्रिया को करता है वह इक्कीस पीढियो के सहित ईश्वर के लोक से च्युत नही होते । तपस्या, ब्रह्मचर्य दान से मनुष्य को वह गति प्राप्त नही होती जो शुक्ल तीर्थ मे प्राप्त होती है। अयन, चर्तुदशी सक्रान्ति मे स्नानोपरान्त उपवास करते हुए विनितात्मा पुरूष को यथा शक्ति दान देने का विधान किया गया है । ऐसा करने से विष्णु एव शकर प्रसन्न होते है । इस तीर्थ के प्रभाव से सभी कुछ अक्षय हो जाता है । इस तीर्थ के सम्बन्ध मे एक अन्य उल्लेख इस प्रकार मिलता है कि किसी अनाथ, दुर्गत या सनाथ भी ब्राह्मण का इस तीर्थ मे जो विवाह करा देता है उसके शरीर मे तथा उसकी सन्तानो के शरीर मे जितने रोम होते है उतने सहस्त्र वर्षो तक वह रुद्रलोक मे आदर प्राप्त करता है [508]।

यमतीर्थ

शुक्ल तीर्थ के बाद यमतीर्थ मे जाना चाहिए। यहॉ पर माघ महीने के कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को स्नानोपरान्त रात्रि मे भोजन करने वाले व्यक्ति को गर्भ से उत्पन्न होने के सकट का साक्षात्कार नही करना चाहिए [509]।

एरण्डी तीर्थ

यम तीर्थ के पश्चात् एरण्डी तीर्थ मे जाने का विधान है । सगम मे मनुष्य को उपवास करते हुए स्नान कर एक ब्राह्मण को भोजन कराने से कोटि ब्रह्मण भोजन का फल प्राप्त होता है । एरण्डी सगम मे स्नानोपरान्त भक्तिभाव पूर्वक मस्तक पर मिट्टी रख नर्मदा के जल से मिश्रित उसके जल मे स्नान करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है [510]। एरण्डी एव नर्मदा का सगम लोक मे प्रसिद्ध है । वहॉ समस्त पापो को नष्ट करने वाले पक्ति तीर्थ है । यहॉ उपवास एव नित्य व्रतानुष्ठान करते हुए वहॉ स्नान करने से मनुष्य ब्रह्म हत्या से मुक्त हो जाता है । तदुपरान्त नर्मदा एव सागर के सगम की यात्रा करनी चाहिए जहॉ जमदग्नि नाम से विख्यात जर्नादन को सिद्धि प्राप्त हुई थी । नर्मदा एव सागर के सगम मे स्नान करने वाले को अश्वमेध यज्ञ का तीन गुना फल प्राप्ति का उल्लेख किया गया है[511]।

कार्णाटिकेश्वर तीर्थ

एरण्डी से कार्णाटिकेश्वर तीर्थ की यात्रा करनी चाहिए । वहॉ पुण्य दिन मे गगा अवश्य अवतरित होती है। वहॉ स्नान, जलपान एव दान देने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त होकर ब्रह्मलोक मे आदर प्राप्त करता है [512]।

नन्दितीर्थ

कार्णटिकेश्वर से नन्दि तीर्थ मे जाकर स्नान करना चाहिए क्योकि वहॉ स्नान करने वाले व्यक्ति के ऊपर नन्दीश प्रसन्न होते है एव उसे सोमलोक मे प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।[513]

अनरक नामक तीर्थ

नन्दि तीर्थ से अनरक नामक तीर्थ मे जाने का विधान है । उस तीर्थ मे स्नान करने वाले मनुष्य को नरक का दर्शन नही करना पडता । उस तीर्थ मे अपनी अस्थियो का विर्सजन करना चाहिए । ऐसा करने से मनुष्य को लोक मे धन और भोग की समाग्री से सम्पन्न तथा स्वरूप बना होता है ।

कपिलातीर्थ

अनरक नामक तीर्थ से कापिलातीर्थ मे जाकर उसमे स्नान करने से मनुष्य को सहस्त्र गायो के दान का फल प्राप्त होता है। विशेषरूप से ज्येष्ठ मास की चतुर्दशी को उपवास कर भक्तिपूर्वक घृत का दीपक जलाकर घृत द्वारा रूद्र का अभिषेक करना चाहिए और घण्टा तथा आभरण से युक्त कपिला गौ का दान करने से मनुष्य समस्त आभरणो से युक्त समस्त देवो से नमस्कृत तथा शिव तुल्य बलवान होकर सदा शिव के सदृश क्रीडा करता है [514]।

गणेश्वर तीर्थ

कपिला तीर्थ के बाद गणेश्वर तीर्थ की यात्रा करना चाहिए। श्रावण मास के आने पर कृष्ण पक्ष की चर्तुदशी को वहॉ स्नान मात्र करने से ही मनुष्य रुद्रलोक मे आदर प्राप्त करता है। वहॉ पितरो का तर्पण करने से मनुष्य तीनो ऋणो से मुक्त हो जाता है [515]।

गगावादन नामक तीर्थ

यह तीर्थ गगेश्वर के समीप है । वहॉ सकाम–निष्काम भाव से स्नान करने वाला मनुष्य नि सन्देह जन्म भर किये पापो से मुक्त हो जाता है [516]।

दशाश्वामेधिक तीर्थ

यह तीर्थ तीनो लोको मे प्रसिद्ध है । वहॉ भद्रमास की अमावस्या को एक रात्रि उपवास तथा शिव का रुद्राभिषेक करना चाहिए। ऐसा करने वाला मनुष्य स्वर्ण निर्मित विमान द्वारा रुद्रपुर जाकर रुद्रदेव के साथ आनन्द प्राप्त करता है। उस तीथ्र मे सर्वत्र सभी दिन स्नान करना चाहिए, एव पितरो का तर्पण करने से अश्वमेध फल की प्राप्ति होती है । [517]

भृगुतीर्थ

दशाश्वमेधिक तीर्थ के पश्चात् भृगुतीर्थ की यात्रा करने का विधान है । ऐसा कहा जाता है । कि प्राचीन काल मे श्रृगदेव ने यहॉ रूद्र की आराधना की थी । उन देव का दर्शन करने से तत्काल पाप से मुक्ति हो जाती है । यह अत्यन्त विपुल क्षेत्र समस्त पापो को नष्ट कर देता हे। इतना ही नही वहॉ स्नान करने से स्वर्ग की प्राप्ति होती है एव वहॉ मरने पर मोक्ष हो जाता है। वहॉ जूते का जोडा एव स्वर्ण सहित अन्न का दान करना चाहिए । वहॉ यथाशक्ति भोजन का दान करने से अक्षय फल की प्राप्ति होती है [518]।

गौतमेश्वर तीर्थ

भृगुतीर्थ से गौतमेश्वर तीर्थ जाना चाहिए जहॉ शिव की आराधना कर गौतम ने सिद्धि प्राप्त की थी। वहॉ स्नान कर उपवास करने वाला व्यक्ति स्वर्ण निर्मित विमान से ब्रह्मलोक मे जाकर आदर प्राप्त करता है [519]।

वृषोत्सर्ग तीर्थ

गौतमेश्वर तीर्थ के बाद वृषोत्सर्ग तीर्थ जाने से मोक्ष की प्राप्ति होती है [520]।

धौतपाप नामक तीर्थ

वृषोत्सर्ग तीर्थ से धौतपाप की यात्रा करनी चाहिए। वृष ने वहाॅ पाप को धोया था। नर्मदा मे स्थित यह तीर्थ मे स्नान को नष्ट करता है उस तीर्थ मे स्नान करने से मनुष्य ब्रह्म हत्या से मुकत हो जाता है। इस तीर्थ मे जो प्राणो का त्याग करता है। वह चतुर्भुज, त्रिनेत्र एव शिव के तुल्य बलवान हो जाता है और इस प्रकार दस सहस्त्र कल्प पर्यनत शिवलोक मे निवास करता है। बहुत समय के बाद वह पृथ्वी पर सम्राट के रूप मे उत्पन्न होता है [521]।

हसतीर्थ

धौतपाप से हसतीर्थ मे जाकर वहाॅ स्नान करने वाला ब्रह्मलोक मे आदर प्राप्त करता है[522]।

वराहतीर्थ

हसतीर्थ से विष्णुलोक की गति प्रदान करने वाले वराह तीर्थ मे जाना चाहिए । जहाॅ जर्नादन ने सिद्धि प्राप्त की थी [523]।

चन्द्रतीर्थ

चन्द्रतीर्थ मे विशेष रुप से पूर्णमासी को स्नान करने का विधान है, वहाॅ स्नान करने से ही मनुष्य चन्द्रलोक मे आदर प्राप्त करता है [524]।

कन्यातीर्थ

चन्द्रतीर्थ के बाद शुक्ल पक्ष की तृतीया को कन्यातीर्थ की यात्रा करनी चाहिए एव वहाॅ स्नान करना चाहिए । वहाॅ स्नान करने से मनुष्य पृथ्वी मे एकमात्र राजा हो जाता है[525]।

देवतीर्थ

कन्यातीर्थ के बाद देवतीर्थ मे जाकर स्नान करने से मनुष्य देवो के साथ आनन्द प्राप्त करता है [526]।

शिखि तीर्थ

देवतीर्थ के शिखितीर्थ जाकर वहॉ जो दान दिया जाता है वह सब करोड गुना हो जाता है [527]।

पैतामह तीर्थ

शिखि ती्र्थ से पैतामह तीर्थ मे जाकर वहॉ श्राद्ध कस विधान है । वह सब अक्षय हो जाता है [528]।

सावित्री तीर्थ

जो मनुष्य सावित्री तीर्थ मे जाकर अपने प्राणो का परित्याग करता है वह समस्त पापो को नष्टकर ब्रह्मलोक मे आदर प्राप्त करता है [529]।

मनोहर नामक तीर्थ

परम सुन्दर मनोहर नामक तीर्थ मे स्नान करने से मनुष्य देवताओ के साथ आनन्द करता है [530]।

मानस तीर्थ

मानस तीर्थ मे स्नान करने से मनुष्य रुद्रलोक मे आदर प्राप्त करता है [531]।

स्वर्ग बिन्दु नामक तीर्थ

मनव तीर्थ से स्वर्ग बिन्दु नामक तीर्थ की यात्रा करनी चाहिए । वहॉ स्नान करने से मनुष्य की दुगर्ति नही होती [532]।

अप्सरेश नामक तीर्थ

स्वर्ग बिन्दु नामक तीर्थ के बाद इस तीर्थ मे आकर स्नान करने वाला मनुष्य स्वर्ग मे निवास करते हुए अप्सराओ के साथ आनन्द प्राप्त करता है [533]।

भारभूति नामक तीर्थ

भारभूति नामक तीर्थ मे जाकर वहाँ उपवास पूर्वक ईश की आराधना करने से मनुष्य रुद्रलोक मे पूजित होता है। इस तीर्थ मे मरने वाले को गाणपत्य की प्राप्ति होती है[534]। कार्तिक मास ये वहाँ पार्वती देवेश की अर्चना करने का विधान कहा गया है। विद्वानो के अनुसार इसका फल अश्वमेघ यज्ञ की अपेक्षा दस गुना अधिक कहा गया है। जो व्यक्ति वह कुन्द एव इन्दु के समान श्वेत वर्णवाला वृषभ दान करता है वह वृषयुक्त यान द्वारा रुद्रलोक को जाता है । इस तीर्थ मे जाकर जो व्यक्ति प्राण त्याग करता है वह समस्त पापो से मुक्त होकर रुद्रलोक मे जाता है। परन्तु जो जल मे प्राण त्याग करते है। वे हसयुक्त यान द्वारा स्वर्गलोक को जाते है [535]।

पिगलेश्वर तीर्थ

पिगलेश्वर तीर्थ की यात्रा कर वहाँ स्थान करने वाला मनुष्य रुद्रलोक मे आदर प्राप्त करता है। वहाँ उपवास कर जो विमलेश्वर का दर्शन करता है वह सात जन्मो मे किय पाप का त्याग कर शिवलोक को जाता है [536]।

आलिका तीर्थ

आलिका तीर्थ की यात्रा कर वहाँ सयम पूर्वक नियमित आहार करने तथा एक रात्रि का उपवास करने से मनुष्य इस तीर्थ के माहात्म्य से ब्रह्म हत्या से मुक्त हो जाता है ।

नैमिश तीर्थ

यह नैमिश तीर्थ महादेव का प्रिय करने वाला एव महापातक का नाशक है । ब्रह्म ने महादेव के दर्शन के अभिलाषी ऋषियो की तपस्थली के रूप मे इसका निर्माण किया था[537]।

जाप्येश्वर नामक तीर्थ

जाप्येश्वर नाम से प्रसिद्ध यह एक श्रेष्ठ तीर्थ कहा गया है। यहाँ श्रेष्ठगण नन्दी ने निरन्तर रुद्र का जप किया था । देवी सहित महादेव ने प्रसन्न होकर उन्हे अपनी समानता एव मृत्यु से सुरक्षित रहने का वर दिया था [538]।

पञ्चानन्द तीर्थ

जाप्येश्वर के निकट पञ्चनन्न नामक समस्त पापो को नष्ट करने वाला एक श्रेष्ठ तीर्थ है। वहॉ पर तीन रात्रि पर्यनत उपवास कर महेश्वर की पूजा करने वाला समस्त पापो से विशुद्ध होकर रुद्रलोक मे प्रतिष्ठित होता है [539]।

महाभैरव नामक तीर्थ

यह अमित तेजस्वी शकर का महाभैरव नामक तीर्थ महापातको को नष्ट करने वाला कहा गया है [540]।

पञ्चतप नामक तीर्थ

यह शिव का पञ्चतप नामक तीर्थ है जहॉ विष्णु ने चक्र के लिए शकर की पूजा की थी। वहॉ किया हुआ पिण्डादिक कर्म मरणोपरान्त अनन्तफल प्रदान करता है। वहॉ नियम पूर्वक प्राण त्याग करने वाला ब्रह्मलोक मे आदर प्राप्त करता है [541]।

कायावरोहण नामक तीर्थ

कायावरोहण नामक यह तीर्थ महादेव का शुभ स्थान कहा गया है । जहॉ मुनियो ने माहेश्वर धर्म प्रवर्तित किया था । यहॉ पर किया हुआ श्राद्ध, दान, तप, होम एव उपवास अक्षय फलदायी होता है । जो मनुष्य यहॉ पर अपने प्राणो का त्याग करता है । उसे रुद्रलोक की प्राप्ति होती है [542]।

कन्या नामक तीर्थ

कन्या नामक यह उत्तम श्रेष्ठ तीर्थ है। यहॉ जाकर जो मनुष्य प्राणो का परित्याग करता है उसे शास्वत लोको की प्राप्ति होती है[543] ।

शुभतीर्थ

जमदग्नि के पुत्र अविलराकर्मा परशुराम का यह शुभ तीर्थ है । इस श्रेष्ठ तीर्थ मे स्नान करने से सहस्त्र गोदान करने का फल कहा गया है [544]।

महाकाल नामक तीर्थ

तीनो लोको मे प्रसिद्ध महाकाल नामक तीर्थ है। वहॉ जाकर प्राणत्याग करने से गाणपत्य पद की प्राप्ति होती है[545]।

नकुलीश्वर नामक तीर्थ

नकुलीश्वर नामक तीर्थ गुह्य तीर्थो मे भी गुह्य है। वहॉ भगवान नकुलीश्वर स्थित है[546]।

गगा द्वार तीर्थ

हिमालय के रमणीक शिखर पर स्थित सुन्दर गगाद्वार तीर्थ है वहॉ पर शिष्यो से आकृत महादेव नित्य पार्वती के साथ रहते है। वहॉ स्नानोपरान्त महादेव वृषध्वज की पूजा करने से मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है एव मरने पर ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति होती है [548]।

भीमेश्वर तीर्थ

भीमेश्वर नाम से प्रसिद्ध यह अत्यन्त पवित्र स्थान है । वहॉ जाने से मनुष्य पाप से मुक्त हो जाता है ।

वितस्ता नामक नदी

यह वितस्ता नामक नदी तीर्थो मे श्रेष्ठ कही गयी है । यह समस्त पापो को हरने वाली पवित्र नदी स्वय पार्वती ही है [548]।

चण्डवेगा नदी

चण्डवेगा नदी का उद्गम स्थान भी पापो का नाश करने वाला है । वहॉ स्नान करने तथा जलपान करने से मनुष्य ब्रह्म हत्या से मुक्त हो जाता है [549]।

श्राद्ध

श्राद्ध का अर्थ एव महत्व

कूर्म पुराण मे उल्लिखित है कि व्यक्ति के दाह सस्कार के उपरान्त देश काल तथा पात्र का विचार करके प्रेत पितरो के निमित्त जो कुछ भी श्रद्धा पूर्वक ब्राह्मणो को दिया जाता है उसे श्राद्ध कहते है [550]। आलोचित पुराण मे यह उल्लेख मिलता है कि प्रत्येक दिन तिथि एव माह मे पितु श्राद्ध के करने से मनुष्यो को यश, कीर्ति, पशु, सुख बल आयु स्वर्ग इत्यादि की प्राप्ति होती है इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को इसे प्रयत्न पूर्वक करना चाहिए। विष्णु पुराण के अनुसार यदि मनुष्य श्रद्धा पूर्वक श्राद्ध कर्म करता है तो इससे ब्रह्मा, इन्द्र, रूद्र एव अन्य देवता पितर तथा ऋषिगण प्रसन्न होते है। यम मे यह भी उल्लेख है कि पितरो की पूजा करने से मनुष्य को आयु, पुत्र यश, स्वर्ग कीर्ति, बल, पुष्टि, लक्ष्मी, पशु धन धान्य की प्राप्ति होती है[551]। इस प्रकार प्रत्येक हिन्दूओ के लिए पितरो का श्राद्ध करना अत्यन्त आवश्यक है।

श्राद्ध तथा पिण्डदान करने के अधिकारी

कूर्मपुराण मे श्राद्ध तथा पिण्डदान के अधिकारियो के क्रम का उल्लेख इस प्रकार है कि पुत्र को माता एव पिता का पिण्ड दानदि कार्य करना चाहिए। पुत्र के अभाव मे न होने पर पत्नी को पत्नी के अभाव मे सहोदर भाई को पिण्डदानादि कार्य करना चाहिए[552]। विष्णु पुराण[553] के अनुसार श्राद्ध के अधिकारियो का क्रम निम्नाकित है पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र भाई पुत्र, सपिन्ड की सन्तान आदि। स्मृत्यर्थ साय ने इन अधिकारियो का वर्णन इस क्रम मे किया है। पुत्र, पति, स्त्री, तथा सपत्निया इनके अभाव मे भतीजा, भाई, पुत्र वधू, पौत्री, दौहित्र सगोत्र या सपिन्ड, सतीर्थ, मित्र, छात्र, गुरू, पिता अविवाहित लडकी का श्राद्ध कर सकता है। उचित अधिकारी के न होने पर विवाहिता पुत्री के भी श्राद्ध को सम्पन्न कर सकता है। स्मृत्यर्थसार पृष्ठ 94 यदि चन्द्रग्रहण या सूर्य ग्रहण हो तो सन्ध्या और रात्रि मे श्राद्ध किया जा सकता है। देश की विशिष्टता के कारण उन–उन सीनो पर किये गये श्राद्ध कर्म से अनन्त पुण्य की

प्राप्ति होती है[554]। अग्नि पुराण के अनुसार गया मे किसी भी समय श्राद्ध किया जा सकता है। वाराह पुराण मे उल्लिखित है कि अमावस्या, अष्टका तिथि, शुभ दिन, दोनो अयनो (दक्षिणायन एव उत्तरायण) के दिन विद्ववान ब्राह्मण के आने के दिन ग्रहण के अवसर पर श्राद्ध करना उचित है[555]। सभी कर्मो के आरम्भ तथा पुत्र जन्मादि होने पर आभ्युदिक श्राद्ध करना चाहिए। पर्व के दिन पार्वण श्राद्ध का विधान है [556]। मनु ने प्रतिदिन किये जाने वापले नित्य श्राद्ध, काम्य श्राद्ध एकोदिष्टादि नैमित्तिक श्राद्ध, वृद्धि श्राद्ध एव पार्वण श्राद्ध है तीर्थ यात्रा मे छठवॉ श्राद्ध कहा गया है[557]।ब्रह्मा ने शुद्धि के लिए सातवे श्राद्ध का उल्लेख किया है। दैनिक नामक आठवॉ श्राद्ध है जिसके करने से भय (डर) से मुक्ति होती है[558]।

पिण्डदान

प्रेत के निमित्त विधि पूर्वक साय एव प्रात काल प्रति दिन पिण्ड दान करना चाहिए एव चतुर्थ दिन गृह के द्वार पर ब्राह्मणो को भोजन कराना चाहिए। दूसरे दिन सभी बान्धवो सहित सौर कर्म करना इसके पश्चात श्राद्धपूर्व दो से अधिक पूर्वाभिमुख पवित्र ब्राह्मणो को चतुर्थ दिन अस्थि सञ्चय करना चाहिए [559]।

नवश्राद्ध

पॉचवे, नौवे एव ग्यारहवे दिन से अधिक ब्राह्मणो को भोजन कराना ही नवश्राद्ध कहा जाता है। ग्यारहवे, बारहवे दिन अथवा अनिन्दित दिन प्रेत के उद्देश्य से श्राद्ध करना चाहिए। इस श्राद्ध मे एक पवित्र कए अर्ध्य एव एक पिण्ड देना चाहिए [560]।

श्राद्ध

सपिण्डीकरण

मृत्योपरान्त प्रत्येक माह के उसी तिथि पर प्रेत के उद्देश्य से श्राद्ध करना एव वर्ष पूर्ण होने पर सपिण्डीकरण का विधान किया गया है। प्रेत, पितामह, प्रपितामह, एव वृद्ध प्रपितामह के लिए चार अर्ध्यपात्र बनाना चाहिए। तदुपरान्त पितृ पात्रो मे प्रेत पात्र का अर्थ डालना चाहिए इसी प्रकार ये समाना इन दो मन्त्रो का उच्चारण कर पिता महादि के पिण्डो मे प्रेतपिण्ड को मिश्रित करना चाहिए। देवश्राद्ध के बाद सपिण्डीकरण श्राद्ध करना चाहिए।

तत्पश्चात पितरो का आवाहन का प्रेत का आवाहन करना चाहिए। जिन मृतको का सपिण्डीकरण हो चुका है उनको श्राद्ध किया पृथक नही होती। जो (सपिण्डीकृत प्रेत का) पृथक पिण्डदान करता है वह पितृघाती होता है[561]। पिता के मर जाने पर वर्ष पर्यनत पिण्डदान करना चाहिए एव प्रतिदिन प्रेतधर्मानुसार जल युक्त घडे एव अन्न का दान करना बतलाया गया है।

साम्बत्सरिक श्राद्ध

प्रतिसम्बत्सर पार्वन विधान के अनुसार साम्बत्सरिक श्राद्ध करना चाहिए। यह सनातन विधि है[562]।

पितृ तर्पण तिथि एवं माह

कूर्म पुराण मे ऐसा उल्लेख किया गया है कि प्रत्येक पर्व मे नियम पूर्वक सावित्री होम एव शान्ति अष्टकाओ, पितृतर्पण वाले तीन महीने की अष्टमी की तिथियो एव पौष्य माध और फाल्गुन के कृष्ण पक्ष मे नवमी की तिथियो मे नियमपूर्वक पितृ तर्पण करना चाहिए[563]।

श्राद्ध तिथि

अमावस्या तिथि को भोग एवं मोक्ष देने वाला पिण्डान्वाहार्यक नामक श्राद्ध अवश्य करना चाहिए। इस श्राद्ध को अमावस्या तिथि को दोपहर के बाद मे प्रशस्त आभिष द्वारा पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध करना प्रशस्त होता है[564]। श्राद्ध के लिए कृष्ण पक्ष की चर्तुदशी तिथि को छोडकर अन्य तिथियॉ प्रशस्त है। पौष, माध एव फाल्गुन की तीनो कृष्णाष्टमी एव अमावस्या को तथा माधीपूर्णिमा को श्राद्ध के लिए पुण्य तिथियॉ कही गयी है [565]। वर्षा काल मे मधा नक्षत्र युक्त त्रयोदशी एव अनाज के पकने के समय विशेष रूप से श्राद्ध का समय होता है। उपरोक्त सभी श्राद्ध नित्य एव प्रतिदिन किये जा सकते है[566]।

नैमित्तिक श्राद्ध

चन्द्र और सूर्यग्रहण होने एव बान्धवो के मरने पर नैमित्तिक श्राद्ध करना चाहिए। ऐसा न करने पर नारकीय गति की प्राप्ति होती है [567]।

काम्य श्राद्ध

चन्द्र और सूर्यग्रहण के समय काम्य श्राद्ध करना चाहिए। उत्तरायण एव दक्षिणायन होने के समय, विषुव एव व्यतोपात योग मे किया हुआ श्राद्ध अनन्त फल देने वाला होता है सक्रान्ति एव जन्म के दिन किया गया श्राद्ध अक्षय होता है। सभी नक्षत्रो मे विशेष प्रयोजनवश काम्य श्राद्ध करना चाहिए[568]।

नक्षत्रों मे श्राद्ध एव फल

कृत्तिका नक्षत्र मे श्राद्ध करने पर स्वर्ग की प्राप्ति होती है। रोहिणी नक्षत्र मे श्राद्ध करने से सन्तान की प्राप्ति होती है, तथा मृगशिरा मे श्राद्ध के करने से ब्रह्मतेज की प्राप्ति होती है आर्द्रा मे श्राद्ध करने से रौद्र कर्मो की सिद्धि तथा शौर्य की प्राप्ति होती है। पुर्नवसु मे श्राद्ध करने से भूमि की प्राप्ति होती है। पुर्नवसु मे श्राद्ध करने से भूमि की प्राप्ति एव पुष्य नक्षत्र मे श्राद्ध करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। आश्लेषा मे श्राद्ध करने से सभी कामनाओ की पूर्ति होती है तथा मधा नक्षत्र मे श्राद्ध करने से सौभाग्य की प्राप्ति होती है। पूर्वाफाल्गुनी मे श्राद्ध करने से धन की प्राप्ति होती है तथा उत्तर फाल्गुनी मे श्राद्ध करने से पाप का नाश होता है। कूर्मपुराण मे हस्त नक्षत्र मे श्राद्ध करने से अपनी जाति मे श्रेष्ठता की प्राप्ति होती है। चित्रा मे श्राद्ध करने से अनेक पुत्रो की प्राप्ति होती है। स्वाती मे श्राद्ध करने से वाणिज्य मे सिद्धि होती है एव विशाखा नक्षत्र मे श्राद्ध करने से सुवर्ण की प्राप्ति होती है[569]। अनुराधा मे श्राद्ध करने से अनेक मित्रो की प्राप्ति तथा ज्येष्ठा मे श्राद्ध करने से राज्य की प्राप्ति होती है। मूल नक्षत्र मे श्राद्ध करने से कृषि मे तथा पूर्वाषाढा मे श्राद्ध करने से समुद्र से यान की सिद्धि होती है। उत्तराषाढा मे श्राद्ध करने से सभी कामनाओ की पूर्ति होती है तथा श्रवण नक्षत्र मे श्रा० करने से श्रेष्ठता की प्राप्ति होती है। घनिष्ठा मे श्राद्ध करने से कामना की पूर्ति होती है तथा शतभिषा मे श्राद्ध करने से उत्कृष्ट बल की प्राप्ति होती है। पूर्वाभाद्रपद मे श्राद्ध करने से सोना–चॉदी से भिन्न धातुओ की प्राप्ति होती है एव उत्तराभाद्रपद मे श्राद्ध करने से उत्तम गृह की प्राप्ति होती है। रेवती नक्षत्र मे श्राद्ध करने से बहुत सी गायो की प्राप्ति होती है एव अश्विनी नक्षत्र मे श्राद्ध करने से घोडो की प्राप्ति होती है। भरणी नक्षत्र मे श्राद्ध करने आयु की प्राप्ति होती है। और तिथियो दिनो मे श्राद्ध एव फल रविवार को श्राद्ध करने से

आरोग्य की प्राप्ति एव सोमवार को सौभाग्य प्राप्त होता है। मगल को श्राद्ध करने से सर्वत्र विजय की प्राप्ति होती है एव बुध के दिन श्राद्ध करने से सभी कामनाओ की प्राप्ति होती है। बृहस्पतिवार को श्राद्ध करने से अमीष्ट विद्या शुक्रवार को श्राद्ध करने से धन की प्राप्ति तथा शनिवार को श्राद्ध करने से आयु की प्राप्ति होती है। पतिपदा तिथि को श्राद्ध करने से कल्याण कारी पुत्रो की प्राप्ति होती है। द्वितीया को श्राद्ध करने से कन्या की प्राप्ति तथा तृतीया को श्राद्ध करने से बन्दी जनो की प्राप्ति होती है। चतुर्थी को श्राद्ध करने से क्षुद्र पशु की प्राप्ति एव पञ्चमी को श्राद्ध करने से सुन्दर पुत्र की प्राप्ति होती है। षष्ठी को श्राद्ध करने से द्यूत मे विजय की प्राप्ति एव सत्पमी मे श्राद्ध करने से कृषि की प्राप्ति तथा अष्टमी के दिन श्राद्ध करने से सदा वाणिज्य की प्राप्ति होती है। नवमी को श्राद्ध करने से एक खुर वाल पशु की प्राप्ति एव दशमी को श्राद्ध करने से दो खुर वाले बहुत पशुओ का लाभ होता है। एकादशी को श्राद्ध करने से रजत पदार्थ एव ब्रह्मतेज युक्त पुत्रो की प्राप्ति होती है [570]। द्वादशी को श्राद्ध करने पर स्वर्ग, रजत, एव अन्य धातुओ का लाभ होता है। त्रयोदशी को श्राद्ध करने से अपनी जाति मे श्रेष्ठता की प्राप्ति होती है एव चर्तुदशी को श्राद्ध करने से कुप्रजा की प्राप्ति होती है। पूर्णिमा को श्राद्ध करने से सदयो समस्त अभिलाषित पदार्थो की प्राप्ति होती है। अतएव ब्राह्मणो को चर्तुदशी के दिन श्राद्ध नही करना चाहिए। परन्तु शस्त्र से मारे गये मनुष्यो का श्राद्ध चर्तुदशी को करना चाहिए। साथ ही यह भी कहा गया है कि धन एव ब्राह्मण (श्राद्ध कराने वाले) की उपलब्धता पर श्राद्ध कभी भी किया जा सकता है। इसके लिए काल सम्बन्धी नियम नही किया गया है। इस प्रकार द्विजातियो को भोग एव पवर्ग की सिद्धि हेतु श्राद्ध करना चाहिए परन्तु सन्ध्या एव रात्रि मे श्राद्ध नही करना चाहिए[571]।

तीर्थो मे श्राद्ध

कूर्म पुराण मे तीर्थो मे श्राद्ध किये जाने का उल्लेख मिलता है जिसमे गया को सब तीर्थो मे श्रेष्ठ कहा गया है कि मनुष्य किसी प्रसगवश भी गया जाकर श्राद्ध करे तो वह पितरो को तो तार ही देगा एव स्वय भी परम गति प्राप्त करेगा[572]। पितृगण इस गाथा का गान करते है एव विद्वान लोग भी यह कीर्तन कहते है कि गुण एव शील युक्त अनेक पुत्रो

की इच्छा करनी चाहिए। क्योकि उनमे से कोई भी गया जा सकता है। गगा, प्रयाग एव अमरकण्टक मे किया गया श्राद्ध अक्षय फल प्रदान करता है[573]। आलोचित पुराण मे तीर्थो की एक लम्बी सूची है जहॉ पर जाकर श्राद्ध किया जा सकता है जैसे–वाराह पर्वत विशेष रू५ से गगा, शिव के विशिष्ठ स्थान वाराणसी, गङ्गाद्वार, प्रभास, विल्वक तीर्थ, नीलपर्वत, कुरूक्षेत्र, कुब्जाभ्र, भृगुतुङ्ग, महालय, केदार, फलगुतीर्थ, नैमिषाख्य, विशेषत सरस्वती तीर, विशेषत पुष्कर क्षेत्र नर्मदातीर कुशावर्त, श्रीशैल, भद्रकर्णक, वैत्रवती, विपाशा एव विशेषत गोदावरी के तीर्थ पर तथा अन्य तीर्थो पुलिनो एव नदियो के तट पर श्राद्ध करने से पितृगण सन्तुष्ट होते है[574]। पद्म पुराण के अनुसार पुष्कर को सब तीर्थो मे श्रेष्ठ कहा गया है तथा वहॉ दान, हवन श्राद्ध आदि करने से अनन्त फल की प्राप्ति का वर्णन मिलता है[575]। इसी पुराण के अनुसार पुष्कारण्य, नैमिषारण्य तथा धर्मारण्य, मे श्राद्ध करना चाहिए। गया मे पिण्डदान करने का विशेष महत्व है। यहाँ एक भी पिण्ड के दान करने से पितर लोग स्वर्ग मे तृप्त हो जाते है[576]। मनु के अनुसार श्राद्ध का स्थान किसी नदी के किनारे अथवा निर्जन या एकान्त प्रदेश मे हो। यह दक्षिण दिशा की ओर ढालुवा होना चाहिए। इसे गोबर से लीप कर शुद्ध करना चाहिए [577]। याज्ञवल्क्य के अनुसार श्राद्ध का स्थान चारो ओर से घिरा हुआ तथा पवित्र होना चाहिए। याज्ञवल्क्य स्मृति[578] कूर्म पुराण के अनुसार जगल, पर्वत, पुण्य सीान,तीर्थ और मन्दिर आदि सीान श्राद्ध के लिए उपयुक्त है [579]। आलोचित पुराण के अनुसार नदी, तीर्थ अपनी भूमि, पर्वत शिखर एव एकान्त सीान पर श्राद्ध करने से पितृगण सन्तुष्ट होते है[580]। श्राद्ध भूमि दक्षिण दिशा की ओर झुकी होनी चाहिए और उसे गोबर से लीपना चाहिए दक्षिण दिशा की ओर जाकर दक्षिण की ओर झुके हुए कुश, जल को लाना चाहिए और उसे विधाकर श्राद्ध करना चाहिए [581]। दूसरो की भूमि पर पितरो का श्राद्ध नही करना चाहिए। मोहवश यदि कोई व्यक्ति दूसरे की भूमि पर करता है तो उस कर्म को भूमि स्वामी नष्ट कर देता है [582]। श्राद्ध सम्बन्धी भूमि पर सर्वत्र तिल बिखेर कर बकरे बॉधना चाहिए। तिल और बकरा द्वारा असुरोपहत सर्म्पूण श्राद्ध शुद्ध हो जाता है [583]।

पिण्डदान की वस्तु

कूर्म पुराण के अनुसार पितरो के सन्तोष तथा तृप्ति के लिए श्राद्ध के अवसर पर विभिन्न अन्नो, फलो, एव मास द्वारा पिण्ड दान करना चाहिए। जिससे उनकी सन्तुष्टि होती है। व्रीहि, जौ, उडद, जल, मूल, फल, सॉवा यव साग, नीवार, पियन्गु, गोधून, तिल, एव मूँग द्वारा किया हुआ श्राद्ध तिपरो को एक मास तक प्रशन्न करता है [584]। मछली के मास से श्राद्ध करने पर दो महीने तक तृप्त होते है एव हिरन के मास से तीन महीने तक तृप्त होते है तथा मेष के मास से चार माह तक तृप्त होते है एव पक्षियो के मास से पॉच मास तक पित्तगण तृप्त होते है। बकरे के मास छ मास तक एव पृषत नामक हिरन के मास से श्राद्ध करने पर सात महीने तक तृप्त होते है। रूण नामक मृग के मास से आठ महीने तक रूरू नामक मृग के मास से नव महीने तक तृप्त रहते है । सूकर एव महिष (भैसे) के मास से दस महीने तक पितृगण तृप्त होते है। खरगोश एव कछुआ के मास से ग्यारह महीने तक पितृगण तृप्त रहते है गौ के दूध तथा खीर से श्राद्ध करने पर पितृगण एक वर्ष तक तृप्त रहते है। गैडे के मास से श्राद्ध करने से पितृगण बारह वर्ष तक तृप्त रहते है [585]। कालशाक नामक साग, महाशल्क नामक मत्स्य गैडा नामक पशु का रक्तवर्ण का मास शहद एव मुनियो के अन्न श्राद्ध मे प्रदान करने से पितृगण अनन्त काल तक तृप्त रहते है याज्ञवल्क्य के अनुसार पके हुए चावल मे तिल मिलाकर पिण्डदान करना चाहिए। दूध मे चावल को पकाकर पिण्ड दिया जाता है [586]। मरीचि के अनुसार पार्वण श्राद्ध मे हरे ऑवले की आकृति के बराबर पिण्ड चाहिए [587]। मरीचि का उद्वरण। परन्तु एकोदिष्ट श्राद्ध मे इसकी आकृति बेल के फल के समान बडी होनी चाहिए।

श्राद्ध में दान सामग्री

कूर्म पुराण के अनुसार श्राद्ध के समय आम, पानेण अर्थात करमईद, ईख, द्राक्षा, अनार विदारी एव भरण्ड, मधुयुक्त लाजा, गुड युक्त सत्तू, सिघाडा एव कसेरू की दान मे देना चाहिए[588]। द्विज के द्वारा स्वय खरीदा हुआ अथवा दान में प्राप्त एव स्वय मरे हुए पशु का मास विशेष रूप से दान मे श्राद्ध मे देना चाहिए। उसका अक्षप फल कहा गया है[589]। इस प्रकार जो वस्तु पितरो को प्रिय होती है उसी को दान मे दिया जाता है।

श्राद्ध मे पितरो के लिए निषिद्व भोजन

कूर्म पुराण के अनुसार पितरो को श्राद्ध मे निम्नाकित भोज्य पदार्थो को देना निषिद्व माना जाता है। जैसे श्राद्ध मे पिप्पली, क्रमक अर्थात सुपारी, मसूर कूष्माण्ड, लौकी, बैगन तथा रसयुक्त, भूस्तृण कुसुम्भ, पिण्डमूल, तन्दुलीयक, राजभाष एव भैस के दूध, तथा को दो, कोविदार, पालक साग एव मिर्च काली का प्रयत्न पूर्वक त्याग करना चाहिए [590]। पद्म पुराण के अनुसार भी कुछ भोज्य पदार्थो को निषिद्व माना जाता है। जैसे–मसूर शण, निष्पाव, राजभाष, कुल्थक (कुल्थी), बेल, धतूरा, बकरी का दूध, कोदो, दाश्वरता, कैथ इत्यादि [591]।

श्राद्ध मे निमन्त्रित ब्राह्मणों की योग्यता

(पक्ति पावन ब्राह्मण) कूर्मपुराण मे श्राद्ध मे भोजन के लिए निमत्रित ब्राह्मणो की सर्वप्रथम योग्यता की परीक्षा लेनी चाहिए। कि ब्राह्मण हब्य, कब्य करने वाला है या नही क्योकि वह ही तीर्थ एव दान का (अधिकारी) अतिथि कहा गया है [592]। आलोचित पुराण मे अमावस्या तिथि को पितरो का तर्पण करने के उपरान्त पिण्डान्वाहार्यक श्राद्ध करने का विधान है जिसमे निम्नाकित प्रकार के ब्राह्मणो को ही आमन्त्रित करना उपयुक्त बतलाया गया है[593]। सेमपापी, रजोगुणहीन, धर्मज्ञ, शान्तचित, व्रती नियमस्थ एव ऋतुकालाभिगामी, पञ्चाग्निहोमकर्ता, अध्ययन शील चारो वेदो को जानने वाला, बहवृच, त्रिसौपर्ण विशेष रूप से रूद्राध्यायी, अग्निहोत्र परायण, विद्वान न्यायवेत्ता मत्र एव ब्राह्मण भाग ज्ञाता, धर्मशास्त्र पढने वाला ऋषियो के व्रत का पालन करने वाला, ऋषिक ब्रह्म विवाह द्वारा विवाहित स्त्री से उत्पन्न सन्तान, गर्भाधानादि सस्कार से विशुद्ध, चान्द्रायण व्रत करने वाला, सत्यवादी, पुराणवेत्ता गुरू देवता, एव अग्नि की पूजा करने वाला तथा ज्ञान परायण, विधि निषेधातीत सर्वथा धीर, ब्रह्मज्ञानी, शिव की पूजा करने वाला, विष्णु का भक्त, नित्य अहिसा का पालन करने वाला दान न लेने वाला, यज्ञकर्ता, दान करने वाले, श्रोत्रिय महापराण, गायत्री मत्र का जप करने वाले, कुलीन, ज्ञानवान, शीलवान, तपस्वी, स्नातक विप्र, माता–पिता के हितैषी, प्रात स्नान करने वाले अध्यात्मवेत्ता, इन्द्रियजयी, मननशील, ज्ञाननिष्ठ, महायोगी, श्रद्धालु समावर्तन स्नान करने वाला, असमान प्रवर, असगोत्र, ये सभी ब्राह्मण पक्तिपावन कहे गये है [594]। सर्व प्रथम तत्व ज्ञानरत सयमी योगी को भोजन कराना चाहिए यदि इनका अभाव हो तो

उपकुर्वाणक (गार्हस्थ्य मे आने का इच्छुक ब्रह्मचारी) इन्द्रिय जपी एव नैष्ठिक ब्राह्म को खिलाना चाहिए। यदि यह भी उपलब्ध न हो तो साधक गृहस्थ को ही भोजन कराना चाहिए। आलोचित पुराण मे ऐसा कहा गया है कि प्रकृति के गुण तत्व को जानने वाला यति जिस व्यक्ति का भोजन करता है उसे भोजन कराने वाले से सहस्र गुना अधिक फल मिलता है। इस प्रकार प्रयत्न पूर्वक श्रेष्ठ योगियो को देव एव पितृकार्य मे भोजन दूसरे ब्राह्मणो को भोजन कराना चाहिए। हब्य–कब्य करने का यह मुख्य कल्प कहा गया है इनकी प्राप्ति न होने पर अगले विकल्प का उल्लेख किया गया है जिसमे नाना, मामा, भॉजा, श्वसुर, गुरू, दौहित्र (नाती) जामाता बन्धु, पुरोहित, एव यजमान को भोजन कराना चाहिए [595]। इसकी सम्पुष्टि अन्य स्मृति धर्मशास्त्रो एव पुराणो से भी होती है। मनुस्मृति [596], आपस्तम्ब गृहसूत्र [597], मत्स्य पुराण [598], पद्म पुराण सृष्टि [599]

श्राद्ध में निमन्त्रित न करने योग्य ब्राह्मण

कूर्म पुराण के अनुसार सभी गुणो से युक्त ब्राह्मणो को ही श्राद्ध मे भोजन के लिए आमन्त्रित करना चाहिए। जिससे श्राद्ध कर्ता को उसका फल प्राप्त हो सके। आलोचित पुराण मे निम्न प्रकार के ब्राह्मणो को श्राद्ध मे भोजन करना निषिद्व किया गया है। विकार युक्त चर्म एव नख वाले, कुष्ठरोगी, श्वेत कुष्ठ वाले, काले दॉतो वाले, नपुसक, चोर, नास्तिक, मद्यप, शूद्रा स्त्री मे आसक्त, पुत्र या मित्र की हत्या करने वाला, घर को जलाने वाला, पति के जीवित रहते अन्य पुरूष से उत्पन्न सन्तान शराब बेचने वाले, ज्येष्ठ भ्राता के अविवाहित रहते विवाह करने वाला, हिसक, छोटे भाई के विवाहित करने वाला, हिसक, छोटे भाई के विवाहित होने के पूर्व अविवाहित रहने वाला, पञ्चमहायज्ञो का अनुष्ठान न करने वाला, पति के मृत्यु होने के उपरान्त अन्य व्यक्ति से विवाह करने वाली स्त्री से उत्पन्न सतान, सूदखोर एव नक्षत्र दर्शक, गाने–बजाने का व्यसनी रोगी काना, हीन एव अधिक अग वाले, ब्रह्मचर्यादि व्रत को भग करने वाले, कन्या को दूषित करने वाले, अपवाद ग्रस्त, मन्दिर की पूजा से जीवको पार्जन करने वाले ब्राह्मण, मित्रद्रोही, चुगलखोर, माता, पिता, गुरू, पत्नी का त्याग करने वाले, शौधरहित, परिवार मे भेद उत्पन्न करने वाले, एव शस्त्रजीवो व्यक्तियो, सन्तानहीन झूठी गवाही देने वाले, समुद्र की यात्रा करने वाले, कृतध्न तथा समझौते को भग करने वाले, देवता

वेद एव द्विज की निन्दा करने वाले आदि व्यक्ति श्राद्ध मे भोजन कराने के लिए अयोग्य होते है। प्रयत्न पूर्वक इनका त्याग करना चाहिए[600]। इसकी सम्पुष्टि पद्म पुराण[601] से भी होती है। आचोचित पुराण के एक अन्य स्थान पर ऐसा उल्लेख मिलता है कि श्राद्ध मे मित्र को नही खिलाना चाहिए। श्राद्ध मे मित्र का सत्कार भले ही करे किन्तु पात्र होने पर भी (श्राद्ध) मे शत्रु सत्कार नही करना चाहिए। क्योकि द्वेषी का खाया हुआ अन्न हवि परलोक मे निष्फल होता है[602]।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

(1) कूर्म पुराण 2 16 39

(2) कूर्म पुराण 2 16 40

(3) कूर्म पुराण 2 16 41-42

(4) कूर्म पुराण 2 19 303

(5) कूर्म पुराण 2 79 32

(6) कूर्म पुराण 2 20 6

(7) कूर्म पुराण 2 20 9-10

(8) कूर्म पुराण 2 20.16

(9) कूर्म पुराण 2 20 29 31

(10) कूर्म पुराण 2 24 6

(11) कूर्म पुराण 2 35 152

(12) कूर्म पुराण 2 38 40

(13) कूर्म पुराण 1 3 19

(14) कूर्म पुराण 1 3 22

(15) कूर्म पुराण 1 34 35-36

(16) कूर्म पुराण 1 2 89

(17) कूर्म पुराण 1 2 95

(18) कूर्म पुराण 1 2 96-97

(19) कूर्म पुराण 2 11 4

(20) कूर्म पुराण 2 11.5

(21) कूर्म पुराण 2 11 6

(22) कूर्म पुराण 2 11 7

(23) कूर्म पुराण 2 2 4

(24) कूर्म पुराण 2 19 12-13

(25) कूर्म पुराण 1 2 83

(26) कूर्म पुराण 2 10 15

(27) कूर्म पुराण 2 12 16

(28) कूर्म पुराण 2 11 11-12

(29) कूर्म पुराण 2 11 13

(30) कूर्म पुराण 2 11 14

(31) कूर्म पुराण 2 11.15

(32) कूर्म पुराण 2 11 16

(33) कूर्म पुराण 2 11 17

(34) कूर्म पुराण 2 11 18

(35) कूर्म पुराण 2 11 19

(36) कूर्म पुराण 2 11 20

(37) कूर्म पुराण 2 11 23

(38) कूर्म पुराण 2 11 23

(39) कूर्म पुराण 2 11 24

(40) कूर्म पुराण 2 11 25

(41) कूर्म पुराण 2 11 26-41

(42) कूर्म पुराण 2 11 30

(43) कूर्म पुराण 2 11 31

(44) कूर्म पुराण 2 11 32

(45) कूर्म पुराण 2 11 33

(46) कूर्म पुराण 2 11 35

(47) कूर्म पुराण 2 11 36

(48) कूर्म पुराण 2 11 37

(49) कूर्म पुराण 2 11 38

(50) कूर्म पुराण 2 11 39

(51) कूर्म पुराण 2 11 40

(52) कूर्म पुराण 2 11.41

(53) कूर्म पुराण 2 11 42

(54) कूर्म पुराण 2 11 43

(55) कूर्म पुराण 2 11 44

(56) कूर्म पुराण 2 11 45

(57) कूर्म पुराण 2 11 46

(58) कूर्म पुराण 2 37 138

(59) कूर्म पुराण 2 37 133

(60) कूर्म पुराण 2 33 146

(61) कूर्म पुराण 2 15 36

(62) कूर्म पुराण 2 11.50-51

(63) कूर्म पुराण 2 11 4.49

(64) कूर्म पुराण 2 15 25

(65) कूर्म पुराण 2.11 24

(66) कूर्म पुराण 2.6.2

(67) कूर्म पुराण 2 4 19

(68) कूर्म पुराण 2 4 20

(69) कूर्म पुराण 2 6 49

(70) कूर्म पुराण 2 5 34

(71) कूर्म पुराण 2 11 309

(72) कूर्म पुराण 2 11 305

(73) कूर्म पुराण 2 11 306

(74) कूर्म पुराण 1 2 88

(75) ऋग्वेद 1 114 10

(76) तैतरीय सहित 4-5

(77) कूर्म पुराण 2 2 91

(78) पदम पराण सृष्टि 5 69 70

(79) कूर्म पुराण 1 14 4

(80) कूर्म पुराण 1 114 5-8

(81) कूर्म पुराण 2 14 34-42

(82) कूर्म पुराण 2 44 32-33 & 37

(83) कूर्म पुराण 2 44 38-39

(84) पदम पुराण 110-368

(85) कूर्म पुराण 2 6 2-4

(86) कूर्म पुराण 2 6 10 37

(87) कूर्म पुराण 2 7 20 16

(88) कूर्म पुराण 2 4 14

(89) कूर्म पुराण 1 25 64

(90) कूर्म पुराण 1 1 85

(91) कूर्म पुराण 141 30

(92) पदम पुराण पाताल 110 299

(93) पदम पुराण पाताल 110 39 41

(94) पदम पुराण पाताल 101 146

(95) कूर्म पुराण 1 25 58

(96) कूर्म पुराण 1 25 102

(97) कूर्म पुराण 1 30 16 18

(98) कूर्म पुराण 1 33 10 12

(99) कूर्म पुराण 1 30.15-18 & 22-23

(100) कूर्म पुराण 3 1 4-9

(101) कूर्म पुराण 2 34.30

(102) कूर्म पुराण 2 34 2

(103) कूर्म पुराण 2 34 3

(104) कूर्म पुराण 2 39 59-60

(105) कूर्म पुराण 2.11 93

(106) कूर्म पुराण 1 40 25

(107) कूर्म पुराण 1.39 44-45

(108) कूर्म पुराण 1.40.116

(109) कूर्म पुराण 1 40 17

(110) कूर्म पुराण 1 10.20

(111) कूर्म पुराण 1 40 24

(112) कूर्म पुराण 2.33 103

(113) कूर्म पुराण 1 47 37

(114) पदम पुराण 80 39

(115) कूर्म पुराण 1 2 88

(116) कूर्म पुराण 1 2 89

(117) कूर्म पुराण 1 2 95-98

(118) पदम पुराण सृष्टि 17 2 33-254

(119) पदम पुराण सृष्टि 2 117

(120) कूर्म पुराण 1 44 1-2

(121) कूर्म पुराण 2 33 254

(122) कूर्म पुराण 1 2 89

(123) कूर्म पुराण 1 2 95-97

(124) कूर्म पुराण 1 9 8-10

(125) कूर्म पुराण 1 47-39-40

(126) कूर्म पुराण 1 47

(127) कूर्म पुराण 2 33 105

(128) कूर्म पुराण 2 33 97

(129) पदम पुराण सृष्टि 80 26 46

(130) डा० एस०एन० राय रि०शो० डे० पु० पृ० 101-105

(131) कूर्म पुराण 2.2 7-9

(132) कूर्म पुराण 2 12 19

(133) कूर्म पुराण 1 2 20

(134) कूर्म पुराण 1 11 333-334

(135) कूर्म पुराण 1 11 1-4

(136) कूर्म पुराण 1 11 5-9

(137) कूर्म पुराण 1 11 10

(138) कूर्म पुराण 1 11 13

(139) कूर्म पुराण 1 11 2-64

(140) कूर्म पुराण 1 11 326

(141) कूर्म पुराण 1 11 21

(142) कूर्म पुराण 1.11 24

(143) कूर्म पुराण 2 11 25

(144) कूर्म पुराण 1 11 26

(145) कूर्म पुराण 1 11 27

(146) कूर्म पुराण 1 11 28

(147) कूर्म पुराण 1 11 31-32

(148) कूर्म पुराण 1 11 45

(149) कूर्म पुराण 1 11 54

(150) कूर्म पुराण 1 11 75-210

(151) कूर्म पुराण 2 33 104

(152) कूर्म पुराण 2 33 102

(153) कूर्म पुराण 2 24 1

(154) कूर्म पुराण 2 24 5

(155) बलदेव उपाध्याय वैदिक साहित्य और सस्कृति पृ० 52

(156) डॉ० काणे हिन्दू धर्मशास्त्र भाग 1 पृ० 677-678

(157) डॉ० काणे हिन्दू धर्मशास्त्र भाग 2 पृ० 1009

(158) कूर्म पुराण 2 24 4

(159) कूर्म पुराण 2 23 10

(160) कूर्म पुराण 2 24 8-9

(161) कूर्म पुराण 2 24 14-15

(162) कूर्म पुराण 2 24 2

(163) कूर्म पुराण 2 24.3

(164) कूर्म पुराण 2 25 16

(165) कूर्म पुराण 1 19 29-31

(166) कूर्म पुराण 1 23 28-31

(167) शतपत तथा तैतरीय ब्राह्मण 3 8 9

(168) डॉ० काणे हिन्दू धर्मशास्त्र भाग 2 2 पृ० 1228-1239

(169) पदम पुराण पाताल 9 2 3

(170) पदम पुराण पाताल 11 44 45

(171) पदम पुराण पाताल 27 48

(172) कूर्म पुराण 2 32 6 27

(173) कूर्म पुराण 1 27 48

(174) कूर्म पुराण 116 46

(175) कूर्म पुराण 2 33 5-3

(176) कूर्म पुराण 2.33 63

(177) कूर्म पुराण 2 33 73

(178) कूर्म पुराण 1 19 49

(179) कूर्म पुराण 2 15 23

(180) कूर्म पुराण 2 19 25

(181) कूर्म पुराण 2 32 42

(182) कूर्म पुराण 2 18 66 70

(183) कूर्म पुराण 2 18 71

(184) कूर्म पुराण 2 18 72

(185) कूर्म पुराण 2 14 50

(186) कूर्म पुराण 2 29 31

(187) कूर्म पुराण 2 29 32-33

(188) कूर्म पुराण 2 32 34-36

(189) कूर्म पुराण 2 32 49-59

(190) कूर्म पुराण 2 33 1

(191) कूर्म पुराण 2 33 8

(192) कूर्म पुराण 2 33 25

(193) कूर्म पुराण 2 33 26

(194) कूर्म पुराण 2 33 27-28

(195) कूर्म पुराण 2 33 31

(196) कूर्म पुराण 2 33 34

(197) कूर्म पुराण 2 33 35

(198) कूर्म पुराण 2 33 56

(199) कूर्म पुराण 2 33 61

(200) कूर्म पुराण 2 33 62

(201) कूर्म पुराण 2 33 88-89

(202) कूर्म पुराण 2 33.93

(203) कूर्म पुराण 2.33 48

(204) कूर्म पुराण 2.33 50

(205) कूर्म पुराण 2 32 59

(206) कूर्म पुराण 2 32 51

(207) कूर्म पुराण 2 33 2-3

(208) कूर्म पुराण 2 33 8

(209) कूर्म पुराण 2 33 10

(210) कूर्म पुराण 2 33 20

(211) कूर्म पुराण 2 33 33

(212) कूर्म पुराण 2 33 34

(213) कूर्म पुराण 2 33 74

(214) कूर्म पुराण 2 33 75

(215) कूर्म पुराण 2 33.85

(216) कूर्म पुराण 2 33 57

(217) कूर्म पुराण 2 33 70

(218) कूर्म पुराण 2 33 37

(219) कूर्म पुराण 2 33 33

(220) कूर्म पुराण 2 29 26

(221) कूर्म पुराण 2 33 36

(222) कूर्म पुराण 2 29 36

(223) कूर्म पुराण 2 33.17-19

(224) कूर्म पुराण 2.33-29-30

(225) कूर्म पुराण 2 33.34

(226) कूर्म पुराण 2 33 45

(227) कूर्म पुराण 2 33 65

(228) कूर्म पुराण 2 33 82

(229) कूर्म पुराण 1 19 69

(230) कूर्म पुराण 2 11 21

(231) कूर्म पुराण 1 27 17

(232) कूर्म पुराण 2 26 2

(233) कूर्म पुराण 2 26 3

(234) कूर्म पुराण 2 26 4

(235) कूर्म पुराण 2 26 5

(236) कूर्म पुराण 2 26 6

(237) कूर्म पुराण 2 26 7

(238) कूर्म पुराण 2 26.8

(239) कूर्म पुराण 2 26 11

(240) कूर्म पुराण 2 2612

(241) कूर्म पुराण 2 26 13

(242) कूर्म पुराण 2 26 14

(243) कूर्म पुराण 2 26 15

(244) कूर्म पुराण 2 26 17

(245) कूर्म पुराण 2.26 18

(246) कूर्म पुराण 2 26 19

(247) कूर्म पुराण 2 26 22

(248) कूर्म पुराण 2.26 23

(249) कूर्म पुराण 2 26 24

(250) कूर्म पुराण 2 26.25-26

(251) कूर्म पुराण 2 26 27-28

(252) कूर्म पुराण 2 26 29

(253) कूर्म पुराण 2 26 30-31

(254) कूर्म पुराण 2 26 32

(255) कूर्म पुराण 2 26 33

(256) कूर्म पुराण 2 26 34

(257) कूर्म पुराण 2 26 35

(258) कूर्म पुराण 2 26 44

(259) कूर्म पुराण 2 26 45

(260) कूर्म पुराण 2 26 46

(261) कूर्म पुराण 2 26 47

(262) कूर्म पुराण 2 26 48

(263) कूर्म पुराण 2 26 50

(264) कूर्म पुराण 2 26 40

(265) कूर्म पुराण 2 26 51

(266) कूर्म पुराण 2 26 52

(267) कूर्म पुराण 2 26 53

(268) कूर्म पुराण 2 26 54

(269) कूर्म पुराण 2 23 75

(270) कूर्म पुराण 2 25 8

(271) कूर्म पुराण 2 25 9

(272) कूर्म पुराण 2 25 9

(273) कूर्म पुराण 1 22 13

(274) कूर्म पुराण 2 26 67

(275) कूर्म पुराण 1.28 40

(276) कूर्म पुराण 2 26 58

(277) कूर्म पुराण 2 26 59

(278) कूर्म पुराण 2 26 60

(279) कूर्म पुराण 2 26 61

(280) कूर्म पुराण 2 16 3

(281) कूर्म पुराण 2 26 70

(282) कूर्म पुराण 2 26 62

(283) कूर्म पुराण 2 26.63

(284) कूर्म पुराण 2 26 64

(285) कूर्म पुराण 2 26 65

(286) कूर्म पुराण 2 26 66

(287) कूर्म पुराण 2 26 68

(288) कूर्म पुराण 2 26 69

(289) कूर्म पुराण 2 26 75

(290) कूर्म पुराण 2 26 70

(291) कूर्म पुराण 2 26 71

(292) कूर्म पुराण 2 26 72

(293) कूर्म पुराण 2 26 73

(294) कूर्म पुराण 2.26 74

(295) कूर्म पुराण 2 26.76

(296) कूर्म पुराण 2 13 16-18

(297) कूर्म पुराण 2 42 22

(298) कूर्म पुराण 2 42 2

(299) कूर्म पुराण 2 42 20

(300) कूर्म पुराण 2 42 19

(301) कूर्म पुराण 2 33 144

(302) कूर्म पुराण 2 37 6

(303) कूर्म पुराण 2 37 7

(304) मत्स्य पुराण 10 6 23

(305) वराह पुराण 159 67

(306) पदम पुराण सृष्टि 20 150, पाताल 89 16 17

(307) ब्रह्म पुराण 25 7 8

(308) कूर्म पुराण 1 37 7

(309) मत्स्य पुराण 110 7

(310) पदम पुराण पाताल 39 16 17

(311) ब्रह्म पुराण 70 16 18

(312) डॉ काणे हिन्दू धर्म भाग– 1 पृ० 4-567

(313) ब्रह्म पुराण 175 31 32

(314) कूर्म पुराण 2 24 22

(315) भूमिखण्ड 59 33

(316) भविष्य पुराण 184 66 67

(317) कूर्म पुराण 1 27 10

(318) वामन पुराण 36 78 79

(319) कूर्म पुराण 1 29 62

(320) कूर्म पुराण 1 29 48

(321) कूर्म पुराण 1 29 49

(322) कूर्म पुराण 1 29 50

(323) कूर्म पुराण 1 29 51

(324) कूर्म पुराण 1 29 52

(325) कूर्म पुराण 1 29 53

(326) कूर्म पुराण 1 29 54

(327) कूर्म पुराण 1 29 56

(328) कूर्म पुराण 1 29 63

(329) कूर्म पुराण 1 29 66

(330) कूर्म पुराण 1 29 70

(331) कूर्म पुराण 1 29 74

(332) कूर्म पुराण 2 29 76

(333) कूर्म पुराण 2 29 75

(334) कूर्म पुराण 1 28 61

(335) कूर्म पुराण 2 28 62

(336) कूर्म पुराण 2 28 25

(337) कूर्म पुराण 2.29 25-26

(338) कूर्म पुराण 2.11 10

(339) कूर्म पुराण 2.11 202

(340) कूर्म पुराण 1.81 123

(341) कूर्म पुराण 2.31 92-105

(342) कूर्म पुराण 1.22 5 43

(343) कूर्म पुराण 2 42 17

(344) कूर्म पुराण 1 34 20

(345) कूर्म पुराण 1 34 21-22

(346) कूर्म पुराण 1 34 23

(347) कूर्म पुराण 1 34 24

(348) कूर्म पुराण 1 34 25

(349) कूर्म पुराण 1 34 26

(350) कूर्म पुराण 1 34 27

(351) कूर्म पुराण 1 34 28

(352) कूर्म पुराण 1 34 29

(353) कूर्म पुराण 1 34 30

(354) कूर्म पुराण 1 34 31-32

(355) कूर्म पुराण 1 34 33

(356) कूर्म पुराण 1 34 34

(357) कूर्म पुराण 1 34 37

(358) कूर्म पुराण 1 34 60

(359) कूर्म पुराण 1 34 41

(360) पदम् पुराण आदि 43 2

(361) कूर्म पुराण 1 1 36

(362) कूर्म पुराण 1 36 2

(363) कूर्म पुराण 1 36 4

(364) कूर्म पुराण 1 36 61

(365) पदम् पुराण आदि 43.24

(366) कूर्म पुराण 12 1 41

(367) कूर्म पुराण 1 35 3

(368) कूर्म पुराण 1 35 5

(369) कूर्म पुराण 1 5 32

(370) कूर्म पुराण 1 35 33

(371) कूर्म पुराण 1 35 34

(372) कूर्म पुराण 1 35 35

(373) कूर्म पुराण 1 35 21-22

(374) कूर्म पुराण 1 35 23

(375) कूर्म पुराण 1 35 24

(376) कूर्म पुराण 1 35 26

(377) कूर्म पुराण 1 35 27

(378) कूर्म पुराण 1 35 28

(379) कूर्म पुराण 1 37 9-10

(380) कूर्म पुराण 1 37 12

(381) कूर्म पुराण 1 37 13

(382) कूर्म पुराण 1 37 8

(383) कूर्म पुराण 1 35 36

(384) कूर्म पुराण 1.35 37

(385) कूर्म पुराण 1 35 30

(386) कूर्म पुराण 1.35 31

(387) कूर्म पुराण 1 35 37

(388) कूर्म पुराण 1.35 38

(389) कूर्म पुराण 1 37 1-2

(390) कूर्म पुराण 1 37 3

(391) कूर्म पुराण 1 3 75

(392) कूर्म पुराण 1 35 18

(393) कूर्म पुराण 1 35 10-20

(394) कूर्म पुराण 1 34 45-46

(395) कूर्म पुराण 1 35 4

(396) कूर्म पुराण 1 35 57

(397) कूर्म पुराण 1 34 42-43

(398) कूर्म पुराण 1 38 44

(399) कूर्म पुराण 1 37 14 15

(400) कूर्म पुराण 1 37 4

(401) कूर्म पुराण 2 34 5

(402) कूर्म पुराण 2.34.6

(403) कूर्म पुराण 2.34.7

(404) कूर्म पुराण 2 34.8

(405) कूर्म पुराण 2.34 9

(406) कूर्म पुराण 2.34.10

(407) कूर्म पुराण 2.34.11

(408) कूर्म पुराण 2 34.12

(409) कूर्म पुराण 2.34.13

(410) पद्म सर्ग 38.17

(411) वायु पुराण 2 34.14

(412) वायु पुराण 2 34 15

(413) कूर्म पुराण 2 34 16-17

(414) कूर्म पुराण 2.34.18-19

(415) कूर्म पुराण 2 34 20

(416) कूर्म पुराण 2 34 23

(417) कूर्म पुराण 2 34 24

(418) कूर्म पुराण 2 34 27

(419) कूर्म पुराण 2 34 28

(420) कूर्म पुराण 2 34 29

(421) कूर्म पुराण 2 34 30

(422) विष्णु पुराण 2 34 33

(423) कूर्म पुराण 2 34.32

(424) कूर्म पुराण 2 34 33

(425) कूर्म पुराण 2.34 34

(426) कूर्म पुराण 2.34 35

(427) कूर्म पुराण 2 34 38

(428) कूर्म पुराण 2.34 38

(429) कूर्म पुराण 2 34 39

(430) कूर्म पुराण 2 34 40

(431) कूर्म पुराण 2 34 41

(432) कूर्म पुराण 2 34 42

(433) कूर्म पुराण 2 34 43

(434) पदम पुराण आदि 11 34 35

(435) महावान्न पर्व 82 83.37

(436) पद्म पुराण आदि महा० तीर्थया० 82

(437) कूर्म पुराण 2.34.44

(438) कूर्म पुराण 2.34 45

(439) कूर्म पुराण 2.35 12, 2.34.1-2

(440) कूर्म पुराण 2.35.9,

(441) कूर्म पुराण 2.35. 10

(442) कूर्म पुराण 2.35.1

(443) कूर्म पुराण 2.36.1

(444) कूर्म पुराण 2.36.2

(445) कूर्म पुराण 2.36.34

(446) कूर्म पुराण 2.36.5

(447) कूर्म पुराण 2.36.6 7

(448) कूर्म पुराण 2.34.9

(449) कूर्म पुराण 2.36.9

(450) कूर्म पुराण 2.36 10

(451) कूर्म पुराण 2.36 12

(452) कूर्म पुराण 2.36.13

(453) कूर्म पुराण 2.36 16-15

(454) कूर्म पुराण 2.36.16

(455) कूर्म पुराण 2.36.18

(456) कूर्म पुराण 2.36.19

(457) कूर्म पुराण 2.36.20

(458) कूर्म पुराण 2 36 22

(459) कूर्म पुराण 2 36 23

(460) कूर्म पुराण 2 36 24

(461) कूर्म पुराण 2 36.27

(462) कूर्म पुराण 2 36 29

(463) कूर्म पुराण 2 36 30

(464) कूर्म पुराण 2 36 31

(465) कूर्म पुराण 2 36 32

(466) कूर्म पुराण 2.36 33

(467) कूर्म पुराण 2 34 34

(468) कूर्म पुराण 2 36 39

(469) कूर्म पुराण 2 39 4

(470) कूर्म पुराण 2 39 5

(471) कूर्म पुराण 2 39 6

(472) कूर्म पुराण 2 39 7

(473) कूर्म पुराण 2 39.8

(474) कूर्म पुराण 2 39 9

(475) कूर्म पुराण 2 39 11

(476) कूर्म पुराण 2 39 12

(477) कूर्म पुराण 2 39 13-14

(478) कूर्म पुराण 2 36 15

(479) कूर्म पुराण 2 39.16

(480) कूर्म पुराण 2 39 17

(481) कूर्म पुराण 2 39 18

(482) कूर्म पुराण 2 39 19

(483) कूर्म पुराण 2 39 19

(484) कूर्म पुराण 2 39 20

(485) कूर्म पुराण 2 39 21

(486) कूर्म पुराण 2 39 22

(487) कूर्म पुराण 2 39 23

(488) कूर्म पुराण 2 39 24

(489) कूर्म पुराण 2 39 25

(490) कूर्म पुराण 2 39 26

(491) कूर्म पुराण 2 39 28

(492) कूर्म पुराण 2 39 29

(493) कूर्म पुराण 2 39 30-31

(494) कूर्म पुराण 2 39 32

(495) कूर्म पुराण 2 39.33-34

(496) कूर्म पुराण 2 39 35

(497) कूर्म पुराण 2 39 36-38

(498) कूर्म पुराण 2 39 39

(499) कूर्म पुराण 2 39 42-44

(500) कूर्म पुराण 2 39 45

(501) कूर्म पुराण 2 39 46-48

(502) कूर्म पुराण 2 39 51-52

(503) कूर्म पुराण 2 39 53-54

(504) कूर्म पुराण 2 39 54-55

(505) कूर्म पुराण 2 39 58-60

(506) कूर्म पुराण 2 39 61-62

(507) कूर्म पुराण 2 39 63

(508) कूर्म पुराण 2 39 64-239-78

(509) कूर्म पुराण 2 39 79

(510) कूर्म पुराण 2 39 80-81

(511) कूर्म पुराण 2 40 29-30

(512) कूर्म पुराण 2 39 82-84

(513) कूर्म पुराण 2 39 85-86

(514) कूर्म पुराण 2 39 87-90

(515) कूर्म पुराण 2 39 94-95

(516) कूर्म पुराण 2 39 96

(517) कूर्म पुराण 2 39 97-100

(518) कूर्म पुराण 2 40 12-13

(519) कूर्म पुराण 2 40 6-7

(520) कूर्म पुराण 2.40 8

(521) कूर्म पुराण 2 40 9-11

(522) कूर्म पुराण 2 40 12

(523) कूर्म पुराण 2 40 13

(524) कूर्म पुराण 2 40 14

(525) कूर्म पुराण 2 40 15

(526) कूर्म पुराण 2 40 16

(527) कूर्म पुराण 2 40 17

(528) कूर्म पुराण 2 40 18

(529) कूर्म पुराण 2 40 19

(530) कूर्म पुराण 2 40 20

(531) कूर्म पुराण 2 40 21

(532) कूर्म पुराण 2 40 22

(534) कूर्म पुराण 2 40 24

(535) कूर्म पुराण 2 40 33-34

(536) कूर्म पुराण 2.40 33-34

(537) कूर्म पुराण 2 41 12

(538) कूर्म पुराण 2 41 16-17

(539) कूर्म पुराण 2 42 1-2

(540) कूर्म पुराण 2 42 3

(541) कूर्म पुराण 2 42-4 61

(542) कूर्म पुराण 2 42 7-8

(543) कूर्म पुराण 2 43 9

(544) कूर्म पुराण 2 42 10

(545) कूर्म पुराण 2 42 11

(546) कूर्म पुराण 2 42 12

(547) कूर्म पुराण 2.42 13-14

(548) कूर्म पुराण 2 42 4

(549) कूर्म पुराण 2 42 16

(550) कूर्म पुराण 2.42 2 23 91

(551) स्मृति च०पृ० 333 मे यम

(552) कूर्म पुराण 2 23 90

(553) विष्णु पुराण 3 13 31-33

(554) कूर्म पुराण 2 20 28

(555) वराह पुराण 13 33 35

(556) कूर्म पुराण 2 20 24,

(557) कूर्म पुराण 2 20 25-26

(558) कूर्म पुराण 2 20 27

(559) कूर्म पुराण 2 23 80-81

(560) कूर्म पुराण 2 23 82-83

(561) कूर्म पुराण 2 23 84-85

(562) कूर्म पुराण 2 23 89

(563) कूर्म पुराण 2 24 5

(564) कूर्म पुराण 2 20 1-2

(565) कूर्म पुराण 2 20 4

(566) कूर्म पुराण 2 20 5

(567) कूर्म पुराण 2 20 6

(568) कूर्म पुराण 2 20 7-8

(569) कूर्म पुराण 2 20 9-12

(570) कूर्म पुराण 2 20.13-20

(571) कूर्म पुराण 2 20 21-23

(572) कूर्म पुराण 2 20.31

(573) कूर्म पुराण 2 20 29-30

(574) कूर्म पुराण 2 20 32-33

(575) पदम् पुराण सृष्टि 11 1 19

(576) पदम् पुराण सृष्टि 11 73, 74-78

(577) मनु स्मृति 3 206 07

(578) याज्ञवल्क्य स्मृति 1 227

(579) कूर्म पुराण 2 22 32-

(580) कूर्म पुराण 2 22 15

(581) कूर्म पुराण 2 22 13-14

(582) कूर्म पुराण 2 22 16

(583) कूर्म पुराण 2 22 18

(584) कूर्म पुराण 2 20 37

(585) कूर्म पुराण 2 20 40-43

(586) कूर्म पुराण 2 20 44

(587) अपरार्क पृ० 507 मरीचि का उद्वरण

(588) कूर्म पुराण 2 20 38-39

(589) कूर्म पुराण 2 20 45

(590) कूर्म पुराण 2 20 46-48

(591) पदम् पुराण स्मृति 6 66.67

(592) कूर्म पुराण 2 21 2

(593) कूर्म पुराण 2 21 1

(594) कूर्म पुराण 2 21 3-16

(595) कूर्म पुराण 2 21 17-22

(596) मनुस्मृति 3 138-39

(597) आपस्तम्ब गृहय सूत्र 8 21 1 2

(598) मत्स्य पुराण 16 11 12

(599) पदम् सृष्टि 6 79 83

(600) कूर्म पुराण 2 20 37-48

(601) पदम पुराण सृष्टि 9 84

(602) कूर्म पुराण 2 21 23-24

सप्तम अध्याय

उपसंहार

उपसंहार

कूर्मपुराण भारतीय सामाजिक, भौगोलिक, धार्मिक एव वशानुचरितो को विस्तृत रुप से प्रतिपादित करता है। तथा पुराण वाड्मय एव कूर्मपुराण की तिथि के सम्बन्ध को निश्चित तिथि नियत करना तथा इसकी रचना को किसी निश्चित स्थान से जोडना बहुत ही कठिन कार्य है। यही कारण है कि इस पुराण की न तो कोई निश्चित तिथि प्रतिपादित की जा सकती है और न ही कोई रचना स्थल, इस पुराण मे प्रयाग और वाराणसी का विशेष महत्व बतलाया गया है जिससे ऐसा प्रतीत होता कि इस पुराण की रचना प्रयाग या वाराणसी मे हुई है । इस पुराण मे प्रदत्त अनेक सूचनाएँ भारतीय इतिहास एव सस्कृति के स्वरूप निर्माण मे विशेष सहायक प्रतीत होती है। इस पुराण के साक्ष्यो को ग्रहण करते समय उनकी सम्पुष्टि अन्य पौराणिक साक्ष्यो से करना उचित प्रतीत होता है। ताकि उनकी प्रामाणिकता पर कोई सन्देह न रह जाय। कूर्मपुराण का वर्तमान स्वरूप इस बात को स्पष्ट करता है कि भारतीय वाड्मय परम्परा मे पुराण साहित्य की सकलन परम्परा एक कालिक न होकर अनेक कालिक रही है तथा पुराविदो ने पुराण की सरचना मे भारतीय जीवन के विविध पक्षो को आलोकित करने का प्रयास किया है।

कूर्मपुराण मे उल्लिखित सामाजिक व्यवस्था वैदिक मान्यता का स्मरण कराती हैं। समाज मे चार्तुवर्ण धारणा व्याप्त थी । ब्राह्मण का समाज मे सर्वोपरि स्थान था। क्षत्रियो को भी ब्राह्मणो की ही तरह सम्मानजनक स्थान प्राप्त था, परन्तु उनका स्थान ब्राह्मणो के बाद था। अन्य वर्णो को भी समाज मे उचित स्थान प्राप्त था। कूर्म पुराण मे तो इस बात का उल्लेख किया गया है कि शूद्र भी यदि अपनी दशवीं अवस्था मे पहुँच जाय तो उसे भी प्रणाम करना चाहिए।

कूर्मपुराण मे सृष्टि एव वशानुचरित का भी पर्याप्त उल्लेख किया गया है। सृष्टि मे ब्रह्मा, विष्णु, और महेश त्रिदेवो मे एकरूपता दिखलाई पड़ती है। ये सर्वोच्च देवता की तीन

मूर्तियॉ भी कहीं गयी हैं। रुद्रो की उत्पत्ति, देवी उत्पत्ति एव उनके सहस्त्र नामो का उल्लेख मिलता है। इस पुराण मे विभिन्न राजाओ, असुरो, नागो इत्यादि की उत्पति का उल्लेख किया गया है।

कूर्मपुराण मे भौगोलिक विवरणो का भी उल्लेख किया गया जिनके द्वारा हमे देश की सरचना एव वहॉ पर स्थित, द्वीपो, पर्वतो एव नदियो इत्यादि के सम्बन्ध मे आवश्यक जानकारी प्राप्त होती है।

कूर्म पुराण मे धार्मिक जीवन का विशेष महत्व बतलाया गया है। इसमे दान, धर्म, तीर्थ एव श्राद्व की महत्ता प्रतिपादित की गयी है। दान के सम्बन्ध मे कहा जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी सम्पत्ति का विभाजन दान द्वारा करना चाहिए। देवी—देवताओ की पूजा व्रत उपवास द्वारा ईश्वर के सायुज्य की प्राप्ति विषयक उल्लेख किये गये है। देवताओ मे शिव की प्राधनता को विशेष रूप से स्वीकारा गया है, वैसे तो ये त्रिदेव कहे गये है। तीर्थो का उल्लेख काफी विस्तृत रूप मे किया गया है परन्तु वाराणसी, प्रयाग, गया की विशेष महत्व है साथ ही अन्य तीर्थो की महत्ता का उल्लेख भी किया गया है। इस पुराण मे श्राद्ध कर्म को विशेष महत्व दिया गया है इसके सम्बन्ध मे यह कहा जाता है कि व्यक्ति को प्रत्येक शुभ कर्मो मे पितृ एव श्राद्धादिक कार्य को करना चाहिए। इस सम्बन्ध मे ऐसा उल्लिखित है कि पितरो की पूजा करने से मनुष्य को आयु, पुत्र, यश, स्वर्ग कीर्ति बल पुष्टि लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

सहायक ग्रंन्थ-सूची एव ग्रन्थकार सूची

मूलभूत प्राचीन भारतीय ग्रन्थ

ग्रन्थ-नाम	**लेखक, प्रकाशक**
अग्नि पुराण	पचानन तर्क रत्न द्वारा सम्पादित तथा बगवासी प्रेस कलकत्ता द्वारा प्रकाशित ।
	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा सम्पादित, हिन्दी अनुवाद साहित, शक 1907 सन् 1986।
अथर्ववेद पुराण	आर० रॉथ तथा डब्लू० डी० ह्विटनी द्वारा सपादित बर्लिन, 1924 ।
अमरकोश	पी० झलकीकर द्वारा सम्पादित, बम्बई, 1907 ।
अष्टध्यायी	पाणिनीकृत, सम्पादित निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे 1955 ।
आपस्तम्ब धर्मसूत्र	हलस्यनाथ शास्त्री द्वारा सपादित एव प्रकाशित कुभकोणम्, 1895 ।
आश्वलायन गृहयसूत्र	म०म० गणपति शास्त्री द्वारा संपादित, त्रिवेन्द्रम 1923।
ऐतरेय ब्राह्मण	हरिनाराण आप्टे द्वारा सपादित एव प्रकाशित बम्बई, 1922 ।
कात्यायन श्रौत सूत्र	सम्पादित विद्याधर शर्मा, बनारस, 1933- 7।
कादम्बरी	मथुरानाथ शास्त्री द्वारा सम्पादित, निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, 1948।
कुमार सभव	भारद्वाज गगाधर शास्त्री द्वारा सम्पादित, बनारस।
कूर्म पुराण	सर्वभारतीय काशिराजन्यास दुर्ग रामनगर,

वाराणसी 1972

कूर्म पुराण — पचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित तथा वगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि० स० 1332 ।

कौटिल्य अर्थशास्त्र — आर० शामाशास्त्री द्वारा सम्पादित, मैसूर 1924।

गरूड पुराण — क्षेमराज श्रीकृष्ण दास द्वारा प्रकाशित, बम्बई, 1906 ।

गोपथ ब्राह्मण — क्लकत्ता, 1872 ।

गोभिल गृहयसूत्र — अनूदित, एच० ओल्डनबर्ग, सेक्रेड बुक ऑफ द ईस्ट, भाग -3 ।

गौतम धर्मसूत्र — हरिनारायण आप्टे द्वारा सम्पादित, पूना, 1910 ।

छान्दयोग्य उपनिषद — हरिनारायण आप्टे द्वारा सम्पादित, आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना, 1913 ।

जातक — बी० फासबल द्वारा सम्पादित, लदन, 1877-79 ।

जैमिनीय ब्राह्मण — लोकेश चन्द्र, 1950 इन्टरनेशनल एकेडेमी ऑफ इण्डियन कल्चर, नागपुर

जैमिनी सूत्र — जैमिनी, 1993 ।

तन्त्र वार्तिक — कुमारिलकृत, आनन्दश्रम ।

तैत्तिरीय आरण्यक — सायण–भाष्य सहित, हरिनारायण आप्टे द्वारा प्रकाशित, पूना, 1898।

तैत्तिरीय उपनिषद — यमुना शंकर पाचोली (टीका), नवल किशोर प्रेस, लखनऊ 1925।

तैत्तिरीय ब्राह्मण — सायण–भाष्य आनन्दाश्रम, सम्पादित, वेदान्त बगीश, कलकत्ता, 1979-74।

तैत्तिरीय सहिता — कलकत्ता, 1954।

देवी भागवत — कमल कृष्ण स्मृति भूषण द्वारा सम्पादित

बिबलोथिका इण्डिका, कलकत्ता, 1903।

नारद स्मृति — यौली द्वारा सम्पादित, कलकत्ता, 1885।

निरुक्त — यास्क कृत, अनूदित, लक्ष्मण स्वरूप, 1962।

पद्मपुराण — हरिनारायण आप्टे द्वारा प्रकाशित, पूना, 1893।

पराशर स्मृति — मध्वाचार्य भाष्य सहित, बॉम्बे सस्कृत सीरीज, बम्बई, 1893-1911।

बृहत्सहिता — श्री अच्युतानन्द झा द्वारा अनुवादित, चौखम्भा विद्या भवन, चौक, वाराणसी, 1977।

बृहदारण्यक उपनिषद — गीता प्रेस, गोरखपुर

शंकराचार्य- भाष्य तथा आनन्दगिरि की टीका के साथ, हरिनारायण आप्टे द्वारा प्रकाशित, आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना 1914।

ब्रह्मपुराण — क्षेमराज श्रीकृष्ण दास द्वारा प्रकाशित, बम्बई, 1906।

ब्रह्मवैवर्त पुराण — क्षेमराज श्रीकृष्ण दास द्वारा प्रकाशित, बम्बई, 1906।

ब्रह्माण्ड पुराण — क्षेमराज श्रीकृष्ण दास द्वारा प्रकाशित, बम्बई, 1906।

बौधायन धर्मसूत्र — श्री निवासचार्य द्वारा सम्पादित, मैसूर, 1907।

स० आर० शास्त्री, मैसूर 1920।

भविष्य पुराण — हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा सपादित, हिन्दी अनुवाद सहित ।

भागवत पुराण — क्षेमराज श्रीकृष्ण दास द्वारा प्रकाशित, वेकेटेश्वर प्रेस बम्बई, 1987।

पचानन तर्करत्न द्वारा सपादित तथा वंगवासी प्रेस

द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि० स० 1315

भारद्वाज गृहयसूत्र — सम्पाछित हेनरि जे० डब्लू० सोलमन्स, लीडेन 1913।

मत्स्य पुराण — हरिनारायण आप्टे द्वारा प्रकाशित, पूना, 1907।

मनुस्मृति — कुल्लूक भट्ट– भाष्य सहित, पचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित तथा बगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, वि० स० 1320।

मेघातिथि– भाष्य–सहित, गगानाथ झा द्वारा सम्पादित, एशियाटिक सोसाएटी ऑफ बगाल द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता 1932।

महाभारत — नीलकण्ठ–भाष्य सहित, पचानन तर्करत्न द्वारा सपादित तथा बगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, शकाब्द 1826-1830

हिन्दी अनुवाद सहित, गीता प्रेस, गोरखपुर

मार्कण्डेय पुराण — क्षेमराज श्रीकृष्णदास द्वारा प्रकाशित, बम्बई

मोर सस्करण, कलकत्ता

प० बद्रीनाथ शुक्ल, एक अध्ययन, चौखम्बा, काशी, 1960।

यजुर्वेद — यजुर्वेद भाष्य सग्रह, 1960, दयानन्द सरस्वती ।

याज्ञवल्क्य स्मृति — वसुदेव लक्ष्मण शास्त्री द्वारा सम्पादित, बम्बई, 1926।

रघुवश शकर पण्डिल द्वारा सम्पादित गर्वनमेण्ट सेन्ट्रल बुक डिपो द्वारा प्रकाशित, 1897 ।

रघुवश — कालिदास, शकर पडित द्वारा सम्पादित, गवर्नमेन्ट सेण्ट्रल बुक डिपो द्वारा प्रकाशित, 1817,

	सम्पाद्वित एस० जी० पडित, बाम्बे, 1901।
रामायण	टी० आर० कृष्णाचार्य द्वारा सम्पादित, निर्णय सागर प्रेस द्वारा प्रकाशित, बम्बई 1905, ।
व्यास स्मृति	ऊनविशति सहितान्तर्गत
वराह पुराण	सम्पादित प० एच० शास्त्री, कलकत्ता, 1893।
वशिष्ट धर्मसूत्र	चैखम्बा, सस्कृत सीरीज, वाराणसी ।
वामन पुराण	पचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित तथा वगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि० स० 1314
	काशीराज सस्करण, वाराणसी, 1968
वायु पुराण	हरिनारायण आप्टे द्वारा प्रकाशित, पूना, 1905
विष्णु धर्मसूत्र	पचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित तथा वगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि० स० 1316
विष्णु धर्मोन्तर पुराण	क्षेमराज श्रीकृष्ण दास द्वारा प्रकाशित, वेकेटेश्वर प्रेस, बम्बई
विष्णु पुराण	हिन्दी अनुवाद, गीताप्रेस, गोरखपुर
	पचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित तथा वगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित कलकत्ता, वि० स० 1331
विष्णु स्मृति	कृष्णभाचार्य वी० पण्डित, 1964
	ए० वेबर द्वारा सम्पादित, 1924
	वेकेटेश्वर प्रेस, बम्बई
शतपथ ब्राह्मण	ए० वेबर द्वारा सम्पादित, 1924
	वेकेटेश्वर प्रेस, बम्बई
शाखायन गृहयसूत्र	बनारस सस्कृत सीरीज, वाराणसी
शिव पुराण	बगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि०स० 1314

श्रीमदभागवत	गीता प्रेस, गोरखपुर वि० स० 2019
षड्विशब्राह्मण	सायण भाष्य सहित, गीता प्रेस, गोरखपुर
स्कन्द पुराण	बगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि०स०, 1318
स्मृति चन्द्रिका	श्रीनिवासाचार्य द्वारा सपादित, मैसूर, 1914-21
सूत सहिता	सायण– टीका सहित, आनन्दाश्रम
हरिवश	नीलकण्ठ भाष्य के साथ, पचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित, बगवासी प्रेस द्वारा प्रकाशित, कलकत्ता, वि०स० 1312

आधुनिक शोध-ग्रन्थ

लेखक	ग्रन्थ-नाम
अग्रवाल, वासुदेव शरण	मत्स्य पुराण ए स्टडी, वाराणसी, 1963
	पाणिनी कालीन भारतवर्ष, द्वितीय सस्करण, वाराणसी, 1967
अय्यगार, एम०एस०	श्रीभाष्य तात्पर्य सार
अल्टेकर, ए०एस०	राष्ट्रकूट एण्ड देअर टाइम्स, पूना, 1934
	द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोती लाल बनारसी दास, बनारस, 1956
अली, एस०एम०	दि ज्योग्राफी ऑफ दि पुराणाज, नई दिल्ली, 1966
आयगर, के०वी० रगास्वामी	आस्पेक्ट्स ऑफ दि पॉलिटिकल एण्ड सोशल सिस्टम ऑफ मनु
उपाध्याय, बलदेव	वैष्णव सम्प्रदायो का साहित्य और सिद्धान्त, चौखम्बा, वाराणसी
	पुराण विमर्श वाराणसी, 1965
उपाध्याय, राम जी	भारत की सस्कृति साधना
ओम प्रकाश	पॉलिटिकल आइडियाज इन द पुराणाज, 197 पचनद प्रकाशन, इलाहाबाद
काणे, पी० वी०	धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम– पचम भाग, हिन्दी समिति, लखनऊ ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीटयूट, पूना
केन्नेडी, वी०	रिसर्चेज टु द नेचर एण्ड ऐफिनिटी ऑफ एन्शिएण्ट हिन्दू माइथॉलोजी
गोण्ड, जे०	ऐस्पेक्ट्स ऑफ अर्ली विष्णुइज्म

गोपाल, लल्लनजी	पुराण विषयानुक्रमणी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
	द ऐकोनोमिक लाइफ ऑफ नार्दन इण्डिया (700-1200 ई०) प्रथम सस्करण, दिल्ली, 1965
गोविन्दाचार्य	द लाइफ ऑफ रामानुज
गुप्ता, आनन्द स्वरूप	पुराणम, रामनगर फोर्ट, वाराणसी
घाटे, वी०एस०	लेक्चर्स ऑन ऋग्वेद
घुर्ये, जी०एस०	कास्ट एण्ड क्लास इन इण्डिया, बॉम्बे, 1961
चतुर्वेदी, परशुराम	उत्तरी भारत की सत परम्परा द्वितीय सस्करण, स० 2021, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
जायसवाल, के०पी०	मनु एव याज्ञवल्क्य, कलकत्ता
जिलिन	जर्नल ऑफ द बॉम्बे ब्राच ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाएटी
जैकोबी	जैन सूत्राज
डेविड्स रजि	द डायलॉग ऑफ द बुद्ध, भाग–1
दयानन्द सरस्वती	सत्यार्थ प्रकाश, वि० सम्वत् 2001
दूबे, हरिनारायण	पुराण समीक्षा, आई०आई०डी०आर० प्रकाशन, इलाहाबाद, 1984
प्रभु, पी०एच०	हिन्दू सोशल ऑर्गनाइजेशन, बम्बई, 1954
पाटिल, डी०आर०	कल्चरल हिस्ट्र फाम द वायु पुराण, दिल्ली, 1963 (पुनर्मुद्रण) प्रथम सस्करण, पूना, 1946
पाठक, सर्वानन्द	विष्णु पुराण का भारत
पाण्डेय, एल०पी०	सनवरशिप इन एन्शिएण्ट इण्डिया, मोतीलाल बनारसी, दिल्ली, १९७१
पाण्डेय, राजबली	हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास
	हिन्दू सस्कार, चौखम्बा सस्कृत सीरीज, वाराणसी

पुराण विषयानुक्रमणी, हिन्दी विश्वविद्यालय, काशी

पार्जीटर, एफ०ई० — द पुराण टेक्ट्स ऑफ डायनेस्टीज ऑफ द कलि एज, आक्सफोर्ड, 1913 ई०

एन्शिएण्ट इण्डियन हिस्टॉरिकल ट्रेडिशन, आक्सफोर्ड, लन्दन, 1922

पुसाल्कर, ए०डी० — कल्याण हिन्दू सस्कृति, अक–1 वर्ष 24, जिल्द स०–1, 1950 ई०

पौडवाल, आर० के० — ऐडमिनिस्ट्रेटिव रिपोर्ट ऑफ द आर्क्योलॉजी डिपार्टमेण्ट (11 9)

बनर्जी, जी०डी० — द हिन्द लॉ ऑफ मैरिज एण्ड स्त्री धन

बनर्जी, जे०एन० — द डेवलपमेण्ट ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी, कलकत्ता, 1956

जर्नल ऑफ इण्डियन सोसायटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट, भाग–19

मिथ्स एक्सप्लेनिग सम एलियन ऑफ द नार्थ इण्डियन सन आइकन्स

इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली, भाग–28

बार्गीज, जे० — ए०एस० आई० डब्ल्यू० सी०, आर्किटेक्चरल एण्टीक्वीटी ऑफ नार्थ गुजरात

बार्थ — दि रेलिजन्स ऑफ इण्डिया

बाशम, ए०एल० — बण्डर दैट बाज इण्डिया, लन्दन, 1954

बील,ए० — बुद्धिस्ट रिकार्ड ऑफ वेस्टर्न कट्रीज, भाग–2

भट्टसाली, ए०के० — आइकनोग्राफी बुद्धिस्ट एण्ड ब्रह्मनिकल स्कल्पचर इन द ढाका म्यूजियम, ढाका, 1929

भण्डारकर, आर०जी० — वैष्णव, शैव तथा अन्य धार्मिक मत, 1967

क्लेक्टेडवर्क्स, पूना

वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड माइनर रेलिजस सिस्टम्स, बनारस, 1965

मजूमदार, आर०सी० — द एज ऑफ इम्पीरियल यूनिटी, बॉम्ब, 1951

मित्र, डी० — फॉरेन एलीमेण्ट्स इन इण्डियन पापुलेशन

मिराशी, वी० वी० — आइडेण्टीफिकेशन ऑफ कालप्रिय

स्टडीज इन एण्डोलॉजी, भाग–1

थ्री एन्शिएण्ट फेमस टेम्पल्स ऑफ द सन 'पुराणम' भाग–8 स० 1

मिश्र, इन्दुमती — प्रतिमा विज्ञान, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, द्वितीय सस्करण, 1987

मीज, ए०एच० — धर्म एण्ड सोसायटी, लदन, 1935

मैकडॉनल, ए०ए० — वैदिक माइथॉलोजी, वाराणसी, 1963

मैकडॉनल एव कीथ — वैदिक इण्डेक्स

मैक्रेन्डिल, जे० डब्ल्यू० — एन्शिएण्ट इण्डिया ऐज डिस्क्राइब्ड बाई टॉलमी

मोतीचन्द्र — प्राचीन भारतीय वेशभूषा, भारतीय भण्डार, प्रयाग, स० 2007

राधाकृष्णन — धर्म और समाज, 1960

राय, एस०एन० — अर्ली, पौराणिक एकाउण्ट ऑफ सन एण्ड सोलर कल्द युनिवर्सिटी ऑफ इलाहाबाद, स्टडीज, 1963

पौराणिक धर्म एव समाज, पञ्चानद पब्लिकेशन, इलाहाबाद, 1968

राय, यू०एन० — हमारे पुराने नगर, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1969

राय चौधरी, एच०सी० — पॉलिटिकल हिस्ट्र ऑफ एन्शिएण्ट इण्डिया, कलकत्ता, 1953

राव, टी०ए० गोपीनाथ — एलीमेण्ट्स ऑफ हिन्दू आइकोग्री (दो भागो मे), मद्रास, 1914-1916

ला, नरेन्द्र नाथ — स्टडीज इन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर

लाहा, विमल चरण — दि रिवर्स ऑफ इण्डिया

हिस्टॉरिकल ज्योग्राफी एन्शिएण्ट इण्डिया, पेरिस

लेगी — रिकार्ड्स ऑफ बुद्धिस्ट किंगडम्स

वारेन, डब्ल्यू०एफ० — शाक द्वीप इन दि मिथिकल वर्ल्ड, व्यू ऑफ इण्डिया, जे० ए० ओ० एस० 1920

विन्टरनिट्स — ए हिस्ट्र ऑफ इण्डियन लिटरेचर, कलकत्ता, 1950

विल्सन, एच०एच० — इण्ट्रोडक्शन टु द इग्लिश ट्रान्सलेशन ऑफ द विष्णु पुराण

वेणुगोपालाचार्य, एस० — वैष्णव भक्ति, मण्ड्या, प्र०स०–1981

वेदालंकार, हरिदत्त — हिन्दू विवाह का संक्षिप्त इतिहास

वेस्टरमार्क — ए शार्ट हिस्ट्री ऑफ मैरिज (लदन, 1926)

शर्मा, आर०एस० — शुद्राज इन एन्शिएण्ट इण्डिया, दिल्ली, 1958, द्वितीय सशोधित सस्करण, 1980

लाइट ऑन अर्ली इण्डियन सोसायटी एण्ड एकोनामी, बम्बई, 1966

पूर्वमध्य काल में सामाजिक परिवर्तन, दिल्ली, 1969

शिवदत्त, ज्ञानी — वेदकालीन समाज, प्र०स० वाराणसी, चौखम्बा विधा भवन, 1967

शिवराम मूर्ति, सी० — इण्डियन स्कल्पचर, नई दिल्ली, 1961

श्रीनिवासाचारी, पी०एन० — समकालीन भारतीय तत्व विचार, मैसूर विश्वविधालय

श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र — सनवरशिप इन एन्शिएण्ट इण्डिया

स्टेटनक्रान, एच०व्रान० — इण्डिशसोनन प्रीस्टेर साम्ब एण्ड देई शाक द्वीपीय

ब्राह्मण, वेसबेडिन, 1968

स्टर्लिंग, ए० — ऐन एकाउण्ट स्टेटिस्टिकल एण्ड हिस्टोरिकल ऑफ उडीसा प्रापर, कोणार्क, 1825

स्रकार, डी०सी० — स्टीडीज इन द ज्योग्राफी ऑफ एन्शिएण्ट एण्ड मिडिवल इण्डिया, दिल्ली, 1966

कॉस्मोग्राफी एण्ड ज्यॉग्राफी इन अर्ली इण्डियन लिटरेचर

स्टडीज इन इण्डियन कॉएन्ज

साकलिया, एच०डी० — आर्क्योलॉजी ऑफ गुजरात, बॉम्बे, 1941

सेनगुप्ता, एन०सी० — इवोल्युशन ऑफ एन्शिएण्ट इण्डियन लॉ, कलकत्ता, लदन, 1955

हण्टर, डब्ल्यू० डब्ल्यू० — ए हिस्ट्री ऑफ उडीसा–1, कलकत्ता, 1956

हाजरा, आर०सी० — स्टडीज इन द पुराणिक रिकार्ड्स ऑन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, द्वितीय सस्करण, दिल्ली, 1975

स्टडीज इन द उपपुराणाज ढाका, 1940

हाप्किन्स, इ० डब्ल्यू० — द ग्रेट एपिक ऑफ इण्डिया, कलकत्ता, 1978

ग्रैवेल — दि सोल ऑफ इण्डिया

शोध पत्रिकाएँ

जर्नल ऑफ गगानाथ झा इन्स्टीट्यूट, इलाहाबाद।

इण्डियन आर्क्योलाजी ए रिव्यू, दिल्ली।

एन्शिएण्ट इडिया, बुलेटिन ऑफ आर्क्योलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, दिल्ली।

विश्वभारती क्वार्टर्ली।

इण्डियन हिस्ट्री क्वार्टर्ली।

'पुराणम' सर्वभारतीय काशिराजन्यास, दुर्ग, रामनगर, वाराणसी।

जर्नल ऑफ इलाहाबाद युनिवर्सिटी, स्टडीज, इलाहाबाद।

जर्नल ऑफ ओरिएण्टल रिसर्च सोसायटी, अमेरिका।

डा० मिराशी, फेलिसिटेशन, वाल्यूम, नागपुर, 1965 ई०।

जर्नल ऑफ द एशियाटिक सोसाएटी ऑफ बगाल।

जर्नल ऑफ इण्डियन हिस्ट्री।

एनल्स ऑफ भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट

जर्नल ऑफ एशियाटिक सोसायटी।

इण्डियन ऐण्टीक्वेरी।